एक इन्सान की मौत
एक इन्सान का जन्म



राजकमल प्रकाशन

संस्करण प्रथम १९६१
प्रकाशक : नवरत्न प्रकाशन साले की होली बीकानेर।
मुद्रक हरि हर प्रेस, चावड़ी बाजार, दिल्ली।
मूल्य ५ रुपये।

EK INSAN KI MAUT EK INSAN KA JANM (Stories)
Rs. 5.00 np CHANDRA"

आजकल' के भूतपूर्व व 'सारिका'
के वर्तमान सम्पादक श्री चन्द्रगुप्त
विद्यालंकार जी को सादर

हमारे अन्य प्रकाशित
चन्द्र जी के उपन्यास

(१) यामिनी
(२) एक कमरे की कहानी

प्रकाशकीय

नवरत्न प्रकाशन का आधार एक दिन अचानक ही राजस्थान के यशस्वी साहित्यकार श्री यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' के कथन पर बन गया। श्री चन्द्र ने हिन्दी में बहु साहित्य का सृजन करके राजस्थान का नाम बढ़ाया है और उनकी तेलगु, गुजराती मराठी सिन्धी तथा उर्दू में अनुवादित प्रकाशित कृतियों ने राष्ट्रभाषा का मस्तक गौरवान्वित किया है।

हमारी ओर से उनकी अधिक से अधिक पुस्तकें प्रकाशित करने की योजना रहेगी और अन्य प्रकाशकों से छपी उनकी पुस्तकें भी आप यहाँ से सहजता से प्राप्त कर सकेंगे।

इस प्रकाशन के अवसर पर हम चन्द्र जी के बीकानेरवासी आत्मीयजनों एवं चित्रकार मामी (दिल्ली) कांति (बीकानेर) के भी आभारी हैं। कांति जी ने आवरणों के मूलाधार रचे और मामी जी ने उनमें झिलमिलाते टोन देकर रंग भरे।

एक बार मैं अपने व्यक्तिगत रूप से उन तमाम राजस्थान वासी तथा प्रवासी लोगों को धन्यवाद देती हूँ जिन्होंने चन्द्र जी की पुस्तकें अधिक खरीदकर मुझे बल दिया।

शान्तिदेवी 'भट्टाचार्य'
प्रबन्धिका

अनुक्रम

मैं इतना ही कहूँगा

प्रस्तुत कहानी संग्रह मेरा चौथा कहानी संग्रह है। इसमें मेरी सभी विधाओं की लिखी कहानियाँ संग्रहीत हैं। मैं नयी-पुरानी कहानी की विवेचना में न उलझ कर यह कहना चाहूँगा कि मैं लेखन का उद्देश्य केवल कोरा मनोविश्लेषण एवं क्षण की अनुभूति को नहीं मानता। लेखक की सार्थकता तभी सिद्ध होती है जब वह किसी उद्देश्य विशेष से लिखा जाय।

इसके प्रकाशन पर मैं नवरत्न प्रकाशन के सहयोगियों का अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने मेरे विचारों को मूर्त दिया। आपकी सम्मति की प्रतीक्षा रहेगी।

साले की होली }
बीकानेर }

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

अनुक्रम

मैं इतना ही कहूँगा

प्रस्तुत कहानी संग्रह मेरा चौथा कहानी संग्रह है। इसमें मेरी सभी विचारों की लिखी कहानियाँ संग्रहीत हैं। मैं नयी-पुरानी कहानी की विवेचना में न उलझ कर यह कहना चाहूँगा कि मैं लेखन का उद्देश्य केवल कोरा मनोविश्लेषण एवं दर्द की अनुभूति को नहीं मानता। लेखन की सार्थकता तभी सिद्ध होती है जब वह किसी उद्देश्य विशेष से लिखा जाय।

इसके प्रकाशन पर मैं नवरत्न प्रकाशन के सहयोगियों का अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने मेरे विचारों को मूर्त दिया। आपकी सम्मति की प्रतीक्षा रहेगी।

नाथे की होली }
बीकानेर

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

अगर तुम्हारा स्तर नहीं है जो जीवन का है, अगर तुम्हारी कल्पना ऐसे नमूनों की रचना नहीं कर सकती जो जीवन में मौजूद न रहते हुए भी उसे सुधारने के लिए आवश्यक है, तब तुम्हारा कृतित्व किस मर्ज की दवा है और तुम्हारे धंधे की क्या सार्थकता है ?

—गोर्की

(एक पाठक से)

कथा-परिकथा

क्या कहूँ सम्बोधन? एक अपरिचिता को सम्बोधन की कल्पी से नहीं किया जा सकता है लेकिन तीन पत्रों को भेज कर मैं कुछ-कुछ ऐसा समझने लगा हूँ कि तुम मुझ और मेरी हरकतों से नाराज नहीं हो। तुम्हें मेरी बातों का समर्थन है।

जब से तुम इस मकान में आई हो मैं निरन्तर इस खिड़की की राह तुम्हारे सीधे सौन्दर्य के माधुर्य को दृष्टि द्वारा रसास्वादन करता रहा हूँ और मुझे लगता है कि वर्षों की प्रतीक्षा के बाद मैं जिस "मोनम" की खोज करता रहा हूँ वह स्वयं ही मेरे पास आ गई है। इस कल्पना-मात्र से कि तुम मेरे पास हो मेरे अन्तस की समस्त रागिनी अपने समस्वर में गा उठती है—तुम्हीं मेरी कविता की नवीन प्रेरणा हो मेरी आराध्य और पथ की पाथेय हो।" तुम्हें एक बार फिर याद दिला रहा हूँ कि मैंने तुम्हें तीन पत्र दिए हैं। तुमने वे तीनों पत्र पाकर किसी तरह की अपने और मेरे पर बातों से खिन्न नहीं की किसी तरह का विरोध-प्रतिरोध भी नहीं किया तब मैंने समझा कि तुम भी मुझे उतना ही चाहती हो जितना मैं तुम्हें चाहता हूँ क्योंकि तुम्हारा मौन ही मेरे प्यार की स्वीकृति है।

तुम्हारा नाम क्या है मैं नहीं जानता। किन्तु मेरा ऐसा विश्वास है, मेरी कल्पना का कहना है कि तुम्हारे माता-पिता ने तुम्हारा नाम 'पुष्पा' से कम क्या रखा होगा ? तुम्हें पाकर हर युवक अपने को धन्य समझेगा ? तुम मुझे अपनी ओर से स्वीकृत लिख दो। मैं समाज और संसार से टक्कर लेकर भी तुम्हें प्राप्त करूँगा।

एक बात और पूछना चाहता हूँ—तुम मुझे सदा खामोश और दुखी दुखी नजर से क्यों देखती हो ? तुम्हारे रसीले अधरों पर सूखी मुस्कान क्यों रहती है ? कभी-कभी मैं इन सब बातों को लेकर बड़ा परेशान हो जाता हूँ। तुम्हारे पास आने तक की सोच लेता हूँ लेकिन अपरिचित पड़ोसी समझकर मेरा साहस टूट जाता है। फिर तुम मौन बने हो। किसी से बोलते तक भी नहीं हो। तुम्हारे अरमानों का मौन मुझमें भय पैदा कर रहा है लेकिन इस पत्र का उत्तर नहीं आया तो याद रखना मैं जहर खाकर आत्म-हत्या कर लूँगा। सोच लूँगा कि मैं किसी के लायक नहीं हूँ। मैं अभागा हूँ। मैं तुम्हारे पत्र का पूरे चौबीस घंटे इन्तजार करूँगा। इस पर भी उत्तर नहीं आया और तुमने कोई गड़बड़ी की तो मेरी लाश तुम्हारी इस खिड़की के नीचे मिलेगी मेरी मौत का सारा पाप सारी जिम्मेदारी तुम्हारी होगी। बस

तुम्हारे पत्र का प्यासा
—नरोत्तम वर्मा 'कवि कमल'

कवि कमल को इस प्रतापना न जमाने से भरे पत्र के उत्तर की आशा नहीं थी। वह सुबह-सुबह ही अपने बरामदे में एक कापी और पेन्सिल लेकर बैठ गया। कभी आकाश की ओर देखता कभी जमीन की ओर और कभी बरामदे की निर्जीव दीवारों की ओर। कभी-कभी कुछ लिखने का उपक्रम भी करता मानो अपनी प्रेयसी की प्रतीक्षा में वह कोई प्रतीक्षा गीत लिख रहा हो।

जैसे ही सात बजे वैसे ही उसकी नई पड़ोसिन उसके सम्मुख उदास आकर बैठ गई। आज उसने उसकी ओर देखा भी नहीं। कवि महाराज

का दिल धक से रह गया। उसने सोचा कि आज उसने अनजान उसके पत्रों को अपने बाप को बता दिया है। इस विचारमात्र से उसके ललाट पर पसीना छूट गया। वह उद्विग्न हो गया। उसने झट से नीचे आँगन में आकर देखा—उसका बाप बहियों में उलझा हुआ था। वह चुपचाप आकर बैठ गया। उसने सोचा कि अगर वह उसके पिता को कह भी देगी तो उसका क्या अहित होगा? वह अपने पिता को साफ-साफ कह देगा कि वह उससे विवाह करेगा ही उसके बिना नहीं रह सकता अगर उसकी शादी नहीं हुई तो वह सचमुच आत्म हत्या कर लेगा। उसके चेहरे पर फिल्मी प्रेमी की तरह कृत्रिम दृढ़ता आई और वह धकधकर गुलाब को देखने लगा। वह अत्यन्त भावावेश और उत्तेजना में था।

तभी एक कागज गोलाकार में आकर उसके बरामदे में पड़ा। उस ने लपक कर उसे उठाया। मन की बाछें खिल गईं। शरीर में जान आ गई। उसने पढ़ा—

कमलजी,

मैं आपका नाम जानती हूँ। कैसे जानती हूँ यह नहीं बता पाऊँगी। मैं आपकी धमकी से डर गई हूँ मुझे लगा कि आप सच मुच आत्म-हत्या कर लेंगे और आपकी लाश मेरी खिड़की के नीचे पड़ी मिलेगी इस कुकल्पना मात्र से मेरा खून बरफ की तरह जमने लगा और मैंने आपके पत्रों का उत्तर देना निश्चय किया।

मेरा यह पत्र आपको मेरे बारे में सही जानकारी देगा और मैं मान रही हूँ कि आप उसके बाद अपना इरादा बदल लेंगे। मैं बहुत अभागी हूँ इसलिए मेरे बाप ने मेरा नाम विता रखा है। बचपन में मैं अपनी माँ को खा गई ऐसा सभी कहते हैं। मेरी बातूनी मौसी का कहना है कि मेरे चरण जहाँ भी पड़ते हैं वहाँ अनिष्ट अवश्य होता है। वहीं आपका यह 'परिणाम' पुरुष की जगह अपारी की जाल में फँसा दे यह विचारणीय प्रश्न है। अस्तु।

मैं आपको कुछ बात बताना चाहती हूँ। पहली बात यह कि हमारे

करने में मेरे लिए उचित वर नहीं मिला तब मेरे पिताजी मुझे यहाँ ले आए। यहाँ मेरे लायक कोई न कोई लड़का मिल ही जाएगा? यहाँ का एक पड़ोसी दूसरे पड़ोसी से एकदम अपरिचित है। यहाँ किसी को कोई चिंता नहीं। आज की ही बात है—सुबह-सुबह घर की मालकिन के साथ हवेली की नौकरानी दमो आई थी। दमो को उसके बाप ने बड़ी निर्ममता से पीटा था। उसके अंग-अंग पर लकड़ियों के दाग चमक रहे थे। लेकिन हम लोगों को इस घटना का जरा भी पता नहीं लगा। मैं उसके घावों को देखकर काँप उठी। मेरा मन करुणा से भर आया। लेकिन पड़ोसियों की यह बहरी व्यस्तता मेरे लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगा क्योंकि मुझ जैसी अभागी लड़की को यहीं पर वर मिल सकेगा और मेरे बाप के सिर की चिंता खत्म हो जायगी। पर आपके पत्रों ने एक नई समस्या को पैदा कर दिया है। मैंने आपके पहले पत्रों को एक कवि का प्रलाप ही समझा पर आपकी मरने की धमकी ने मुझे विचलित कर दिया और मुझे आपको पत्रोत्तर देने के लिए बाध्य होना पड़ा। क्योंकि ऐसी बस्ती में घटने वाली घटनाएँ या तो फिल्मों में ही होती हैं या सस्ते उपन्यासों में ही पर आपको देखकर मुझे कुछ नई अनुभूति हुई है कि ऐसी घटनाओं में सत्य अंश होता है। अब अगर मैं आपको पा जाऊँ तो मैं अपने आपको धन्य समझूँगी। मैं मन से बहुत खुश हूँ। मुझे भी आप पसंद हैं। दोनों की पसंद का परिणाम क्या होगा यह हमें पहले ही जान लेना चाहिये क्योंकि समाज बड़ा निर्दयी होता है। समाज हमारी ओर आँखें उठाए, उंगली दिखाये इसके पहले ही आपको साहस करके अपने पिताजी से हमारे विवाह के बारे में बातचीत पक्की कर लेनी चाहिये। मैं आपको एक बात और कहती हूँ कि मेरा बाप इस रिश्ते के लिए कभी ना नहीं करेगा।

अब मैं आपको अपने बारे में कुछ कहना चाहती हूँ। मैं तेज बुद्धि की एक साधारण पढ़ी लिखी लड़की हूँ। अंग्रेजी में मैं केवल सी एच आई एन टी ए" ही लिखना जानती हूँ। हाँ घर के प्रत्येक काम में आप

मुझे बी० ए० और एम० ए० तक की उपाधियाँ बिना किसी हिचकिचाहट के दे सकते हैं। मुझमें एक और विशेषता है वह आपको आम लड़कियों में नहीं मिलती वह है घर का आय के अनुसार बजट बनाना। इस बजट में अल्पबचत योजना भी शामिल है। आप कवि हैं और मैंने सुना है कि कवियों को बढ़-चढ़ कर कहने की बहुत आदत होती है। वे बात-बात में अपनी शायराना उक्तियाँ कहते रहते हैं जो मुझे कतई पसंद नहीं हैं। मुझे गंभीर आदमी अच्छे लगते हैं बकवादी और बातूनी नहीं। मैं बोलना चाहती ही नहीं। क्या आप ऐसी शुष्क लड़की को अपने सपनों की रानी बनाएँगे?

इसलिये पत्र मुझे दोपहर तक मिल ही जाना चाहिये।

विता—

× × ×

कमल ने उसी समय पत्र का उत्तर लिख दिया।

मेरी प्यारी विता।

तुम्हारा पत्र पाकर मेरे मन मंदिर के बुझे हुए सहस्र दीप जल उठे। मुझे ऐसा लगा कि मेरा मन उन प्रबल लहरों पर अठखेलियाँ कर रहा है—जो कूल से प्रणय-स्पर्श करने के लिए आतुर रहती हैं। मैं आत्म-हत्या का विचार भी अब अपने मन में नहीं लाऊँगा। कौन ऐसा बदनसीब इन्सान होगा जो तुम्हारा प्रणय पाकर मरना चाहेगा? विता मैंने तुम्हारा नाम मनमानी से गुलाब रख दिया है अब अपनी भूल सुधार करता हूँ। तुम तो बहार हो वीराने की बहार क्योंकि तुमने मेरे नीरस जीवन में बहार ला दी है। मेरे अरमानों में उस आग को जन्म दे दिया है जिस आग से दिल के फूल खिलते हैं।

मैं अपने बाप से आज ही अपने विवाह के बारे में कहूँगा। उन्हें मेरा कहना मानना ही पड़ेगा। तुम्हें नहीं मालूम कि मैं अपने बाप का इकलौता बेटा हूँ और मेरी माँ का भी देहान्त हो चुका है ऐसी स्थिति में वे मेरी बात टाल नहीं सकते।

उन्हें पढ़ी लिखी लड़की की ज़रूरत ही नहीं है। प्रायः मेरे जैसे हृदय के युवक के लिए बहुत पढ़ी लिखी लड़की एक समस्या और सिर दर्द बन कर रह जाती है क्योंकि आज की शिक्षित लड़कियों में श्रद्धा और भक्ति की जगह तर्क और विचार की शक्ति अधिक होती है। तथा वे पतियों के कामों में खामियाँ निकाल कर यह बताना चाहती हैं कि हम विद्वान हैं हम आप से हार नहीं खा सकती वगैरह वगैरह। यह रोज़ परिवार में विषाक्त वातावरण की सर्जना करती है और फिर तलाक तक की नौबत आती है। मैं तो इसे सिद्धान्त रूप स्वीकार करता हूँ कि कम पढ़ी लिखी पत्नी पति के लिए वरदान सिद्ध होती है।

और तुम्हारा निरन्तर मौन मेरे लिए महान वरदान ही समझो। तुम्हें यह कहते हुए मुझे संकोच हो रहा है (संकोच का कारण अपने मुँह अपनी तारीफ़) कि मैं एक विशिष्ट कलाकार हूँ हिन्दी में मेरा कलाकारों में शीर्ष स्थान रहता है। मैं चीज़ों की गेयता और मौलिकता पर विशेष ध्यान देता हूँ। और यह सब तभी संभव है जब मैं घंटों ही चिन्तन-मनन के सागर में गोते लगाता रहूँ। तुम शायद नहीं जानती इस वाली अमरीका में बड़े-बड़े आलोचकों द्वारा प्रशंसा पत्र पा जाना भी एक सम-मानी मैडल पदक के बराबर की बात है। पर मेरी बहार, यह सब मेरी साधना मेरे चिंतन मनन के कारण ही है और चिंतन मनन बिना एकान्त एकाग्रता के संभव नहीं। तथा एक गृहस्थ के लिए यह तभी संभव हो सकते हैं जब उसकी पत्नी बातूनी न हो। तब मेरी बहार, तुम मेरे मनो-कूल निकलती जा रही हो। अगर सारी दुनिया ही हमारा विरोध करेगी तो भी मैं तुम्हें प्राप्त करूँगा।

× × ×

कमिनी

आपका पत्र मिला। आपने जिस आत्मीयता और दृढ़ता का परिचय दिया है उससे मुझे बल और सम्मान दोनों मिल रहे हैं। मुझे पहले ऐसा महसूस होता था कि मुझे कभी भी अपने लिए एक अच्छा

पति नहीं मिलेगा और मेरे बाप की यह चिंता सदा उसके सिर पर सवार रहेगी और एक दिन विवश होकर वह इस अभागी को किसी बूढ़े काले कलूटे और दीन-हीन के गले बाँध कर सुख की साँस लेगा और मैं एक जानवर से अच्छा जीवन नहीं बिता पाऊँगी। पर अब मेरे मन के विश्वास बदल रहे हैं। मैं अभागी से सुभागी बन जाऊँगी। मुझे एक अच्छा वर सुन्दर पति मिल जाएगा।

अब मैं आपसे एक आखिरी सवाल पूछना चाहती हूँ। क्या आप शारीरिक सौन्दर्य को अधिक चाहते हैं या आत्मा को? मान लीजिए कल मुझे अचानक चेचक निकल आये और मैं बदसूरत हो जाऊँ। मेरा यह गोरा रंग सुडौल-कपोल गहरे दागों से भर जायें या मुझे कोई ऐसी बीमारी लग जाय जिससे मेरा उफनता हुआ यौवन वर्षों में रुग्ण और बुढ़िया की तरह शांत व निर्जीव हो जाय तो भी क्या आप मुझे इतना ही उत्तेजनापूर्ण प्यार करेंगे? मुझे इस सवाल का जवाब तुरन्त दीजिए।

—चित्रा—

× ×

प्रिय बहार

तुम्हारा सवाल काफी विचारपूर्ण है। आदमी के प्रेम के अपनी अपनी रूप को प्रगट करने वाला है। आत्मिक और कायिक प्रेम में मैं तो आत्मिक प्यार को ही सर्वोपरि मानता हूँ। इस प्रेम में स्थायित्व और त्याग की भावना रहती है। कामना न रहे इस प्यार में दैहिक मिलन की प्रेरणा का काम रहता है। आत्मा का प्यार इस पवित्र पथ पर अग्रसर होकर अमरत्व के साथ-साथ प्रेमी प्रेमिका को भौतिक भावनाओं से ऊपर उठाकर उनमें देवत्व भरता है। जहाँ इस भावना से प्रेरित प्यार प्रगाढ़ होता है, वहाँ रूप-सौन्दर्य का महत्व शून्य के बराबर हो जाता है। मैं तुम्हें चाहता हूँ जो हूँ ही पर उससे भी अधिक चाहूँगा तुम्हारी आत्मा को। अब मेरी अधिक परीक्षा न लो। मैं अब यह मान

(

चुका हूँ—प्यार किया नहीं जाता हो जाता है। अब अब मैं अधिक देर तक इस पत्नी का फासला नहीं सह सकता तुम बोलती क्यों नहीं एक बार तो पुकारो—मेरे कमल—

तुम्हारे सपनों का राजा
कमल कवि

कमलजी

पत्र मिला उत्तर दो दिन के बाद दे रही हूँ। यह रिश्ता हो इसके पहले मैं आपको एक कटु सत्य से परिचित कराना चाहती हूँ। आप जैसे प्रसिद्ध गीतकार चिंतन-मननकारी आत्मिक-सौन्दर्य प्रेमी को मुझ जैसी मामूली लड़की मान-सम्मान दे यह शोभा तो नहीं देता पर आप के भावों की भावाभिव्यक्ति पर मुझे रहम आ रहा है। मैं चाहती हूँ कि हमारा यह आत्मिक प्यार सच्चाई से और सुन्दर हो तथा उसे चाँद सूरज की उम्र लगे। गलतफहमी छल-कपट और किसी रहस्य का रहना प्यार के उम्र को कम कर देता है और शेष जीवन में ज़हर और घृणा भर देता है। मैं आप से ऐसी आशा रखती हूँ कि यह कटु सत्य आपके हृदय प्यार में कमी नहीं आने देगा और नहीं आप अपने आदर्शों से हटेंगे।

मुझे अब पूरा विश्वास हो गया है कि मैं और आप विवाह के गठबंधन में बँध ही जाएँगे। इस मधुर कल्पना में मैं डूबी जा रही हूँ। भविष्य के सुन्दर सुखद सपने मेरे समक्ष खड़े हैं। प्रभु से प्रार्थना करती हूँ कि मेरे ये सपने साकार हों। हाँ मैं आपको एक गंभीर रहस्य से परिचित कराने की बात कह रही थी क्योंकि इस रहस्य के उद्घाटन में सहयोग दे रहे हैं आपके सुखद आशीर्वाद विचार और आपका दृढ़ निश्चय।

यह सही है कि मेरा गीत आपके चिंतन मनन में ऐसा चिर सहयोग देगा कि आपकी कविताएँ एक दिन विश्व-व्यापी ख्याति अर्जित कर

× ×

कवि कमल अपने कमरे में गया। पत्र पढ़ने लगा। उसमें एक कुंकुम पत्रिका भी थी। उसने पहले नीचे का पता पढ़ा। सामने वाली पिता की ही कुंकुम पत्रिका थी। लिखा था—दर्शन शास्त्र के प्रकांड विद्वान प्रोफेसर दयाशंकर की सुपुत्री कुमारी सरिता बी० ए० का विवाह स्थानीय प्रोफेसर यदुनाथ के सुपुत्र श्री विश्वनाथ से दिनांक ५-५-५१ को सम्पन्न होने जा रहा है। आपसे प्रार्थना है कि आप इस शुभ काम में सपरिवार पधार कर कृतार्थ करें—

कमल को चक्कर सा आ गया। कुछ देर तक वह बुत की तरह बैठा रहा। अन्त में वह उठा और अपने पिता के पास गया। पिता से उसने पूछा "क्या वह लड़की गूंगी और बहरी थी?"

"कौन सी?"

"जिसका सामने वाले घर से विवाह हुआ था?"

"पता नहीं। मैंने उसे बोलते कभी नहीं देखा और फिर वे लोग किसी से बातचीत भी नहीं करते थे। पिता ने उस पर नजरें जमा कर कहा "पर तुम यह सब क्यों पूछ रहे हो?"

"यूं ही।

बड़ी विकट स्थिति थी कवि कमल की। विश्वनाथ उसका निकट तम का तो नहीं दोस्त अवश्य था। वह साहस करके उसके यहां गया।

"क्या उसे धोखा दिया गया है" उसने मन में सोचा। उसने बाहर से आवाज लगाई। विश्वनाथ आया। पूछा तुम आज कैसे आये?

"बधाई देने। मैं किसी कवि सम्मेलन में भाग लेने के लिये बाहर चला गया था।"

"आओ आओ तुम्हारी अपनी भाभी से मिलाऊं।

कवि के पाँव जमीन से चिपक गये। कमल लड़खड़ाता-बहकता सा ऊपर चला। कमरे में बैठ गया। उसकी उत्सुकता बढ़ती गई।

"मैं अभी तुम्हारी भाभी को बुला कर लाता हूँ।" वह बाहर गया

× ×

कवि कमल अपने कमरे में गया। पत्र पढ़ने लगा। उसमें एक कुंकुम पत्रिका भी थी। उसने पहले मौके का पता पढ़ा। सामने वाली पिता की ही कुंकुम पत्रिका थी। लिखा था—दर्शन शास्त्र के प्रकांड विद्वान प्रोफेसर रमाशंकर की सुपुत्री कुमारी सरिता बी० ए० का विवाह स्वर्गीय प्रोफेसर रघुनाथ के सुपुत्र श्री विश्वनाथ से दिनांक ५-५-५१ को सम्पन्न होने जा रहा है। आपसे प्रार्थना है कि आप इस शुभ काम में सपरिवार पधार कर कृतार्थ करें—

कमल को चक्कर आ गया। कुछ देर तक वह बुत की तरह बैठा रहा। अन्त में वह उठा और अपने पिता के पास गया। पिता से उसने पूछा "क्या वह लड़की गूंगी और बहरी थी?"

"कौन सी?"

"जिसका सामने वाले घर में विवाह हुआ था?

"पता नहीं। मैंने उसे बोलते कभी नहीं देखा और कुछ वे लोग किसी से बातचीत भी नहीं करते थे। पिता ने कुछ पर नजरें जमा कर कहा "पर तुम यह सब क्यों पूछ रहे हो?

"यूं ही।

बड़ी विकट स्थिति थी कवि कमल की। विश्वनाथ उसका निकट रूप का तो नहीं दोस्त अवश्य था। वह साहस करके उसके यहाँ गया।

"क्या उसे धोखा दिया गया है" उसने मन में सोचा। उसने बाहर से आवाज लगाई। विश्वनाथ आया। पूछा तुम आज कैसे आये?

"बधाई देने। मैं किसी कवि सम्मेलन में भाग लेने के लिये बाहर चला गया था।"

"आओ आओ तुम्हारी अपनी भाभी से मिलाऊँ।"

कवि के पाँव जमीन से चिपक गये। कमल सहमता-सहमता सा अन्दर चला। कमरे में बैठ गया। उसकी उत्सुकता बढ़ती गई।

"मैं अभी तुम्हारी भाभी को बुला कर लाता हूँ।" वह बाहर गया

और उसे बुला लाया।

"वाह ! मार्तलोन की साड़ी में यह अप्सरा से कम नहीं लगती है" कमल ने मन ही मन में कहा "यह गूंगी बहरी" ।"

"आप श्रीमती विश्वनाथ सरिता हैं और यह हैं मेरे दोस्त कवि कमल !

"नमस्ते। और सुनिये इन्होंने हमें बोर तो नहीं किया ?" सरिता बनाम चिता ने कहा—

नहीं।" विश्वनाथ ने कहा। कमल स्तब्ध सा उसे देखने लगा।

फिर इन्हें कहिये कि ये मेरे वे प्रेम पत्र कुछ लौटा दें जो मैंने इन्हें हाल ही में लिखे हैं ? मैं उन्हें अपनी नई कहानी गूंगी लड़की में प्रयोग करूँगी।"

विश्वनाथ ने विस्मय होकर पूछा "कौन से प्रेम पत्र ?"

सरिता ने पूरा किस्सा सुनाया कि हजरत किस तरह उसके पीछे दीवाना हुए थे और मरने पर तुले थे। पूरा किस्सा सुनकर विश्वनाथ खिलखिला कर हँस पड़ा। कमल का मानो खून सूख गया। वह टूटते हुए स्वर में बोला "आप मुझे क्षमा कर दीजिये।"

विश्वनाथ ने खिलखिलाकर कहा "यह शुरू से ही ऐसी नटखट और शैतान रही है। आज-कल के नवयुवकों कलाकारों रोमियों को यह खूब सबक देती है। मेरी तो इसने अग्नि परीक्षायें ~ ।"

बीच में सरिता ने कहा "मैं चाय लेकर अभी आयी।"

"क्या यह सरिता लेखिका है।" उसने मन ही मन कहा "जिसकी कहानियाँ इधर खूब छप रही हैं।" और उसके भाल पर पसीना चमक उठा।

× × ×

पत्थर में पानी

शंकर की सजा खत्म हो गई। उसे मुक्त कर दिया गया। दस वर्ष के लम्बे कैदी जीवन के बाद आज वह इस संसार में वापस आ रहा था जिससे वह एक दिन हत्या के अपराध में वंचित कर दिया गया था। उसने हत्या की थी एक सेठ की प्रसिद्ध गुण्डे के साथ। फलस्वरूप उसे दस वर्ष की सख्त सजा मिली थी।

गत दस वर्षों में उसने जेल-जीवन के कड़ुए-कड़वे अनुभव प्राप्त किए। उसने कसीदा बनाना सीखा। पहले-पहल डंडे भी खाए, क्योंकि वह अपनी कठोर और झगड़ालू मनोवृत्ति पर सहजता से अधिकार नहीं कर पाता था। बाद में उस की प्रकृति और एकान्त और प्रतिबन्धों के कारण अन्तर्मुख होती गई और वह एक मात्र व्यक्ति बनने लगा।

जेल से बाहर निकलते ही उसने एक अंगड़ाई ली। अपने श्मश्रुयुक्त चेहरे पर हाथ फेरा और फिर आसमान की ओर ताका। उसकी दृष्टि क्षण भर के लिए नीले आकाश पर जम गई। कपास के खिलौने की तरह छोटे-छोटे मेघ-खण्ड क्षितिज के पश्चिमी किनारे पर तैर रहे थे। तत्पश्चात् उसने जेल के सामने से निकलती लम्बी सड़क पर दृष्टि जमा दी।

एक युवती नयनों में अश्रु लिए उसके समीप खड़ी थी। उसके साथ सात-आठ साल का बच्चा था। बच्चा पीले और

जलता था। शेष समय यहाँ अन्धेरा-ही-अन्धेरा छाया रहता था। उस अन्धेरे में एक स्मृति उभर आई। बहुत समय पुरानी बात है—

"माँ!"

"क्या है?"

"बहू कहाँ है!"

"क्यों?"

"मैं पूछता हूँ बहू कहाँ है!"—बाँके शराब के नशे में धुत था। उसका सारा शरीर काँप रहा था। पाँव लड़खड़ा रहे थे।

"क्यों?

"जवाब नहीं देती हो क्यों–क्या छुपा रखी है। बताती है या मैं ।'
—और उसने झोंपड़ी के मिट्टी बर्तनों को तोड़ना शुरू कर दिया था।

माँ विह्वल हो उठी थी। तड़पकर बोली थी—"तोरे निपूते राम का और तेरी कुबुद्धि को ठीक क्यों नहीं करता। तूने घर की एक-एक चीज बेच दी है। माँ के नाक का कांटा भी नहीं रखा। बेचारी बहू के हाथ की चूड़ियाँ तो रहने दे?"

वह राक्षस की तरह गर्जा—"बता न कलमुँही तेरी बहू कहाँ है?"

"नहीं बताऊँगी।"

"नहीं बताएगी।"—उसने एक ठोकर से पानी का मटका फोड़ दिया था। माँ क्रोध में भर उठी थी। पर वह आवारा बेटे से बहुत आतंकित भी थी इसलिए उसने अपने हाथों से अपने को पीटना शुरू कर दिया था और वह जोर से चिल्लाने लगी थी।

सारा हरिजन मोहल्ला इकट्ठा हो गया। चमारों के पंच भाग्गू ने बाँके को समझाना चाहा पर बाँके ने उसे जोर से धक्का देकर कहा—"काम रे पंच का बच्चा एक ही घूंसे में पंचै को पंचर कर दूंगा।"

भाग्गू बेचारा गिरता-गिरता बचा। फिर भी झोंपड़ी के तिनके उस की बाईं बाँह में चुभ ही गए। वह बड़बड़ाता हुआ उठा था—"यह चमार वंश में राक्षस पैदा हो गया है।

वह इधर चला ही था कि रूपसी आ गई थी। रूपसी ने आते ही ज्यों ही विकराल-मूर्ति बाँके को देखा त्यों ही उसके प्राण सूख गए। वह पलट कर वापस भागी। बाँके ने उसे देख लिया और उसने उसका पीछा किया।

रूपसी उसकी पकड़ में आ गई थी। उसने रूपसी के बाल पकड़े और उसे भद्दी गालियाँ निकालने लगा था।

"चूड़ियाँ दे।"

"नहीं दूँगी। चार चाँदी की चूड़ियाँ मेरे सुहाग की निशानी हैं।"

"सुहाग की बच्ची देती है या ।"

रूपसी ने उसे धक्का दिया और फिर भागी थी। तब बाँके रोष व घृणा से भर उठा। उसने लपक कर अपनी बलिष्ठ बाँहों में रूपसी को उठाया और पटक दिया। रूपसी के मुख से खून बह उठा। वह अचेत हो गई। और ज़ोर से चिल्लाई, मर गई बेचारी मर गई।

और सचमुच बाँके घबरा उठा था। उसका नशा एकदम उतर गया था और वह वहाँ से भागा था। भागा तो कभी वापस गया ही नहीं। उसे यह तो मालूम पड़ गया था कि रूपसी मरी नहीं है किन्तु वह बदमाशों के दल में शामिल हो गया फलस्वरूप एक हत्या के अभियोग में उसे दस वर्ष का कारावास हो गया था।

बाँके बढ़ते अन्धेरे को देख रहा था। उसकी आँखें आज करुणा से भरी थीं। उसकी मन की गहराई दुख के कारण डूब जाना चाहती थी। सचमुच उसने अपनी पत्नी को पत्नी नहीं समझा माँ को माँ और बाप को बाप नहीं समझा।

फिर आज वह क्या मुँह लेकर घर जाएगा? जाएगा वह अब एक अच्छे इन्सान की तरह जिएगा। वह आँसू बहा-बहा कर सेवा कर सबको सुख देगा। अपने दुष्कर्मों का प्रायश्चित करेगा।

अन्धेरा गहरा होता जा रहा था।

वह गाँव में घुसा। झोपड़ों की जगह पक्के घर बन गए थे। मंदपी

से भरा-पूरा मोहल्ला साफ-सुथरा हो गया था। बच्चे एक गैस की लालटेन के नीचे पढ़ रहे थे। बांके ने उन्हें स्नेह भरी दृष्टि से देखा और आगे बढ़ गया।

"यहीं तो मेरा झोंपड़ा था।"—उसने मकानों के बीच खाली जगह को देखकर मन-ही-मन कहा। वह बिमूढ़-सा बहुत देर तक वहीं खड़ा रहा। वह अपलक अन्धेरे में अपनों का अस्तित्व बताते झोंपड़े के घास-फूस को निहारता रहा। सोचता रहा—रूपली उसे देखते ही उसके गले से लिपट जाएगी। उसकी बाहें उसके गले में होंगी और पुचकार-पुचकार कहेगा "अ रो पगली अब मैं तुझे छोड़ कर कहीं भी नहीं जाऊँगा। अब मैं बुराइयां छोड़कर आया हूँ। वह रोना बन्द नहीं करेगी। तब वह प्यार से उसके अंग-अंग को निहारता रहेगा।

वह अन्धेरे में प्रेतात्मा-सा खड़ा रहा। फिर वह बैठ गया और ज़मीन पर हाथ फेरने लगा। कुछ बिखरे हुए तिनकों को इकट्ठा किया। अन्धेरे में उनको देखने का असफल प्रयास करने लगा। उसने सोचा—शायद वे सभी नई बस्ती में बसे गए हैं। सरकार ने हरिजनों को नए घर बना कर दो दिए हैं।

वह वहां से चला। नए घरों में दीपक जल उठे थे। एक बूढ़ी स्त्री अपने बच्चे को पढ़ने के लिए डांट रही थी। बांके को अपनी माँ याद हो आई। उसकी माँ उसे देखते ही चीख पड़ेगी। कहेगी "मेरे सरवण मेरे राम तू मुझे निरभागी बना कर कहाँ चला गया था?" बांके की आँखें भर आईं। उसने अपनी हथेली से अपने आँसुओं को पोंछा। लम्बा साँस खींच कर पुनः विचारों में खो गया "पर मैं माँ के सामने अपने रूपली को बाहों में कैसे भरूँगा?"

अचानक वह एक युवक से आ टकराया।

"कौन हो तुम?" बांके ने पूछा।

"माधव।"

"अरे

पूछा—"मुझे नहीं

मैं हूँ बाँके।"

"अरे बाँके मुझा था तुझे तो जेल हो गई थी। तूने किसी की हत्या कर दी थी?"

"हाँ माधव, पर अब मैं एक अच्छा आदमी बन गया हूँ। अपने पाप का प्रायश्चित करने आया हूँ। सुन तो मेरा घर कहाँ है? मेरी माँ मेरे बापू और मेरी बहू कहाँ है?"

माधव नहीं बोला।

"तू चुप क्यों है?"

माधव ने अपनी गर्दन घुमाली। अन्धेरे के कारण वह उसके चहरे के भाव नहीं पढ़ पाया।

"तू बोलता क्यों नहीं? माधव तुझे मेरी कसम है, बस्ती में मेरा है सब कहाँ है?" बाँके काफी उत्तेजित हो गया था।

"बात यह है बाँके तेरे माँ-बाप पतों ही की तरह तेरा नाम रटते रटते चल बसे। आखिरी साँस तक उनकी जबान पर तेरा ही नाम था।"

"माधव!" चीत्कार कर उठा बाँके।

"तेरी घरवाली बहू पता के घर चली गई। बड़े आनन्द में है। उसका घर शहर के बाहर जो नई बस्ती बनी है वहीं है यही तीन चार मील दूर।"

माधव चला गया। बाँके निर्जीव सा हो गया। उसकी आँखों के आगे अन्धेरा छा गया। उसकी चेतना शून्य-सी हो गई। वह वहीं पर बैठ गया बैठा रहा—अचेत सा। बाद में उठा और आकाश की ओर देख कर उसने प्रतिज्ञा की कि—मैं उस बेवफा की बोटी-बोटी को काट कर चीलों को डाल दूँगा।

उसने बड़ी बेचैनी से रात गुजारी। कभी-कभी राम-दो-राम के लिए उसकी आँख भी लग जाती थी। पर जैसे ही वह जागता वैसे ही उसके सिर पर खून सवार हो जाता था।

आखिर सुबह हुई।

सूर्य देवता संवृति में पीयूषवर्षिणी रश्मियाँ बिखेरने लगे। थोड़े हरिजनों की नई बस्ती की ओर चला मन में तूफान उठ रहा था और घृणा और हिंसा के भाव चेहरे पर अठखेलियाँ कर रहे थे। नेत्र रक्तिम हो उठे, युद्ध के रक्त पिपासु सिपाही की तरह। नई बस्ती के चौराहे के पास वह खड़ा रहा। बहुत बदल गयी है उसके लोगों की दशा।

"पन्ना कहाँ रहता है?"—उसने जाते हुए एक व्यक्ति से पूछा।

"वह रहा चौथा मकान मूंछें हुए लाल मुँहवाला!" व्यक्ति गम्भीर हो गया "पन्ना मेरे यार हैं। तुम कौन से पन्ना को पूछते हो?"

"पन्ना रूपली!"—

"समझा रूपली का मालिक पन्ना यही है उसका घर। अभी वह घर में ही है।"

वह उत्तेजित हो उठा। हिंस भाव उसके रक्त में लहरों की तरह दौड़ने लगे।

—सब औरत बेवफाई की नंगी तस्वीर होती है। किन्तु मैं उससे बदला लूँगा। उसे अपनी करनी का दण्ड दूँगा।

वह दो ही कदम आगे बढ़ा था कि उसे पन्ना आता हुआ दिखाई पड़ गया। वह ठिठक गया। यही है साला चोट्टा जिस ने मुझ से मेरी रूपली को छीन लिया। मैं कम्बख्त का गला टीप दूँगा।

पन्ना के पीछे-पीछे अप्रत्याशित रूपली भागती हुई आई। उसके हाथ में कपड़े में लिपटी कुछ रोटियाँ थीं।

"अम्मू के बापू जल्दबाजी में रोटियाँ ही भूले जा रहे हो। उसके स्वर में कृत्रिम रोष था— मैं देख न लेती तो दिन भर भूखों मरना पड़ता।"

"अम्मू की माँ तेरे होते मुझे किसी की भी चिन्ता नहीं है। मैं बड़ा भाग्यवान हूँ नहीं तो तू मुझे कैसे मिलती?

"भाग्यवान तो मैं हूँ जिसे तेरे जैसा सीधा-सादा मर्द मिल गया नहीं

तो वह निर्दयी बांके मुझे मार ही डालता। अच्छा हुआ कि वह पागल कहीं चला गया।"

"तुम्हें उसकी याद आती है?"

"नहीं। वह याद रखने जैसा आदमी ही नहीं था। हाँ, उसकी गालियाँ जरूर याद आती हैं, उसकी मार-पीट जरूर याद आती है। रामसा पीर ने मुझ निरभागी को उससे छुड़ा कर सुभागी बना दिया।"

तभी बच्चे दौड़े-दौड़े आए। सबसे बड़ा बच्चा बोला—"माँ-माँ, रामू ने तेल गिरा दिया।"

"मैंने नहीं गिराया तेल गिराया है गोलू ने।"

"झूठ बोलता है!"

बच्चे आपस में लड़ पड़े।

कोलाहल मच गया।

गमा वहाँ से चला गया।

रूपली सभी बच्चों को लेकर चली।

बांके सम्मोहित-सा वहीं खड़ा रहा। हिंसा, द्वेष और प्रतिशोध सब सभी कुछ धुल गया। केवल पत्थर की प्रतिमा की तरह निष्प्राण और अचल खड़ा रहा।

जब रूपली उसकी दृष्टि से ओझल हो गई तब एक झुरझुरी के साथ उसकी चेतना लौटी। प्रतिशोध की पिपासित भावना पुनः जाग्रत हो उठी।

मैं इस छिनाल का मुँह तोड़ दूँगा।—यह निश्चय कर वह एकदम आगे बढ़ा। बीच पत्थर का एक टुकड़ा पड़ा था। बांके आवेश में उसे नहीं देख सका। ठोकर खा गया। धड़ाम से गिर पड़ा। लहूलुहान मुँह धूल-धूसरित हो गया। सिर से खून की पतली लकीर सी बह चली। आँखों के आगे धुंध-सी छाने लगी। मर्मान्तक पीड़ा की एक लहर उसके तन में दौड़ गई। वह करुण स्वर में पुकार उठा—माँ!

रास्ता सूना था। थोड़ी ही दूर पर पानी के नल पर कुछ छोकरियाँ बात कर रही थीं।

माँ की आवाज सुनकर उसका ध्यान बांके की ओर गया।

एक ने कहा—"देख री रूपली कोई बेचारा गिर गया है।"

रूपली ने व्यग्रता से कहा—"हाँ-हाँ चल री।"

कहकर तीनों पनिहारिनें भागीं। रूपली ने आगे बढ़कर उसे उठाया। दाढ़ी से आच्छन्न चेहरा भी उसकी नजर से छिपा नहीं रह सका। वह पहचान गई। उसका खून बरफ की तरह जम गया। शरीर पसीने से भीग गया। जबान से निकल पड़ा "हाय राम!"

"क्या करें?"

"मेरे घर ले चलो बेचारे को खाट पर सुला देंगे।"

सहारा देकर उसे रूपली अपने घर ले आई। थोड़ी देर में दूसरी औरतें चली गयीं। बच्चे कौतूहल की भावना लिए आगन्तुक को देख रहे थे।

रूपली ने उन्हें डाँट कर भगा दिया। बच्चे उदास से चले गए। रूपली ने बांके का घाव धोया। वह उसे पंखा झलने लगी। धीरे धीरे बांके ने आँखें खोलीं। रूपली उसके ललाट पर अपना खुरदरा हाथ फेर रही थी।

बांके कुछ बोले, उसके पहले ही रूपली ने कहा "मैं बहुत सुखी हूँ मेरे चार बच्चे हैं, मेरा अपना घर है पति है। तू तो शायद मुझे मार कर ही चला गया था पन्ना ने मुझे नया जीवन दिया है। उसने गली-गली की धूल नहीं छनने दिया गले-गले का हार नहीं बनने दिया अन्यथा मेरी क्या दुर्दशा होती?" कहकर उसने लम्बा सांस लिया। उसकी दृष्टि शून्य की ओर लगी हुई थी "अब तू फिर आ गया है। जरूर तू मेरे जीवन में जहर घोलेगा। पर तू इतना याद रखना कि मैं अपनी जान दे दूँगी पर आन नहीं दूँगी। मैं पन्ना को नहीं छोड़ सकती। बांके! मैं हाथ जोड़ती हूँ, तू अपना नया घर बसा ले। मेरे हरे-भरे घर को मत उजाड़।"

बांके के नेत्र भीग आए। वह झटके साथ उठा। उसकी मुद्रा पर कठोरता-कोमलता का विचित्र सामंजस्य था। वह घर के द्वार की ओर बढ़ता हुआ बोला "तुम गलती पर हो। म बांके नहीं हूँ। मैं तो एक

भटकता यात्री हूँ। तुमने मुझ पर दया की इसके लिए मैं तुम्हारी और तुम्हारे बच्चों की मनौतियाँ मनाऊँगा। भगवान तुम्हें सुखी रखे। तुम्हारे सुखी जीवन को बनाए रखे।"

और बांके वहाँ से सीधा हुआ चल पड़ा रूपनी ने जोर से कहा—"बाँके बांके रोटी तो खाते जाओ।"

परन्तु बांके ने पीछे मुड़कर नहीं देखा। रूपनी की आँखें भर आईं।

मैं मर गई हूँ

मैं ठगा-सा खड़ा एकटक देखता रहा। वह लम्बी कजरारी आँखें और कन्धों पर बेतरतीबी से नाचते हुए बाल। पहले की अपेक्षा थोड़ा-सा मोटा शरीर। और सभी स्त्रियों से भिन्न कूल्हों को मटकाकर एवं आकर्षणमय उत्तेजित चाल से चलकर सभी को मोहना।

वह क्षण प्रति क्षण मेरे करीब आती गयी।

चौरंगी कलकत्ता की रंगीन चौरंगी। चहल-पहल। कोलाहल। विभिन्न चेहरों की संगम-स्थली।

अब वह मेरे बहुत करीब आ गयी थी। लेकिन उसका ध्यान शायद कहीं और था इसलिए वह मुझे नहीं देख पायी। उसकी नजर स्थिर थी—ठीक सामने। मैं बड़ी नाटकीयता से उसके सामने खड़ा हो गया। वह मुझे एक पल विमूढ़-सी देखती रही फिर होठों पर मुस्कान बिखेरती हुई बोली "अरे तुम?" उसने मुझसे तपाक से हाथ मिलाया।

मैंने देखा कि वह स्थूल होने के साथ-साथ पीली भी पड़ रही है। उसकी आँखों के नीचे काली परछाइयाँ गहरी हो गई हैं और जो गुलाब उसके चेहरे पर आँखों को टिकाए रहती थी वह शेष-चिह्न के रूप में रह गई है।

वह एक दर्द भरी मुस्कान बिखेर कर बोली "तुम मेरी स्थूली देख रहे हो? स्थूली हूँ मौन।" उसके चेहरे पर

उदासी की काली घटाएँ गहरे रूप में छा गईं। एक असह्य गंभीरता थी उस पर।

मैंने कहा, "चलो, चाय पी आयें।"

"चाय!" वह चौंक पड़ी। उसकी नजर भीड़ में खो गई। वह अपने आपसे जैसे बोल रही हो इस तरह बोली, "मैं चाय नहीं पीती। चाय मुझे अच्छी नहीं लगती है।"

मेरी आँखें फिर उसके रूप पर जम गईं। वह बहुत ही बदल गई थी। उसका अलौकिक रूप विरूप हो गया था। और मेरी दृष्टि तैरती हुई उसके पेट पर थम गई। उसका पेट ठीक तीन बरस की तरह आगे को फूला हुआ था।

"क्या सोचने लगे?" वह जरा तेज स्वर में बोली। मैं चौंक पड़ा। "तुमने चाय कब से छोड़ी?"

"अभी से। सही बात यह है यतीन्द्र कि मैं कुछ ड्रिंक करना चाहती हूँ। यदि तुम पिलाना चाहते हो तो...।" वह एकदम चुप हो गई।

"आओ, किसी 'बार' में चलें।"

"नहीं, हम अपने घर ही चलेंगे।"

हम दोनों शराब लेकर आ गये।

फ्री स्कूल स्ट्रीट की एक छोटी-सी गली में सीमिया का फ्लैट था। हम दोनों ने जैसे ही उसके फ्लैट में प्रवेश किया वैसे ही चार बच्चे चीख-चीख चीख-चीख करते हुए आ गए। पूरे चार बच्चे! और एक पेट में! बाबा रे बाबा! एक कम्पन-सी दौड़ गई मेरे मन में।

तभी उसकी काली-कलूटी आया आ गई। आया के दाँत बहुत ही गंदे और उभरे थे। उसने बच्चों को अपने काबू में किया। सबसे छोटा बच्चा जो चार ही माह का था, अपना अंगूठा चूस रहा था—आया की गोद में।

सीमिया ने बिना हिचक के कहा, "दस रुपए दो यतीन्द्र।" मैंने

रुपए दे दिए।

सीसिया ने आया को हुक्म कर दिया "तुम बच्चों को बाहर ही खाना खिला आओ। मोड़वाला वह मुस्ता है न उसे कहती आना कि वह यहाँ दो आमलेट, पापड़ और कटा हुआ प्याज भेज दे। पैसे उसे तुम्हीं दे देना।"

वह बहुत ही तेजी से यह सब कह रही थी। रुककर वह तुरन्त ऊपर बढ़ती हुई बोली "आया! ऊपर कोई न आने पाए, इसका ख्याल रहे। आओ सतीश।

हम दोनों कमरे में आ गए। वह पीने की तैयारियाँ करने लगी।

मैं एक सोफे पर आराम से बैठ गया। कमरे में कोई भी परिवर्तन नहीं था। हाँ कुछ पुराना अवश्य लग रहा था। मेरी दृष्टि कमरे में दौड़ती रही। एकाएक दृष्टि नासिर की तस्वीर पर रुकी "नासिर कहाँ है?"

उसके चेहरे पर एक क्षण ज़ोर की हलचल हुई और वह संयत स्वर में बोली "वह जेल में है। उसे तीन बरस की सख्त सजा हो गई है।

"क्यों?"

'सोने का तस्कर! दरअसल वह बड़ा ही बदनसीब है। अब तुम्हीं सोचो तस्करी सभी करते हैं, पर पकड़ा आया वही जाता है।

"वह मेरे सामने आकर बैठ गई। शराब को गिलास में डालने लगी। इसके शीशे रंग के छोटे-छोटे कलात्मक गिलास। आमलेट पापड़ और प्याज भी आ गए। उसने उठकर सफेद की जगह रंगीन हल्का प्रकाश कर दिया।

"यह तो तुम्हारे लिए बहुत बुरा हुआ। मैंने सहानुभूति से कहा।

"हाँ हुआ तो है ही।" उसने थोड़ी लापरवाही से कहा और मुझसे अपना गिलास टकराया। उसने एक बड़ा घूँट लिया। बोली 'नासिर जेल में है। तीन माह पहले उसे सजा हो गई थी। इस बार वह बुरी तरह से बरबाद हो गया है। मेरा यानी अपनी बीवी का भी खर्च अब

नहीं बता सकता। इधर मेरी पीने की आदत भी बढ़ती जा रही है। क्या करूँ सतीश! जब कुछ और काबिल थी तब शराब में यह मज़ा नहीं आता था जो अब फाकामस्ती में आता है।" उसने हाथ के अजीब झटके के साथ एक घूंट और लिया। प्याला बिलकुल खाली हो गया "चाहे हम इसे कुछ भी क्यों न कहें पर जो चीज़ हमें मुश्किल से मिलती है उसके प्रति हममें बहुत चाह पैदा हो जाती है।" अब उसकी नज़र मुझ पर जम गई। वह आमलेट के टुकड़े को अपने दाँतों के बीच दबा कर चबाना-सा करने लगी। मैं कुछ समझ नहीं पा रहा था कि मैं उसे क्या कहूँ? तभी वह बोली "तुम से कुछ नहीं छिपाऊँगी। छिपाऊँ क्या छिपाने को तबीयत भी नहीं हो रही है। इच्छा हो रही है कि सब कुछ कह दूँ।" आज पूरे बीस-पच्चीस दिन के बाद पीने को मिल रही है। डट कर पीऊँगी। तुम पीओगे न? मैं तो बड़ा घूंट। मैं तुम्हें कह रही थी इधर मुझ पर बड़ा कर्ज हो गया है। जब नासिर को जेल हुई थी तब के दिन काटने पड़े हैं। नासिर को मेरी हालत का पता है पर वह मजबूर है। वर्ना उसमें इतनी हिम्मत है कि वह मेरे दुःख को दूर करने के लिए सभी कुछ कर सकता है। तुम यह अच्छी तरह जानते ही हो कि वह मुझे बेहद चाहता है। वह मेरे लिए सब कुछ कुर्बान कर सकता है। लेकिन अभी वह जेल में है।" उसने फिर गिलास भर लिया और बरफ के टुकड़े शराब में घोलने लगी। मैंने उसे टोका "शराब कम किया करो। शराब सेहत पर भी असर करती है नीलिमा! कितनी बेढंगी और बेडौल हो गई है तुम्हारी देह! कभी शीशे में अपना चेहरा देखती हो? गुलाबी रंग पीला हो गया है।" मैंने सिगरेट जला ली। धुआँधार धुआँ छोड़ता हुआ मैं फिर बोला "और नासिर जैसा पढ़ा-लिखा आदमी जो मार्डन कल्चर का हामी है इस तरह बच्चा क्यों पैदा कर रहा है मैं नहीं समझ सकता। कम से कम उसे तो मेडिकल सिस्टम वाला ऑपरेशन करा ही लेना चाहिए।"

वह निष्प्रभ हो गई। नज़र उसकी बोतल पर थी। उदास-उदास

और लम्बी-लम्बी रेखाएँ गहरी हो गईं। धीमे से बोली "यह नहीं कराऊँगी।"

"लेकिन क्यों ?"

"इसलिए कि मैं उसके हाथ से न निकल जाऊँ।" अब उसकी नजर आखिर की तस्वीर पर थी। नशा आँखों में उतर-उतरकर उसकी पलकों को भारी करने लगा था।

मुझे भी खुमार-सा आने लगा। किन्तु मैं निरन्तर अपने मस्तिष्क पर जोर देकर अपनी चेतना को कायम किए हुए था। ललाट पर बल डाले हुए मैं बोला "लगातार बच्चे पैदा करने का हाथ से निकल जाने से भला सम्बन्ध हो सकता है ? क्या तुम लगातार बच्चे पैदा करती रहोगी तो तुम उसे छोड़ कर नहीं जाओगी ? तुम अभी जा सकती हो !"

वह धीरे से हँस पड़ी "तुम मेरी बात का मतलब नहीं समझे। न ही मैं इसे छोड़कर जाना चाहती हूँ और न ही मैं इसके साथ रहना चाहती हूँ। मेरी स्थिति अब पालतू जानवर की तरह है। जो मुझे हिफाजत से रखेगा उसे मैं लात नहीं मारूँगी। क्योंकि बीते दिनों ने मेरे खुद के अस्तित्व को मिटा दिया है। और मैं अपने बारे में कुछ सोच भी नहीं सकती हूँ। जो ज्यादा ताकतवर है वह मुझे किसी से भी छीन कर ले जा सकता है। मुझे हिफाजत चाहिए, हिफाजत। ऐसी बातें मेरे चरित्र को गिराती जरूर हैं पर मेरी स्थिति ठीक वही है। इधर मेरे रूप के प्यासों ने इस राह से गुजरना छोड़ दिया है, क्योंकि मैं अब चुहिया की तरह बच्चा पैदा करती हूँ। इस फूले हुए पेट को देखकर आदमी के मन में एक घिनौना ख्याल पैदा होता है और भोग की सभी इच्छाएँ ताश के महल की तरह टूट जाती हैं। इस फूले पेट की वजह से कण्ट्राक्टर अब्दुलगनी इस शहर को हमेशा के लिए छोड़कर चला गया। वह दो साल तक इसी फिक्र में रहा कि कब जीतिया खाली हो और कब मैं इसे लेकर भगूँ। चाहे यह बात कितनी भद्दी और जहरीली क्यों न हो लेकिन हमारे संस्कार, समाज और मजहब का हमारे ऊपर

है यदि कोई उठ जाय तो कभी मर्द औरत को एक वासनात्मक ही नजर से देखें और मानवता के पुतले इन्सान पल भर में असभ्यता ढा दें। बहुत ही अजीब स्थिति है आदमी के मन की। रजाक के ये दोस्त—अब्दुल शाकिर और यह हनीफ—सब रजाक की इज्जत केवल मेरे लिए देते थे।"

"और वह हनीफ मेरे रूप का सच्चा पुजारी था। मुझे बहुत चाहता था। जान देता था बेचारा। बेचारा नासमझ कि उसकी मेरे पीछे शाकिर से बड़ी दुश्मनी थी। शाकिर दुनिया की हर ताकत से लड़ सकता है मेरे खातिर। "सतीन्द्र रजाक के बाद मैं मैं नहीं रही। मुझे लगा कि मैं मर चुकी हूँ। मेरी आत्मा इस मनुष्य शरीर से निकल गई है और एक जीता जागता मांस का मैं पिंड मात्र हूँ।"

"रजाक!" वह इस नाम को लेकर अतीमून व्यथा से घिर गई और उसकी नशीली आँखें थोड़े क्षण के लिए बन्द हो गईं और उसने गिलास को एक ओर करके मेज पर बायें हाथ के बल अपनी गर्दन को रख दिया। तब उसका सारा शरीर ढीला-ढीला हो गया और उसके होंठ अन्तर के असीम अवसाद से कांप से उठे। दो बूंद आंसू भी उसके पलक-पुलिन को छोड़कर एक-दूसरे से मिलते हुए मेज पर गिर गए।

मैंने आत्मिक स्नेह से कहा "शीशिया तुम्हें हिम्मत से काम लेना चाहिए। दुर्योग हर एक के जीवन में आते हैं।

वह उठी और गट-गट शराब पीने लगी।

"यह शराब बहुत अच्छी चीज है। मैं इसके ईजाद करने वाले को तहेदिल से धन्यवाद देती हूँ। यही एक ऐसी चीज है जो कभी-कभी मुझमें मेरी आत्मा को थोड़ी देर के लिए वापस बुला देती है और मेरे सामने रजाक का चेहरा नाच जाता है। "सतीन्द्र! रजाक को मैं जितना चाहती थी, उतना ही शाकिर मुझे चाहता है। वह एक तरह से निहायत गिरा हुआ इन्सान है किन्तु वह मेरा कभी भी बुरा नहीं चाहता। जब रजाक से मेरा विवाह हुआ था और रजाक के माँ-बाप ने उसे करने पर

से यदि कोई उठ जाय तो सभी मर्द औरत को एक वासनात्मक ही नजर से देखें और सभ्यता के पुतले इन्सान पल-भर में बर्बरता ढोंग दें। बहुत ही अजीब स्थिति है आदमी के मन की। रजाक के ये दोस्त—मन्सूर नासिर और सईद हमीद—सब रजाक की इज्जत केवल मेरे लिए देते थे।"

"और वह हमीद मेरे तन का पक्का पुजारी था। मुझे बहुत चाहता था। जान देता था बेचारा। बेचारा नासिर कि उसकी मेरे पीछे नासिर से बड़ी दुश्मनी थी। नासिर दुनिया की हर ताकत से लड़ सकता है मेरे खातिर।" "यकीन रजाक के बाद मैं भी नहीं रही। मुझे लगा कि मैं मर चुकी हूँ। मेरी आत्मा इस मनुष्य शरीर से निकल गई है और एक खोखला आवरण मात्र का मैं लिए बाद हूँ।"

"रजाक !" वह इस नाम को लेकर भावविभोर स्वयं से फिर यह और उसकी नशीली आँखें थोड़े क्षण के लिए बन्द हो गईं और उसने गिलास को एक ओर सरका मेज पर बायें हाथ के बल अपनी गर्दन को रख दिया। तब उसका सारा शरीर ढीला-ढीला हो गया और उसके होंठ चम्पक के समीप बरबस से चमक से उठे। दो बूँद आँसू भी उसके पलक-पुलिन को तोड़कर एक-दूसरे से मिलते हुए मेज पर गिर गए।

मैंने आत्मिक स्नेह से कहा "शीरीना तुम्हें हिम्मत से काम लेना चाहिए। दुर्भाग्य हर एक के जीवन में आते हैं।"

वह उठी और गट्-गट् शराब पीने लगी।

"यह शराब बहुत अच्छी चीज है। मैं इसके ईजाद करने वाले को दर्दे-दिल से धन्यवाद देती हूँ। यही एक ऐसी चीज है जो कभी-कभी मुझमें मेरी आत्मा को थोड़ी देर के लिए वापस बुला देती है और मेरे सामने रजाक का चेहरा नाच जाता है। यकीन ! रजाक को मैं जितना चाहती थी उतना ही नासिर मुझे चाहता है। वह एक तरह से निहायत नेक इन्सान है किन्तु वह मेरा कभी भी कुछ नहीं चाहता। जब रजाक से मेरा विवाह हुआ था और रजाक के बीच-बाद से सब पलने पर

न बचने के प्रयत्न कर लिया था तब भगवान ने उसे बड़ी मदद दी थी। उसके लिए कोई ढूंढ कर लिया था और कुछ नहीं अपने उसने उसकी अन्य बातों की तरह मान लिया गया। पर मुझे चाहता था पर उसका केवल रजाक इस समय की कमी की नयी बात बना और न दी है। रजाक को मौत न आने दिए मेरी ज़िन्दगी बहुत ही की तरह रही। मेरी बेटी और बड़े खुशकिस्मत जन्दिदा के हवाल।

यों तो मेरे मन के अन्दर रजाक को लेकर आन्दोलन रहे था। धर्म के लिए लिए युद्ध। कभी भी सिद्धान्तों कुछ कर जाती थी। मेरे को बात भी मुझसे कुछ नहीं थ। वे ? हिन्दुस्तानी मिलिटरी का पुलिस को उसकी कमजोरी बताता है और उसका बड़ा था। तो वे हिन्दुस्तान के मुल्कों तक का भी सब परिवर्तन करते हैं। मैं हिन्दी बंगला और उर्दू दोनों को और मेरी मां जानती थी कि वे केवल अंग्रेज़ी बोलें को हमारी मातृभाषा है। दूसरा उनका ख्याल था कि मैं मन ही रजाक से शादी कर लूं पर उस ईसाई धर्म में लाकर। मगर मैंने इस अनुभव जन-जीवन में अपने मजहब का एक भी इन्सान नहीं बनाया तो मैं प्रभु के प्रति वफ़ादार नहीं कहलाऊँगी क्योंकि यह मन प्रभु का दिया हुआ है और मुझे इस मन से उसके मजहब में एक बड़े को लाना ही चाहिए। किन्तु रजाक को यह मंजूर नहीं था। रजाक ने स्पष्ट शब्दों म कहा था "तुम अपने मन से मुझे मामामत्र बातों के लिए नहीं रखा सकती। मैं तुम्हें मुसलमान जरूर बनाता हूँ पर मैंने उनके लिए अपना मजहब बदलने की तुम्हारी शर्त नहीं मानी थी?"

मैं क्या करती? मैं भी उसे चाहती थी। वह एक धनवान और सलोना इन्सान था। मैंने उससे चुपचाप शादी कर ली। नतीजा यह निकला कि उसके कट्टरपंथी मां-बाप इसलिए उससे नाराज़ हो गये कि वे उसकी शादी अपने बिरादरी खानदान की किसी अमीर लड़की से करना चाहते थे और मेरे मां-बाप मुझसे इसलिए नाराज़ हो गये कि मैंने रजाक को ईसाई नहीं बनाया। पर हमें कोई दुःख नहीं था। हमारे

कई दोस्त आ गये—नासिर, अब्दुलगनी अब्दुलसमद, मुहम्मद हनीफ़। उसने बातों ही बातों दूसरा गिलास भी खाली कर दिया था और वह जैसे ही फिर शराब ढालने को तैयार हुई वैसे ही मैंने उसे रोक दिया।

"अब अधिक मत पियो। इतना पीना अच्छा नहीं।"

वह हँसी। उसने मेरी ओर देखा और सूनी मुस्कान के साथ वह बोली "थोड़ा सा और। अभी मेरी बात खत्म नहीं हुई है। आज मैं तुम्हें अपनी कहानी सुनाऊँगी। ऐसे ही सब्ज परियों की धुन लगा लिया। यहीं गया मजीद होता गया फिरोमन एकदम नया। शौकिनाना मौलिक और अनोखा। उसने प्याला खिसका दिया और वह आमलेट का टुकड़ा खाने लगी। मैं उसे मजबूर करने भाव से कई प्रश्न करता रहा। वह गिलास को इस तरह घूर रही जैसे वह उसमें अपना प्रतिबिम्ब देखना चाहती हो। बोली "हनीफ़ मुझ पर पूरी तरह आशिक हो गया। उस की हविस उसके मन में ही कुंडली मारे साँप की तरह फुफकारती रही और एक दिन उसने न्यामीजान की याद में रज़ाक की गैरहाज़िरी में मेरे साथ बलात्कार करने की चेष्टा की। मैं उस पर उठी पर मजबूर थी। ऐसी स्थिति थी कि मैं कुछ कर नहीं सकी। वह चला गया। मैं गंभीर बनी बैठी रही। मुझे लगा कि यह सेक्स सबसे बलवान है। आदमी को किस हद तक गिरा देता है? आदमी इसी की वजह से बहुरूपिया बनता है अनेक रूपों की रचना करता है। उसका चरित्र अलिफ-लैला के जादू भरे चमत्कारों सा अद्भुत और अज्ञेय हो जाता है। कब वह किस रूप में धोखा दे जाय नहीं कहा-समझा जा सकता। मैंने सारी कहानी रज़ाक के सामने रख दी। मैं नहीं जानती थी कि मेरे आँसुओं और इस कहानी का इतना भयानक अंत होगा। उसी रात रज़ाक ने यहीं सड़क पर एक बिजली आसमान की तरह हनीफ़ को कत्ल कर दिया। हनीफ़ मर गया और रज़ाक को उम्र कैद की सजा हो गयी।

"सभी दोस्त मुझसे सहानुभूति प्रकट करते। अब मुझे मालूम हुआ कि सभी बदस्तूर मुझे अपनी बाँहों में लेने के लिए तरस रहे हैं और नासिर

बड़ी लड़ाई और चतुराई से मुझे पाना चाहता है। मुझे उस औरत से बड़ी घृणा हुई। बचपन के बारे में उससे कभी दो घूंट बोलना नहीं चाहती थी। लेकिन रज्जाक करनी के बाद औरंगा और रज्जाक के कमरा बाद मुझे अपने से चाहने बहलाना चाहते थे। एक दो बार उन्होंने मुझे हाथों की मरम्मत की। तब मुझे मजबूर होकर नासिर के घर जाना पड़ा। नासिर मुझे चीजें देता था। रोने भी इजाजत देता था और अनेक इशारों से मुझे आभास कराता था कि वह मुझे बेहद चाहता है। इधर सजनी ही मुझसे बार बार विनती करता था कि तुम मेरे साथ रहो। लेकिन मुझे नासिर का स्वभाव अच्छा लगता था। नासिर अपने आपको शिकस्तखोर समझता था। कहता था "मैं हिमायत का काम नहीं पसंद करता हूं।" वह कुछ भी करता हो मुझे उससे कोई शिकायत नहीं थी। मुझे सिर्फ हिफाजत की जरूरत थी। रज्जाक के खानदान नहीं चाहते थे कि मैं जिन्दा रहकर उनकी दौलत की हिस्सेदार बनूं। उन्होंने मेरे पीछे गुंडे लगवाये पर नासिर मेरी मजबूत ढाल बना रहा। उसने मुझे बचाये रखा।"

"लेकिन बड़ी ठेकेदार कुछ घर छोड़े जाने लगा यह बार-बार घर आने लगा। धीरे धीरे वह प्यार की बात करने लगा। मैंने नासिर से कहा पर नासिर ने मेरे व्यक्तिगत मामले में बोलना अच्छा नहीं समझा। और मैं बसीरा उसे तत्काल कोरा उत्तर नहीं दे सकी। मैं उसे नहीं कह सकी कि वह मुझसे ऐसी बातें न करे। शायद कोई स्त्री मेरे अन्तस् मन में था कि यदि नासिर ने धोखा दे दिया तो मैं कहीं"

"नासिर ने कभी को बुरा भी नहीं कहा। मुझे यह बुरा लगा। आखिर मैं उसकी हिफाजत में हूँ। लेकिन नासिर ने कभी को एक डाक्टर के मामले में ऐसा फँसाया कि बेचारे को तीन बरस की सजा हो गयी।"

"अब नासिर अकेला था। वह आता था और मेरी जरूरतों के बारे में पूछ कर चला जाता था। जिस चीज की मुझे जरूरत होती थी उसे हाजिर

कर देता था। नये नये फैशन के गहने और कपड़े। मैं उसकी इस भव मनचाहत से भी तंग आ गयी। उसके चाहतों एवं सीधेपन ने मुझे पागल कर दिया। और एक दिन मैंने उत्तेजित स्वर में पूछा 'तुम्हें मेरे लिए इतना पैसा नहीं खर्च करना चाहिए।

वह कुछ नहीं बोला।

मैं उसकी चुप्पी से व्यग्र हो उठी। चीख कर बोली "तुम बोलते क्यों नहीं। तुम मुझसे क्या चाहते हो ?" उस समय मैं पागल सी हो गयी थी।

"वह नीले आकाश की ओर नजर दौड़ाता हुआ बोला, ' मैं अपना फर्ज पूरा कर रहा हूँ।"

"और मेरा फर्ज ? मैंने उसकी ओर देखा। उसकी आँखों में श्याम आग के सैलाब की तरह खामोश सोयी हुई थी। वह चला गया। उसकी मुझे चुप्पी पीड़ा देने लगी। एक ऐसा दर्द मुझे सताने लगा जिसे मैं नहीं समझ सकी। आखिर मैंने साहिर से कह दिया "मैं तुमसे शादी करना चाहती हूँ।"

"साहिर ने पहले मेरी ओर देखा और बाद में उसने एकदम व्यग्रता से मेरे हाथ मजबूती से पकड़ लिये।"

"साहिर ने मुझसे कानूनी विवाह किया। विवाह की रात मुझे बड़ा दुख हुआ। हम अपने समाज की गन्दगी को छिपाकर भले ही अपनी मान्यताओं के सामने आदर्श की बातें रखें पर जो वास्तविकता है वह कभी नहीं छिप सकती। हम वेदों, पुराणों और ज्ञान की पुस्तकों में राम ईसा मुहम्मद के महान चरित्रों को पढ़ते हैं पर कौन ऐसा बना है ? मानो जमाना गुर हमसे अपनी बातें मनवा रहा है। रजाक के सभी दोस्त मेरे रूप के लोभी। मुझे भाभी कहकर पुकारते थे और सभी मुझे अपनी महबूबा समझते थे। आदमी भीतर से वैसा ही आदिम बना हुआ है। पहले वह कपड़ों के बिना नंगा था और अब वह कपड़ों में नंगा है।"

शराब उसकी आँखों को मूँदने लगी थी। बोतल में भी बहुत कम

कर देता था। नये नये फ़ैशन के गहने और कपड़े। मैं उसकी इस मान मनुहार से भी तंग आ गयी। उसके एहसानों एवं मीठेपन ने मुझे पागल कर दिया। और एक दिन मैंने उत्तेजित स्वर में पूछा 'तुम्हें मेरे लिए इतना पैसा नहीं खर्च करना चाहिए।

वह कुछ नहीं बोला।

मैं उसकी चुप्पी से पागल हो उठी। चीख कर बोली "तुम बोलते क्यों नहीं। तुम मुझसे क्या चाहते हो ? उस समय मैं पागल सी हो गयी थी।

'वह नीले आकाश की ओर नजर दौड़ाता हुआ बोला, मैं अपना फर्ज पूरा कर रहा हूँ।"

"और मेरा फर्ज ?" मैंने उसकी ओर देखा। उसकी आँखों में ज्वाला आग के सैलाब की तरह खामोश सोयी हुई थी। वह चला गया। उसकी चुप्पी मुझे पीड़ा देने लगी। एक ऐसा दर्द मुझे सताने लगा जिसे मैं नहीं समझ सकी। आखिर मैंने आजिज़ी से कह दिया "मैं तुमसे शादी करना चाहती हूँ।"

"साबिर ने पहले मेरी ओर देखा और बाद में उसने एकदम व्यग्रता से मेरे हाथ मजबूती से पकड़ लिये।"

"साबिर ने मुझसे कानूनी विवाह किया। विवाह की रात मुझे बड़ा दुख हुआ। हम अपने समाज की सभ्यता को छिपाकर भले ही अपनी सन्तानों के सामने आदर्श की बातें रखें पर जो वास्तविकता है वह कभी नहीं छिप सकती। हम वेदों, शास्त्रों और ज्ञान की पुस्तकों में राम ईसा मुहम्मद के महान चरित्रों को पढ़ते हैं पर कौन ऐसा बना है ? जमाना गुरु हमसे अपनी बातें मनवा रहा है। रज़ाक के सभी दोस्त मेरे रूप के लोभी थे। मुझे भाभी कहकर बुलाते थे और सभी मुझे अपनी महबूबा समझते थे। आदमी भीतर से वैसा ही आदिम बना हुआ है। पहले वह कपड़ों के बिना नंगा था और अब वह कपड़ों में नंगा है।"

शराब उसकी आँखों को मूँदने लगी थी। बोतल में भी बहुत कम

शराब रह गयी थी। वह गर्दन हिलाकर बोली "उन दिनों शामिर बड़ा खुश था। वह झूम उठा। क्योंकि मैंने उससे कहा कि मैं माँ बननेवाली हूँ। उसने एक मोहब्बत की चीज़ सी मानो उसे कोई अप्राप्य चीज़ मिल गयी हो। और इसके बाद लगातार बच्चे होते गये। आया था। मैं माँ बनने वाली थी मेरे फूले हुए पेट को देख कर वह चला गया। एक बार वह फिर आया। जब मेरी गोद का बच्चा बड़ा हो और वह मुझे लेकर जाय। लेकिन मेरा पेट!" उसकी चीख कर आयी। वह भर्राये स्वर में बोली "मेरा बस यही उलटोप-उलमोल हुआ। लगातार बच्चे पैदा करते-करते मैं मर गयी। मेरा रूप मेरी जवानी और मेरा आकर्षण सब मर गया। दर शामिर खुश है। बहुत ही खुश रहता है इन दिनों। क्योंकि उसका विश्वास है कि अब मुझे कोई भी लेकर नहीं जायेगा। अभी वह शहर छोड़ कर चला गया। इजाफ़ा जब तक लौटेगा तब तक मेरे आगे छोटे-मोटे बच्चों की एक फ़ौज होगी। मैं चढ़ी-हाथी बूढ़ी बेगम की तरह दिख लगी पड़ूँगी—जिसके चेहरे पर झुर्रियाँ कीड़ों की तरह कुलबुलाती होंगी। मुँह भी शायद दाँतों के बिना बहुत ही बुरा लगेगा।" उसने अपना मुँह मेज पर रख लिया। आँसू उसकी आँखों में से बहने लगे। एक बार सुबकियों से भी शोर मारा। सिसकिन स्वर में बोली "शायद तब भी मेरा यह पेट फूला हुआ होगा।" उसने रोते हुए अपना मुँह अपने हाथों में छुपा लिया।

मैं करुणा से आप्लावित हो गया। वह निर्जीव-सी अपनी कुर्सी में पड़ी रही। नशा ठप हो रहा था। नीचे बच्चे आ गये थे। उनकी धीमी धीमी आवाज़ आ रही थी। मैंने नीचे जाकर आया से कहा कि वह खाना ले आये। वह थोड़ी देर में खाना ले आयी। मैंने उससे खाने का अनुरोध किया। वह खाना खाती रही। बड़बड़ाती रही। रोती रही। मैं उसे निरन्तर ढाढ़स बँधाता रहा। हाथ जोड़े हुए उसने कहा "मैं बहुत दुखी हूँ सतीश बहुत दुखी। यह शराब न हो तो मेरे दिल का असली दर्द भी न जाये और न मैं अपने आपकी सही हालत को पहचानूँ!

जब मैं यह शराब पीती हूँ तब मेरा जी मिचलाने लगता है। कुछ बाहर आने को बेचैन लगता है कि मैं कै कर दूं। कै नहीं होती है और मेरे दिल की घुटन बढ़ जाती है। मुझे यह स्थिति पसन्द है। उस घुटन और उस दुख को मैं शाश्वत करना चाहती हूँ इसलिए मैं शराब पीती हूँ।

यतीन्द्र तुम्हें क्या बताऊँ " वह अपने पलंग पर अर्धशायित हो गयी। उसके फूले हुए पेट पर मेरी दृष्टि गयी। मन में अरुचि-सी जग गयी। तब मैंने अपनी दृष्टि उसके मुंह पर जमा दी। वह दार्शनिक सी बोली "मौत दो तरह की होती है। एक आम मौत—जिसके होते ही लोग इस देह को जला आते हैं गाड़ आते हैं। और दूसरी मन की मौत–जिसे कोई नहीं जानता। वस्तुतः मैं एक तरह से मर गयी हूँ और जिन्दगी के अजीब सम्मोह से आतंकित इस देह को सम्भाले हुए हूँ। शायद इन्सान के अचेतन मन में अपनी दुर्दशा और बरबादी के अन्तिम बिन्दु को देखने की भी एक तीव्रतम इच्छा होती हो। मुझमें यह इच्छा जरूर है, वर्ना मैं जिन्दा नहीं रहती। आज आखिर जेल में हूँ। मुझे दिन प्रति दिन अभाव घेरते जा रहे हैं। जानती हूँ एक दिन शेष पूंजी भी बिक जायगी ये फर्नीचर भी बिक जायेगा ये बरतन भांडे भी बिक जायेंगे तब मैं शराब कहाँ से पिऊँगी इन बच्चों को रोटी कहाँ से लाकर दूंगी ? बड़ी पीड़ादायक स्थिति होगी! फिर भी मैं जिंदा हूँ कोई अदृश्य शक्ति मुझे मरने नहीं देती। यही मेरे प्रश्न का उत्तर है कि इन्सान अपनी बरबादी के चरमबिन्दु को भी देखना चाहता है ठीक खुशी के चरम बिन्दु की तरह! बस यह एक ऐसा भयानक पीड़ादायक सम्मोह है!"

वह निढाल हो गयी। अपने को संभालती हुई व्यंग्य व्यथा और विषाद मुस्कान से स्वागत सा करती हुई वह उठी और बोली 'गुड नाइट। फिर मिलेंगे डियर यतीन्द्र!' और वह पलंग पर पड़ गयी। छटपटाती रही। मैं उसे करुणापूर्ण दृष्टि से देखता हुआ बाहर निकल गया यह सोचता हुआ कि सचमुच यह दुख अनन्त होता जा रहा है।

आँचल का विद्रोह

सूर्य मकान के सबसे ऊपरी कंगूरे को चूमता हुआ किरणों से लिपट गया था। अमिता ने अंगड़ाई के साथ जंभाई ली और अपने आँचल को व्यवस्थित करके खिड़की खोल दी। उसकी पलकें रात भर न सो सकने के कारण भारी थीं और उसकी आँखों में उमड़ती हुई व्यथा स्पष्ट लक्षित हो रही थी। खिड़की के खुलते ही पवन का झोंका आया और उसकी एक अलक को छितरा गया। अलक कन्धे पर लहरा रही थी। उस ने अनमनस्क भाव से उसे ठीक किया फिर वह गुसलखाने में चली गयी। वहाँ ब्रश और मंजन पड़े थे। उन्हें देखते ही उस के तन-मन में कंपकंपी-सी छूट गयी। वह क्षण भर के लिए गुसलखाने से बाहर चली आयी। भय की हल्की रेखा उसके नयनों में खिंच गयी।

इसी ब्रश और मंजन को लेकर उसका अपने पति से झगड़ा हो गया था। कल ही की बात है कि सुबह-सुबह अमिता उठी थी। प्राची में आभा जरूर फूट चुकी थी पर सूर्य नहीं निकला था। उसने सीधे जाकर गुसलखाने में पति के ब्रश को इस्तेमाल कर लिया था। तभी उसका पति सुरेश आ गया। सुरेश आते ही उस पर बरस पड़ा "तुम रही गधी-की-गधी। हजार बार कह दिया है कि दूसरे का ब्रश कभी भी काम में

नहीं आना चाहिए, पर तुम्हारी मोटी बुद्धि में यह बात नहीं आ सकती।"

अमिता ने उसे अजनबी दृष्टि से देखा। वह दृष्टि उठती हुई गुसलखाने के कमरे को घूमती हुई नल के चारों ओर बिखरे छींटों पर क्षण भर रुकी और जब कप पर आकर रुक गयी। कुछ क्षण वह उसे देखती रही बाद में वह बिना कोई उत्तर दिये कप धोने लगी। कप को साफ किया और यथास्थान रख दिया।

कप का रखना था कि सुरेश भभका। झटके के कारण उसके बाल का अगला गुच्छा ललाट पर आ गया। चेहरा आरक्त हो उठा। शरीर में हल्का-सा कंपन भी आ गया। उसने कप को हाथ में लेकर उसे इस तरह देखा जिस तरह सिपाही हत्यारे के खून भरे चाकू को देखता है। वह बोला "इसे बाहर क्यों नहीं फेंकती? क्या इससे सारे घर को मारोगी? हजार बार कह दिया है कि तुम्हें पायरिया है।

और उसने कप को बाहर फेंक दिया। झगड़ा यहीं पर खत्म नहीं हुआ। कप को लेकर जो झगड़ा आरंभ हुआ था उसने उनके तमाम जीवन के प्रथम पृष्ठों को खोल डाला। माँ-बाप शिक्षा-दीक्षा रहन सहन सम्बन्ध कोई भी पहलू ऐसा नहीं बचा जिससे लेकर एक दूसरे को जलील न किया हो। उन विस्मृत घटनाओं का भी उल्लेख विश्लेषण किया गया जिनकी उस प्रसंग में कोई आवश्यकता नहीं थी।

फिर सुरेश ने अमिता से कहा "जब मैं दिल्ली गया था तब तुम्हारे भाई ने मुझ से तमीज से बातचीत भी नहीं की थी और मुझे अकेला छोड़कर बाहर चला गया था, तुम हो तो उसी की बहिन! तमीज तुम में आयेगी कहाँ से?"

अमिता यह सुनकर तड़प उठी। अपने हाथों का झटका देती हुई वह बोली "और मैं तो सारी रात को ही आपके द्वारा अपमानित हुई थी। मैं पूछती हूँ कि आप उस रात देर से क्यों आये थे। शराब में झूमते हुए आपने कितने अभिमान से कहा था कि डार्लिंग मैं मिस योरामन के साथ पार्टी में चला गया था। मिस योरामन बड़ी सुन्दर

की इतनी ही शर्म मैं ज़हर खाकर मर जाऊँगा। तेरी बहू डायन है वह मेरे रक्त की बूँद-बूँद पी जायगी। क्या तुम्हें संसार में दूसरी लड़की नहीं मिली थी जो इस हठी और शैतान को खोजकर लायी। चुप क्यों है? बोलती क्यों नहीं? तुमने मेरी ज़िन्दगी को तबाह कर दिया!"

"आखिर बात क्या है" उसने अनजान बनते हुए कहा। इस समय उसकी मुद्रा नितान्त सहज थी और विस्मय से भौंहें टेढ़ी हो गयी थीं।

"बात क्या हो सकती है। वह रांड है न मुझे ज़िन्दा नहीं रहने देगी। घुला घुलाकर मारेगी! पर मैं अब जल्द दूसरी शादी करूँगा!"

माँ तुरन्त भाँप गयी कि मामला संगीन है। अत उसने अपने आप को बिलकुल अनजान और निर्दोष बना लिया। उसने यह भी स्वीकार किया कि अगर उसके बाप की अंतिम इच्छा का ध्यान न होता तो वह यह रिश्ता कभी नहीं करती। भला अग्रवालों में लड़कियों का कौन-सा अभाव है? यह तो ठहरी मैट्रिक। एम ए बी ए पास भी एक हजार लड़कियाँ मिल जाती हैं। और उसने अमिता को भी भर कर गालियाँ दीं। गालियों के कारण वह अपने बेटे की थोड़ी सहानुभूति प्राप्त कर रही थी। उसका गुस्सा थोड़ा ठंडा पड़ गया और उसने उदास स्वर में कहा "मैं उसके रहते घर नहीं आऊँगा!"

"घर क्यों नहीं आयेगा। घर उस झगड़ालू का नहीं मेरे पति का है। हाँ, तुम उससे बातचीत मत करना।

सास ने वहाँ से लौटकर अमिता को खूब खरी-खरी सुनायी। आज अमिता भी भड़क उठी। कभी घृणा फूट पड़ी और जब सास ने उसे झगड़ालू कहा तब अमिता अपने हाथ का गिलास ज़मीन पर पटककर बोली "झगड़ालू मैं नहीं झगड़ालू है आपका लाड़ला!

मेरे तो सात पीढ़ी में भी कोई झगड़ालू नहीं था।"

"और मेरी चौदह पीढ़ी में भी कोई तीखे बोल बोलने वाला नहीं जन्मा।"

"रहने दे रहने दे। क्या तेरे बाप ने तेरे चाचा को मकान के झगड़े

के लिए नहीं पीटा था ?"—सीधा और सच्चा आक्षेप था। तीर की तरह अमिता के हृदय पर लग गया। उसके मस्तक में तूफ़ान उठ गया हो! पीड़ामय क्रोध था। वह फुफकारती हुई बोली—मेरे बाप न जाने मेरे मामा को पीटा हो पर तुम्हारे पति ने तो अपने भाई को ज़हर देकर मारा ताकि वह सम्पत्ति का बँटवारा न करा सके।"

तीर से भी भयानक ये शब्द अग्नि-बाण बन गये। माँ भारती चीख उठीं—"चुप रह मुँहजली! और वह निश्चल-सी खड़ी हो गईं। उनका स्वर अवरुद्ध हो गया। पाप की छाया से झुर्रियाँ भयानक लगने लगीं।

अमिता दीवार पर नज़रें जमाए खड़ी थी। सास की मुद्रा कितनी भयंकर थी। यह उसने नहीं देखा। वह सिर्फ इतना जानती थी कि उसकी बात ने सास को परास्त कर दिया। सास की बोलती बन्द कर दी है। उसने सहम् से अपनी सास की ओर देखा। उसके अधरों पर अनायास ही कुटिल मुस्कान बिखर गई। उस मुस्कान ने आहुति में घी का काम कर दिया। माँ की मनःस्थिति डाँवाडोल हो चुकी। वह अपना सिर पटककर चिल्ला पड़ी—"दाँत निकालती है वेश्या की तरह! बेशरम बदतमीज़!"

"सच्ची बात कड़वी लगती है।"

वह हवा की तरह अपने कमरे में आ गई।

उसकी माँ भारती पत्थर की तरह खड़ी रही। वह अपने मन की निकृष्ट गालियों को ज़बान तक नहीं ला सकी। उसकी चेतना को उसके ही अन्दर की शक्तियों ने दबा दिया। वह पागल-सी गूँगी-सी तड़प उठी।

थोड़ी देर के बाद वह अमिता के कमरे में गई। अमिता गहरी नींद में सोयी हुई थी। उसे लगा कि यह एकदम ढोंगी है। इतना झगड़ने के बाद ऐसी गहरी नींद! आदमी बेचैनी के मारे सो भी नहीं सकता। वह धीरे बाहर आई।

साँझ का मटमैला आँचल फैल गया। अमिता आज अपने कमरे से नीचे नहीं उतरी। वह अभी तक सोई हुई थी जैसे आज उसके मन का विपुल मन्थन ख़त्म हो गया है। पूरे युगान्त के बाद आज वह सुख की नींद सोई है। वर्षों से उसके थके तन-मन को सच्चा विश्राम मिला हो। मानो आहत भरी भीतरी क्षति की नीरवता प्राप्त हुई हो।

आरती बड़ी देर तक उसकी प्रतीक्षा करती रही। नौकरानी ने साँझ के कार्यक्रम की प्रारम्भिक तैयारी कर दी थी। प्रारम्भिक तैयारियों के पश्चात् अमिता महाराजिन के साथ रसोई में प्रवेश कर जाती थी। खाना स्वयं बनाती थी। पति को गर्म फुलका खिलाना उसका धर्म था चाहे पति रात को बारह बजे ही क्यों न लौटें। इसके विपरीत आरती खाना खाकर सो जाती थी। क्योंकि उसने गृहकार्य में तनिक भी सहयोग नहीं दिया था। आज जब अमिता को नीचे उतरते नहीं देखा तो वह कुछ घबराई, क्योंकि महाराजिन भी नहीं आई थी। एक बार वह फिर ऊपर गई पर अमिता को गहरी नींद में सोया हुआ पाया। उसका मन आशंका से भर गया। कहीं अमिता ने कुछ खा तो नहीं लिया। उसने सहमते सहमते अपने दाएँ हाथ को आगे बढ़ाया और उसकी नाक के आगे रोक दिया—। नाक से गर्म साँस आ रही थी। उसने इतमिनान की साँस ली। नीचे आकर वह बैठ गई। जैसा कि हमेशा अक्सर होता था और साँझ के आगमन के साथ ही यह झगड़ा समाप्त हो जाता था पर आज स्थिति भिन्न थी। अमिता नीचे उतरने का नाम भी नहीं ले रही थी। साँझ का आँचल और गहरा हो गया। घरों के ऊपरी हिस्से धुँधलके में खो-से गए। तब आरती का रहा-सहा धैर्य जाता रहा। वह चूल्हे का ताप ज़रा भी नहीं सह सकी। झल्ला पड़ी। ज्वाला की काँपती परछाइयों मे उसकी आकुलता स्पष्ट झलक रही थी। आख़िर वह बाहर निकली और उसने काँच के गिलास को ज़ोर से पटककर गिरा दिया। गिलास के टूटने की आवाज़ से आँगन गूँज उठा। टुकड़े छोटे-छोटे कण में बिखर गए। किन्तु अमिता नीचे नहीं उतरी। वह आँखें मलती हुई

बाहर आई। लापरवाही से उसने नीचे की ओर देखा और फिर इत्मीनान से कमरे में आकर वापस लेट गई।

आरती का मन नई भावना से प्लावित हो गया।

"आज रंग बदला हुआ है।" उसने मन-ही-मन कहा "हां तो ऐसा रहे। मैं इसका माथा ठीक किए बिना छोड़े ही रहूंगी। आज फैसला होकर रहेगा! जरूर होकर रहेगा।"

वह काम करती रही। सुरेश आया। तब तक उसका सारा शरीर पसीने में भीग गया था। आग के निरन्तर ताप के कारण उसके मुख का रंग तांबे की तरह हो रहा था।

"भाभी अमिता कहां है?" सदा की तरह उसने पूछा। क्षण-भर के लिए वह पत्थरकी प्रतिमा की तरह भूल गया था कि आज का झगड़ा सदा की अपेक्षा बहुत गम्भीर है। फिर उसका मस्तक संकोच से झुक गया। उसने अपने आपको बचाने के हेतु कहा "आज से महाराजिन से खाना परसा लिया करो। मैं उसके हाथ का खा लूंगा।"

वह आज अपने कमरे में नहीं गया। शीघ्र ही कपड़े बदलने लगा। खाना उसने सिर्फ मां के मन को कष्ट न पहुंचे इसलिए थोड़ा-सा खाया। बाद में वह सोने के लिए अपने कमरे में चला गया। वह अभी बिस्तरे पर बैठा ही था कि वह सोचने लगा कि उसे अमिता को सताने में क्या आनन्द मिलता है? हर रोज लड़ता है हर रोज उसे प्रेम करता है। जरूर उसके मन में कुछ विकृति है किसी को सताने में उसे आनन्द की उपलब्धि होती है? बेचारी अमिता! अब उसके बिना मैं रह भी नहीं सकता।

तभी अमिता ने उसके कमरे में प्रवेश किया अमिता के नयन प्रसन्न थे और उसके चेहरे पर सदा की अपेक्षा आज अपूर्व धैर्य व गंभीरता विराज रही थी। एक ऐसा अनोखा आलोक जो मनुष्य के आन्तरिक आनन्द का प्रतीक हो सकता है। वह चुपचाप बैठ गई। उसने धीरे-धीरे कहा—मैं आज तुम्हें स्पष्ट कह दे रही हूं

एक बात।

सुरेश ने प्रश्न भरी दृष्टि से अमिता की ओर देखा।

—मैं यहाँ से जाना चाहती हूँ। मैंने भरपूर प्रयास किया शायद यह प्रयास आपकी ओर से भी हुआ हो किन्तु एक युग के बाद परिणाम यह निकला है कि हम आपस में एक सुखी दम्पति नहीं बन सके। मुझे तुम पसन्द नहीं हो और तुम्हें मैं। कारण है मन की दूरी। मन की दूरी मन से ही भरी जा सकती है। पर हमारे मन की स्थितियाँ ऐसी रहीं कि वे दोनों देश की चहारदीवारी में बन्द हैं और मजबूरी के कारण हँसते रोते हैं दुनियादारी निभाते हैं। अतः अब मैं सदा-सदा के लिए आपको छोड़कर जा रही हूँ। दुःख और सुख के डर से मैं ऐसा असत्य जीवन यापन नहीं कर सकती। इससे अच्छा है कि मैं किसी तरह उस एक क्षण को भी प्राप्त करूँ जो मेरे समस्त नारीत्व सतीत्व को सुख-समीप पहुँचा सके। जीवन बहुत बड़ा है और जीने के रास्ते भी अनेक हैं। पता नहीं इस बन्धन-मुक्ति की भावना और यह असम्य साहस मुझमें आज से क्यों पहले सुहागरात के दिन क्यों नहीं जागा? मुझे चाहिए था कि मैं आपसे अपना सम्बन्ध-विच्छेद अग्नि के महामन्त्रों की साक्षी में सम्पन्न अनुष्ठान के तुरन्त बाद ही कर लेती ताकि मेरे जीवन का एक युग व्यर्थ नहीं होता। खैर जब जागे तभी सवेरा। हाँ मैं आपको विश्वास दिलाती हूँ कि मैं आपकी प्रतिष्ठा पर कोई कीचड़ नहीं उछालूँगी।

सुरेश बैठ गया। उसका ललाट पसीने की बूँदों से चमक उठा।

उसने इतना ही कहा "सुम" तुम यह

—मैं ठीक कहती हूँ। यह बन्धन यह पतीत्व-नारीत्व का सारा व्यर्थ है। व्यर्थ है परिणाम बनकर आत्मा की सभी आशाओं व तृष्णाओं को मारना। आखिर यह सब क्यों किस लिए? आखिर हर कोई सुख चाहता है और सुख दोनों के समन्वय बिना नहीं। सुरेश बाबू! शब्दों मन्त्रों के बन्धनों की सार्थकता ही तभी है जब हमारी आत्माएँ तृप्त हों। मैं अभी जा रही हूँ। आप मुझे सहजता से भुला सकते हैं। शादी भी कर सकते

है क्योंकि मैं भी ऐसा ही निश्चित कदम उठाऊँगी। नमस्ते!"

एक मुस्कान के साथ अमिता धीरे धीरे सीढ़ियाँ उतर गई। सुरेश को लगा पूरे एक युग के अत्याचारों का बदला अमिता ने उससे ले लिया है। उसे पराजय दे दी है। वह दौड़कर बोला "नहीं अमिता नहीं तुम मत जाओ।"

पर अमिता नहीं रुकी। "मैं जाऊँगी आज से तुम्हारा मेरा रिश्ता खत्म।

"पागल न बनो! अमिता! मैं तुम्हारे बिना नहीं रह सकता देखो पति-पत्नि का झगड़ा चलता ही रहता है। तुम तिल का ताड़ न बनाओ।"

"मैं इस जीवन से ऊब चुकी हूँ। मैं यहाँ से जाना चाहती हूँ।

पर मैं तुम्हें जाने नहीं दूँगा। अमिता अमिता लोग क्या कहेंगे तुम्हारी बीवी तुम्हें छोड़कर चली गई। आग लगे। मैं किसी को अपना मुँह दिखाने लायक नहीं रहूँगा।

और मैं भी इस तरह का पीड़ामय जीवन नहीं जी सकती!"

वह भोले बालक की तरह अपना अपराध स्वीकार करके बोला— "पता नहीं मैं तुमसे झगड़ा क्यों करता? दरअसल मैं लज्जित हूँ। मुझे एक बार सिर्फ एक बार! आज मैं डर गया हूँ। अमिता!— वह चुप रहकर बोला—ये झगड़े हमारे जीवन से महत्वपूर्ण नहीं हैं। विराट जीवन के ये छोटे-छोटे बिन्दु हैं जो हम दोनों के होठों में भी घुल जाते हैं मिट जाते हैं।"

और सुरेश ने अमिता के हाथ को मजबूती से पकड़ लिया।

सुधा मुस्करा पड़ी। उसकी समझ में नहीं आया कि यह आदमी किस तरह का है? वह घर को सीढ़ियाँ उतरती हुई सोच रही थी कि देवता के बाद इतनी दीनता क्यों? क्यों? ... यह प्रश्न उसके मन में तूफान की तरह घहराने लगा।

भाभी ने विनीत स्वर में कहा, "आप भीतर चलिए, यहाँ क्यों बैठे हैं ?"

मैंने साइकिल को ताला लगाया और भाभी के पीछे हो लिया। इतनी देर के उपरान्त भाभी पर मेरी पहली बार नजर गयी। मोटी और मैली साड़ी पर बने तरह-तरह के छींटे, एक हाथ में लालटेन और एक हाथ में सातवाँ बच्चा। सूखा-भूखा शरीर और नंगे पाँव। वह मेरे आगे-आगे पाँवों को नाप-नाप कर चल रही थी और मैं कुछ खोया-सा कदम उठा रहा था। भाभी का वह रंग और रूप मेरी आँखों के आगे सहसा नाच उठा। शिवशंकर की शादी में मैं भी सम्मिलित हुआ था। बड़ी धूम धाम से बरात गयी थी। पानी की तरह रुपया खर्च हुआ था। तब मैं और शिवशंकर सहपाठी थे। नौवीं क्लास में पढ़ते थे। उम्र होगी यही तेरह चौदह वर्ष।

चार वर्ष के बाद उसका 'टीका' हुआ था। हम दोनों ने खूब मौज मजे किये थे। दुल्हन को घर ले आये थे। दुल्हन और शिवशंकर की उम्र बराबर ही थी।

तब भाभी नारायणी के अंग-अंग से सौंदर्य टपकता था। मोहल्ले की स्त्रियाँ उसका रूप-दर्शन करने के लिए जमा रहती थीं। हर कुँवारा पणवीर माता से यही प्रार्थना करता था कि ऐसी ही सोवणी-मोवणी बहू उन्हें मिले।

और शिवशंकर भी उस समय आकाश में उड़ता था। बाप की कमाई बहुत ही मुश्किल से चलती है। शिवशंकर पढ़ाई लिखाई छोड़कर भाभी के रंग-रूप में रम गया। परिणाम यह निकला कि बाप ने उसे एक पंसारी की दुकान में काम-काज सीखने के लिए लगा दिया और उसे आश्वासन दिया कि वह जैसे ही इस धंधे में निपुण होगा वैसे ही उसे पंसारी की एक दुकान खुलवा दी जायेगी।

पर विधि की विडम्बना कुछ और ही थी। साल बीतते-बीतते शिवशंकर के पिता जी का हैजे से देहान्त हो गया और वह पहली लड़की

का बाप बना।

तकदीर का पासा पलट गया।

इस दिन मृत्युभोज करने के बाद शिवशंकर को मालूम हुआ कि उसकी बहू के सारे जेवर बिक गये हैं और वह नितान्त गरीब हो गया है। पर उसने हिम्मत नहीं हारी। उसने अपने सेठ से साफ-साफ कह दिया कि वह अब उसका रोजगार खोल दें। रोजगार खुला तीस रुपये। वह उन्हें लाया भी पर जैसा चलन है उसके अनुसार वह पहला रोजगार बहिनों इत्यादि में बाँट दिया गया।

बाप की बरखी के बाद उसकी माँ और बहू में झगड़ा होने लगा। बात-बात पर तू-तू और मैं-मैं। तब पास-पड़ोसियों ने उन्हें अलग घर में बसवा दिया।

मुझे एकदम मौन देखकर भाभी ने पूछा 'क्या सोचने लगे? भीतर आकर चुपचाप ही बैठ गये।

मैंने चौंक कर कहा, 'कुछ सोचने लग गया था भौजाई! और मैंने बात के प्रसंग को बदलते हुए कहा 'आपको मेरी सौगन्ध है। सच-सच बतलाना कि शिवशंकर घर में हैं या नहीं?

हैं। भाभी ने टूटते स्वर में कहा। मेरी दृष्टि भाभी के चेहरे पर जम गयी। भाभी की आँखें धँस गयी थीं। चेहरे की हड्डियाँ उभर कर उसके दुख के प्रति आदर उत्पन्न कर रही थीं। गोरे गालों पर झुर्राई की स्पष्ट गहरे-गहरे दाग चमकने लगे थे। एक बार मैं फिर सोच बैठा यही वह युवती है जिसे मैं कभी पद्मिनी कहता था। मेरा मन वेदना से भर आया।

'उन्हें मेरे पास भेजो।

भाभी भीतर गयी। पहले उसने एक दिया जलाया। शायद वह भीतर जलता रखा नहीं था। बाद में वह लालटेन को एक पीढ़े पर रख गयी। उसका बड़ा लड़का पास बैठा। चार बच्चे बेहाल पड़े हुए थे।

थोड़ी देर में शिवशंकर चोर की तरह शर्म लिये हुए मन से मेरे

पतला। उसके सिर पर छोटे-छोटे केश थे पर चोटी भी-पर बित्तभी थी। शरीर दुबला-पतला था और मूँछें अभी छोटी-छोटी ही थी यद्यपि वह अपने शौक के अनुसार मूँछों के 'कट' को प्रायः बदलता ही रहता है।

वह मेरे पास आ कर बैठ गया।

मैंने उसके चेहरे पर तेज निगाह जमा कर पूछा क्यों रे तेरी सेहत इतनी खराब क्यों हो गयी?

वह चुप रहा।

चुप क्यों है? बोलता क्यों नहीं?

क्या करूँ सेठ हाथ बहुत तंग है।

फिर उधार नहीं लेना था। देनेवाला तो अपने रुपये जरूर मांगेगा। शायद तुम नहीं जानते आदमी एक वक्त तो कमाता है पर ब्याज आठों पहर।

मैं जानता हूँ पर क्या करूँ भाई! तुमसे कुछ छिपा हुआ तो नहीं है। यहाँ हम सबको पूरा खाना भी नहीं पड़ता। पचहत्तर रुपये मिलते हैं। भो माणी! तुम्हीं बताओ मैं क्या करूँ? मैं शर्म के मारे बाहर भी नहीं निकलता। तुम्हारे सामने भी नहीं आता। बड़ी शर्म और झिझक-सी लगती है।

इसलिए ही तो बड़े-बुजुर्गों ने कहा है कि सूदखोर बनने के पहले अपने दिल को पत्थर का कर लो नाते-रिश्तों को भूल जाओ और वसूली के समय सिर्फ वसूली करो चाहे कर्जदार के मुख से निवाला ही क्यों न छीनना पड़े। मैंने एक लम्बी साँस ली और धक धक करती हुई लालटेन की बत्ती पर अपनी दृष्टि जमा कर मैं फिर बोला मैं सम्पूर्ण रूप से ये नीतियाँ नहीं अपना पाया। फलस्वरूप मैं एक सफल सूद-खोर नहीं बन सका। सच बात यह है कि मैं निकट भविष्य में इस धंधे को छोड़ ही दूँगा।

शिवशंकर ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह नीची गर्दन किये हुए बैठा रहा। एकदम मौन और निश्चल। पहले की अपेक्षा उसकी गर्दन

बहुत पतली हो गयी थी।

'तुम कोई दूसरी नौकरी क्यों नहीं करते ?' मैंने फिर कहा।

'बहुत चेष्टा की पर कोई जुगाड़ नहीं बैठा। पिता जी के मरने के बाद मेरी एक इच्छा थी कि मैं अपनी कोई दुकान खोलूँगा। मैं इस व्यापार की रग-रग पहचानने लगा हूँ। बड़ा ही लाभप्रद व्यापार है। आदमी आसानी से चार-पाँच सौ रुपया कमा सकता है।

'फिर तुम दुकान खोलते क्यों नहीं ?' मैंने शब्दों पर दबाव दिया।

'दुकान खोलना हँसी-खेल नहीं। कम से कम एक हजार रुपये चाहिए। मेरे पास एक दुकान का पूरा प्लान है।

वह सभी बात सुन लिया ही उठ कर भीतर गया। मेरा मन उसकी दयनीयता के कारण कुछ उदास हो गया था। लालटेन की भक भक बन्द हो चुकी थी। बाहर अँधेरा और गहरा हो गया था। गली में कुत्तों के दल ने बड़ा शोर-गुल मचाया। लोग उन्हें शान्त करने के लिए और भी जोर से 'हिर्रे हिर्रे' कर रहे थे। थोड़ा देर में कुत्तों का दल समाप्त हो गया। मेरी दृष्टि उसके घर की दीवारों पर गयी। काली और जगह जगह पपड़ी उभरी हुई। मेरा दम घुटने लगा। इच्छा हुई कि यहाँ से चला जाऊँ।

तभी उसके दो बच्चे मेरे पास आकर खड़े हो गए।

देहुँग रूप! फटे-पुराने! गंदे! मैले!

कपड़ों पर जगह जगह थिगलियाँ सी लगीं। कातर दीन मुखों से मुझे निहारने लगे। लोग कहते हैं कि बालक देवता का रूप होते हैं पर मेरा मन उन्हें देखकर घृणा से भर आया। मैंने आँखें तरेर कर उन्हें भीतर जाने का आदेश दिया। आवाज मुँह से इसलिए नहीं निकाली कि उन्हें एकाएक ठेस पहुँच जायेगी। बालक उदास-उदास से लड़खड़ाते से भीतर चले गये। उनकी आँखों में करुणा की अपार कातरता और दीनता थी।

कहाँ फँसा आज!

भीतर से बच्चों के चीखने की आवाज आयी। लगा कि भाभी रसोई बनाने में व्यस्त है। तभी चिथड़ाकर हाथ में कुछ कागज लिये हुए आ गया। वह मेरे सम्मुख इत्मिनान से बैठ गया और उसने लालटेन नीचे फर्श पर रख दी।

बोला "यह मेरी योजना है। एक-एक चीज लिखी हुई है। सच टीटू, मेरा एक बड़ा सपना था कि मैं पंसारीपने का काम सीख कर अपनी एक दूकान खोलूंगा। बापा (पिता) ने यह आश्वासन भी दिया था। उन्होंने कुछ पूंजी भी जमा की थी पर उनकी एकाएक मौत ने मेरे इरादों पर पानी फेर दिया। फिर भी मैंने हिम्मत नहीं हारी। सोचा थोड़े दिनों में कुछ पैसा इकट्ठा करके दूकान खोल लूंगा।" देखो उसने एक कागज निकाला। कागज पुराने बहीखातों का था। शायद दुकानों की कोई पुरानी बही पड़ी होगी। उसने यह कागज दिखाया। उसमें चिड़िया की टांगों की तरह टेढ़े-मेढ़े अक्षरों में लिखा था—पंसार भंडार!

यह मेरी दूकान का नाम होगा! नीचे लिखा था—किराने का सारा सामान सस्ता और बढ़िया ठीक मूल्य पर यहीं मिलता है।

"दूकान मैं कोटगेट पर ही लूंगा क्योंकि शहर का पुराना बाजार एक तरह से उजड़-सा ही गया है। बिक्री-बट्टा बंद-सा ही है। ग्राहक अब वहां नहीं आने लगा है। इसका एक कारण यह भी है कि शरणार्थियों ने आने-जाने सभी को उधार देना शुरू कर दिया है। लोग बड़े दिलवाली और भाग्यवान हैं। कलेजा भी बहुत बड़ा रखते हैं। लोग देते हैं माल! और अचरज की बात यह है कि लोग देर-सवेर उनकी रकम पहुंचा भी देते हैं। सच टीटू, वह सब बहुत रुपया कमाते हैं। मैं तुमसे अपने बच्चों की सौगंध खाकर कहता हूं कि तुम मेरी जरा-सी मदद कर दो तो हम कामीदारी में अच्छा पैसा कमा सकते हैं।"

और तब उसने अपनी संपूर्ण योजना मेरे समक्ष प्रस्तुत कर दी। कितनी बोरियां मैदे की कितनी बोरियां चीनी की और कितनी दाल

थी और वस्तुएँ ! मैं उसकी मासूम योजना देखकर विस्मित रह गया। योजना वास्तव में अच्छी थी।

'कहो तुम्हारी क्या राय है ?' उसने मेरी राय जानने के लिये पूछा।

मैं इस पर जरूर सोचूँगा।

'हाँ-हाँ जरूर सोचना। तुम मेरे बहुत पुराने और पक्के दोस्त हो। मेरी और तुम्हारी दोस्ती बड़ी पोढ़ी है।

मैं कुछ नहीं बोला। मेरी अजीब स्थिति हो गयी। आँखें में आँसू झलकने और रोना आने पड़ गये। मैं उठने को आतुर हुआ तभी उसने मुझे रोक लिया अब भूखे क्यों जाते हो ? खाना तुम्हारी भौजाई ने बना लिया है।

'अभी मैं अभी खाना नहीं खा सकता।

तभी भाभी आ गयी। माने वह कुछ उलाहने भर स्वर में बोली हम गरीबों का खाना इन्हें अच्छा नहीं लगेगा ?

मैंने व्यथा से विवश स्वर में कहा नहीं नहीं भौजाई ऐसा मत कहो मुझे एक-दो जगह हाजिरी करने जाना है। लाचार मैं बैठ गया। पता नहीं। कुछ कि मैंने फिर भाभी को मनाने तक नहीं किया। अब अमन मुझमें कहाँ थी भाभी ने उन सबके लिए एक थाली-सी लगा कर दी थी। पहली और मुझे ! लिखा नहीं बना था इतना खाना। मैं आश्चर्य चकित होकर और मैं विरुद्ध ऐसी थी। मैं चुप चल गया।

भाभी ने हाथ जोड़कर कहा अब लिखना है कि आप हमारी बात पर जरूर ध्यान देंगे। यह ईमानदारी से व्यापार मैं चलेंगे। आपके आशीर्वाद में ये दुकान दूर-दूर तक भी जायेगी तो कोई हर्ज नहीं होगा पर इन दूरों में हमारा पेट जरूर भर जायेगा।

'आप भरोसा रखें मैं इस छोटी मोटी दुकान खुलवा दूँगा। मेरे मुख से उनकी लिखी हुई बात से प्रभावित न चाहते हुए भी यह वाक्य निकल गया। पर मेरी धारणा के विरुद्ध उसकी गरीबी का विजय थी। मैं वहाँ से बाहर निकल गया।

एकाएक भाभी को उल्टी हुई। वह नाली के पास बैठ कर कै करने लगी। मैं जूते खोलकर उसके पास खड़ा हो गया। उबकियाँ उसे बड़े भयानक ढंग से आ रही थीं। लगता था कि उसका कलेजा बाहर आ जायेगा। प्रियंकर उसकी पीठ पर हाथ फेर रहा था।

मैंने पूछा, 'क्या हुआ भाभी को एकाएक?'

भाभी जल्दी जल्दी कुल्ले करके भीतर भाग गयी। जाते-जाते उसके पीड़ित चेहरे पर मैंने लज्जा के भाव देखे।

'क्या बात है प्रियंकर?' मैंने उससे दुबारा पूछा।

वह संकोच से सकुचाता हुआ बोला, 'जब इसके पेट में बच्चा होता है तो यह बेचारी पानी का घूँट भी नहीं भरती। इसी तरह की उल्टियाँ इसे होती रहती हैं।'

'लेकिन...?' मैं विस्मय से स्थिर का स्थिर रह गया।

'क्या करूँ? ईश्वर की सारी मेहरबानी मुझ पर ही है।'

'फिर तुम्हें ऑपरेशन करवा लेना चाहिए।'

'हर बार सोचता हूँ पर झंझटों के मारे दम मारने की भी फुरसत नहीं मिलती है। तुम कुछ घर का धंधा करवा दो तो जीवन को भी व्यवस्थित करूँ? अभी तो दिमाग भी सही ढंग से काम नहीं करता। बस तुमसे हाथ जोड़कर विनती करता हूँ कि मेरा सपना पूरा कर दो। तुम्हारे बच्चों की सौगंध है कि मैं तुम्हें हर महीने अच्छी रकम वापस की दूँगा।' मैंने देखा कि उसकी आँखें गीली हो गयी हैं। करुणा ने उसकी आकृति को अपने में आवृत्त कर लिया है।

इसके बाद वह हर दूसरे-तीसरे दिन मेरे पास आने लगा। मैं उसे टालता रहा। कभी मैं कहता कि विचार कर रहा हूँ, कभी कहता कि पिता जी से पूछूँगा और कभी चुप। वस्तुतः उसकी गरीबी के कारण मुझे उसकी ईमानदारी पर शक हो गया था और मैं बार-बार इसी दृष्टि से सोचता था कि अगर घाटा हो गया तो मैं किससे लूँगा? और मैंने अंत में उससे साफ इन्कार कर देने का निश्चय कर लिया।

यह घटना दो माह बाद की है।

वह रात को अपनी ड्यूटी से लौटा था। मैं खाना खा कर रेडियो सुन रहा था। थका थका-सा था। आँखें भारी भारी थीं। तभी शिव चंदर ने प्रवेश किया। उसका आगमन मुझे अच्छा नहीं लगा। मैंने उसे बैठने तक को भी नहीं कहा फिर भी वह बैठ गया और कुछ देर तक चुपचाप रहा। वह मेरे समर्थन की प्रतीक्षा में था पर मैं धनिष्टता की सीमा को ही लाँघ गया। कुछ भी नहीं बोला। मैं मुँह फुलाये रहा। सोचता रहा कैसा भूत मैंने अपने पीछे लगा लिया है।

वह ठिठकता हुआ बोला 'क्या तबीयत कुछ खराब है।'

मैंने डूबते हुए स्वर में कहा 'हाँ सिर में दर्द है।' हालाँकि सत्य यह था कि हल्की-हल्की थकान थी।

'बाजार से एनासिन ला दूँ?'

'कोई जरूरत नहीं। मुझे आराम की जरूरत है।'

'फिर मैं कब आऊँ?'

'सुबह!'

वह चला गया और सुबह फिर आया। मैं पूजा कर रहा था। किसी पंडित ने मुझसे शिव जी के पूजन के बारे में कहा था। सो मैं नियमित रूप से उनका पूजन करता था। सुबह-सुबह उस दरिद्र को देखकर मेरा मन खट्टा पड़ा पर मैं अपने मन के आवेग-आवेश को दबा कर बोला 'मैंने पिताजी से बातचीत कर ली है। वह कुछ नाराज होते हुए बोले कि उस मास्टर के मामले में टांग अड़ाकर क्या अपना दिवाला निकालना है। घाटा लग गया तो कौन भरेगा? पचास ले गया था वह तो उसके देने को नहीं है।' 'अब तुम्हीं कहो चंदर मैं क्या कर सकता हूँ? व्यापार के क्षेत्र को छोड़ा नहीं जा सकता। कहीं घाटा लग गया तो हमारी रोज खाने तक भी बंद हो जायेगी। फिर मैं पिता जी के खिलाफ कोई काम नहीं करना चाहता।'

मेरी बातें सुनते ही उसका मुँह सफेद हो गया और उसकी आँखों

में निराशा की बहुत गहरी परछाइयाँ तैर उठीं। उसके होंठ भी एक अजीब-सी चमक से दीप्त हो गये। वह क्षण भर मुझे दूर से जलती हुई तीखी नजर से देखता रहा और अन्त में बिना कुछ बोले ही चुपचाप चला गया। उसके चेहरे का विकार भयावह और वीभत्स था।

सांझ होते ही वह मेरे घर आया। उसके हाथ में पचास रुपये थे। मुझे उन रुपयों को देते हुए वह एकदम कृत्रिम हँसी के साथ बोला 'आज मेरा सेठ बहुत खुश है। उसने मुझे पचास रुपये माँगने के साथ दे दिये। मैं चाहूँगा कि इन्हें तुम वापस ले कर मेरी ईमानदारी पर हुए शक को दूर कर दो।

मुझे इस प्रतिक्रिया की आशा ही नहीं थी। डूबी हुई रकम के मिलने की प्रसन्नता एक सूदखोर को जितनी हो सकती है वह बात किसी से छिपी हुई नहीं है। मेरी आँखों में चमक आ गयी। मैंने लपक के उन रुपयों को ले लिया और गिनने लगा।

'टीकू तक किसी की दुकान बिक रही है। बड़ी मौके की दुकान है। आज चलकर सौदा तय कर लो।

'मैं तीन बजे के करीब आऊँगा।

'मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा' वह उत्साह से बोला।

'मैं जरूर आऊँगा। तुम चिन्ता न करो।' मैंने उत्साह के साथ कहा। पर मैं उधर नहीं गया। इस आकस्मिक उपलब्धि के बाद मैंने तय कर लिया कि अब मैं उसे एक पैसा भी नहीं दूँगा। यही कारण था कि मैं फिर उससे नजरें बचाता रहा। इस तरह कई दिन बीत गये। शिवशंकर ने अब मेरे यहाँ आना-जाना भी छोड़ दिया था।

किन्तु एक दिन अकस्मात मैंने सड़क पर हथकड़ियों में जकड़े हुए शिवशंकर को देखा। मेरी मनःस्थिति विचलित हो गयी। मैंने उसकी ओर ताका नहीं और सीधा गणेश के पास गया। गणेश मेरा और उसका दोनों का मित्र था।

मैंने उससे पूछा 'अरे गणेश शिवशंकर को हथकड़ियाँ क्यों डाली

जाती है?

"चोरी के अपराध में"

"किसके यहाँ चोरी की?"

"अपने सेठ के यहाँ। पूरे पाँच हजार की। अचरज की बात यह है कि पूरी तरह से मार खाने के बाद भी रकम नहीं दे रहा है। कहता है कि मैंने रकम खर्च कर दी। कहो, हालात इंसान को कितना बदल देते हैं? मुझे मालूम है कि यह शख्स इतना ईमानदार था कि घर के बर्तन बेचकर अपनी मालकिन को पुरा दिन पहले पचास रुपया चुकाकर आया था और आज ...? करोड़ पश्चाताप में डूब गया। वह विचलित स्वर में बोला "इधर वह बहुत दुखी था। आखिर इंसान कर भी तो क्या? दुख की भी एक सीमा होती है। आदमी हार जाता है परेशान हो जाता है।

मैंने रवाना होने का उपक्रम करते हुए कहा "भाई किसी को यह पता नहीं है कि कल क्या होनेवाला है? ईश्वर को पुकारो वही सक्षम है।

मैं अपने मन को वापस तन्दुरुस्त बनाने की चेष्टा करता हुआ साइकिल पर चढ़ गया।



मनमोहिनी

दिनांक ३१ १० ५८ को रात्रि के ठीक ११ बज कर ४१ मिनटों पर मित्र का चिर-सम्बोधन लिए मिसेज तथाकथित आलोचिका मनमोहिनी का देहान्त हो गया था। क्षमा करिए, देहान्त शब्द का प्रयोग गलत कर लिया है। सुधारता हूँ—आत्महत्या कर ली थी। कारण अज्ञात क्योंकि उसने अपने पीछे किसी तरह का कोई खत नहीं छोड़ा था। सिर्फ सुबह सबेरा होने पर पड़ोसी लोगों ने आकर देखा तो उसकी लाश एक सन्दूक से सटी पड़ी थी। कपड़े अस्त-व्यस्त थे उससे ऐसा लगता था कि प्राण निकलने के पहले वह बहुत तड़पी थी। उसका दम बड़ी मुश्किल से निकला था। पड़ोसियों के द्वारा पुलिस को खबर कर दी गई थी। पुलिस ने लाश को पोस्टमार्टम के लिए अस्पताल भेज दिया। पुलिस ने उसके कमरे को भी अपने कब्ज़े में कर लिया था। उसके तीसरे दिन ही उसकी एक खास मायमी (सखी) का मेरे पास खत आया। उस खत में उसने कुछ रहस्यों का उद्घाटन करते हुए मुझे लिखा था— 'यह मनमोहिनी के राज़ की बातें मैं तुम्हें बता रही हूँ। तुम इसे एक वर्ष के बाद प्रकट करना यह उसकी अन्तिम ख्वाहिश थी।"

उसकी अन्तिम ख्वाहिश को अब पूरा किया जा रहा है।

मृतक की अन्तिम इच्छा को पूरा करने का हमारा एक तरह का मानवीय कर्तव्य हो जाता है। क्योंकि खूनी व हत्यारों की अन्तिम इच्छा को पूरा किया जाता है। फिर हमारी आलोचिका ने किसी का खून नहीं किया ऐसा मेरा ख्याल है। पर उसकी आत्मा शायद मुझसे सहमत नहीं है। उसका कहना है उसने एक परिवार का खून किया है वह भी ऐसे तरह का खून कि आदमी मर भी जाए और चलता फिरता रहे। तुम नहीं जानते कि उसकी मौत का कारण उन नन्हे-नन्हे मासूम बच्चों की बद्दुआएँ हैं। उस भोली पत्नी के दर्द का असर है जो घूंघट में अपने आँसुओं को छुपा कर अपने पति के जुल्म को मनमोहिनी के कारण सहती रही थी।" कुछ भी हो उसकी आत्मा मैं आज आपके समक्ष पेश कर रहा हूँ।

मेरा विश्वास है कि आप सब उस तथाकथित विषकुमारी के किस्से में दिलचस्पी जरूर लेंगे। क्योंकि हम कितने आदर्श की बातें भले ही करें पर छुप छुप कर तोता-मैना के किस्से जरूर पढ़ते हैं और उनमें बड़ी मस्ती लेते हैं। हमारी दिवंगत आलोचिका भी तोता-मैना के किस्से और फिल्मी बातें खूब सुनाया करती थी। लीजिए दास्तान ए मुहब्बत यानि मनमोहिनी का पहला दौर प्रस्तुत है।

बचपन का किस्सा मैं नहीं जानता और न ही मैंने जानने की कोशिश की। सिर्फ मनमोहिनी अक्सर उदास और गमगीन मूड में कहा करती थी कि मेरे बाप की निजी ख्वाहिश थी कि मैं पढ़-लिखकर एक सद्गृहस्थ पत्नी बनूं। अपने और अपने पति के कुल के नाम को रोशन करूँ और उनकी इज्जत आबरू को बढ़ाऊँ। पर जैसे ही वह बी० ए० में पहुँची वैसे ही उसने अपने बाप की तमन्ना का खून कर दिया। कारण जवानी मादक घोड़ी को वह लगाम नहीं लगा सकी। और उसने एक परचून के व्यापारी के बेटे को अपना दिल दे दिया। "शायर साहब गालिब साहब ने ठीक कहा है 'इश्क पर जोर नहीं है यह आतिश गालिब

दास्तान-ए-मुहब्बत यानी मनमोहिनी का दूसरा दौर शुरू—

सोहिनी ने इस बार एक भावुक कवि को दिल दिया। यह कवि वास्तव में उसे सच्चे दिल से प्यार करता था। उसके भावना-लोक में इस खूबसूरत और चुलबुली-चंचली युवती के लिए 'हेमन' से कम महत्व नहीं था। कवि उसे अपनी पलकों में बसा कर स्वप्नों के संसार में खोया रहता था। वह उसे अपने सम्मुख बिठा कर कविता रचता था। दूर दूर कैसी प्रकृति की सुरम्य पहाड़ी घाटियों में वे दोनों किलकारियाँ मारते हुए भागते थे और आकाश के पार एक नये संसार को बसाने की योजना बनाते थे।

कवि परम प्रसन्न था। उस बेचारे के जीवन में पहली युवती आई थी जिसने उसे प्यार किया था। हालांकि वह कई बार मुहब्बत के दौर में हार खा चुका था पर इस बार उम्मीद से अधिक उसे सफलता मिल रही थी। वह उसके यौवन के बाग में अपनी कविता-कामिनी को सज धज अंगड़ाइयाँ दिखाता था और उसकी आकर्षणहीन अँखियों में प्यार का सागर लहराता हुआ देखता था।

वह सोहिनी को प्रसन्न रखने के लिए अपनी पुस्तकें तक बेच कर उसे सिनेमा दिखलाता था। उसे तफरीह कराता था। उसे और उसकी सखियों को पिकनिकें देता था। लेकिन सोहिनी के नखरे व फरमाइशें वह अधिक दिन तक पूरी नहीं कर सका। लाचारी में कवि उससे बहाने बनाने लगा और सोहिनी को उस पर झुंझलाहट आने लगी। उसका दिल उसके झूठे बहानों से ऊबने लगा।

"यह कैसा प्रेमी है! न यह अच्छे होटल में खाना खिला सकता और न यह बॉक्स में सिनेमा दिखा सकता है?" वह उससे नाराज रहने लगी।

कवि उसकी नाराजगी पर फिल्म के हीरो की तरह हँस देता था और एक दिन—

"मिस्टर एक्स" फिल्म लगा हुआ था। सोहिनी कवि के पास आई।

कवि किसी वृक्ष के नीचे बैठा हुआ कविता की साधना में निमग्न था। तभी सोहिनी ने उसके ध्यान को भंग किया। कवि चौंक कर बोला "हे मेरी प्राणप्यारी आँखों की दुलारी जग से न्यारी मैं तेरी ही प्रतीक्षा में व्याकुल था। सुनो—ध्यान देकर सुनो—मैंने कितना उच्चकोटि का गीत लिखा है।

सोहिनी कुछ बोले इसके पहले कवि ने गीत सुनाना शुरू कर दिया—

हे सुमुखि तेरा रूप सलोना
वह चन्दा-सूरज से दोना
तेरा यौवन सागर का ज्वार
लहर-लहर में मचले मम प्यार
तू विरहे ही मत कहना है
बहने लगे दामिनी का सोता
हे सुमुखि तेरा रूप सलोना।

सोहिनी गीत सुन कर चिढ़ गई। वह आलोचना करती हुई बोली, "न छन्द और न भाव। मैं पूछती हूँ कि सोता (झरना) को हिन्दी में बैठाने से क्या लाभ? ऐसी कवि मैं तुम्हारे विरोध में कभी लेख लिख दूँगी।" यहीं से उसका नया रूप प्रकट हुआ आलोचिका का।

कवि उछल पड़ा "अरे ज़ालिम! तू मेरी कविता तथा मेरे हृदय की भावनाओं की आलोचना करे तो भी मैं कुछ नहीं बोलूँगा। तू अपने तीर तो चला।

"बकवास बन्द करो।" वह भड़क उठी। कवि सहम गया। टुकुर टुकुर करुण भरी निगाह से वह सोहिनी को देखने लगा।

सोहिनी थोड़ी पत्थर की तरह … के साथ बोली "तुम्हें आज मेरी आज्ञा माननी ही पड़ेगी।

उसका इतना कहना था कि कवि ने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया। सोहिनी का हाथ पसीजा था। शायद उसमें सारी ऐसी कोमलता नहीं थी। फिर भी कवि ने उस पर अपना हाथ फेर कर

दास्तान-ए-मुहब्बत आफ सम्मोहिनी का दूसरा दौर शुरू—

सोहिनी ने इस बार एक भावुक कवि को दिल दिया। यह कवि वास्तव में उसे सच्चे दिल से प्यार करता था। उसके आत्मा-लोक में इस खूबसूरत और दुबली-पतली युवती के लिए 'हेलन' से कम महत्व नहीं था। कवि उसे अपनी पलकों में बसा कर स्वप्नों के संसार में खोया रहता था। वह उसे अपने सम्मुख बिठा कर कविता करता था। दूर दूर फैली प्रकृति की सुरम्य पहाड़ी घाटियों में वे दोनों किलकारियाँ मारते हुए भागते व और आकाश के पार एक नये संसार को बसाने की योजना बनाते थे।

कवि परम प्रसन्न था। उस बेचारे के जीवन में पहली युवती आई थी जिसने उसे प्यार किया था। हालांकि वह कई बार मुहब्बत के दौर में हार खा चुका था पर इस बार उम्मीद से अधिक उसे सफलता मिल रही थी। वह उसके यौवन के साए में अपनी कविता-कामिनी को नव नव अंगड़ाइयाँ लिवाता था और उसकी आकर्षणहीन अंखियों में प्यार का सागर लहराता हुआ देखता था।

वह सोहिनी को प्रसन्न रखने के लिए अपनी पुस्तकें तक बेच कर उसे सिनेमा दिखलाता था। उसे तफरीह कराता था। उसे और उसकी सखियों को पिकनिकें देता था। लेकिन सोहिनी के नखरे व फरमाइशें वह अधिक दिन तक पूरी नहीं कर सका। लाचारी में कवि इससे बहाने बनाने लगा और सोहिनी को उस पर झुंझलाहट आने लगी। उसका दिल उसके झूठे बहानों से ऊबने लगा।

'यह कैसा प्रेमी है! न यह अच्छे होटल में चाय पिला सकता और न यह बॉक्स में सिनेमा दिखा सकता?" वह उससे नाराज रहने लगी।

कवि उसकी नाराजगी पर फ़िल्म के हँसोड़े की तरह हँस देता था और एक दिन—

'मिस्टर एक्स' फ़िल्म लगा हुआ था। सोहिनी कवि के पास आई।

कवि किसी वृक्ष के नीचे बैठा हुआ कविता की साधना में निमग्न था। तभी मोहिनी ने उसके ध्यान को भंग किया। कवि चौंक कर बोला, 'हे मेरी प्राणप्यारी कोकिलों की दुलारी वन की रूपसी मैं तेरी ही प्रतीक्षा में व्याकुल था। सुनो—ध्यान देकर सुनो—मैंने कितना उत्कृष्ट गीत लिखा है।

मोहिनी कुछ बोले उसके पहले कवि ने गीत सुनाना शुरू कर दिया—

हे कुसुमित तेरा रूप सलोना
वह चन्द्र-मुख से सोना
तेरा यौवन सागर का ज्वार
लहर-लहर में मचले मम प्यार
तू विहँस उठा मन कहता है
बहने लगे रागिनी का सोता
हे कुसुमित तेरा रूप सलोना।

मोहिनी गीत सुन कर चिढ़ गई। वह सकपकाते हुए बोली "न एक पौर न पाया। मैं पूछती हूँ कि सोना (भाषा) को हिन्दी में बनाने से क्या लाभ? देखो कवि मैं तुम्हारे विराम में कब का लिख चुकी थी।" यहीं से उनका नया रूप प्रकट हुआ वास्तविकता का।

कवि तड़प उठा 'अरे जालिम! तू मेरी कविता क्या मेरे हृदय की भावनाओं की अवहेलना कर तो भी मैं कुछ नहीं मानूँगा। तू अपने और तो बना।

"बकवास बन्द करो।" वह भड़क उठी। कवि सहम गया। टुकुर टुकुर मन भरी निगाह से वह मोहिनी को देखता रहा।

मोहिनी कोकी पत्थर की तरह दहकते के साथ बोली 'तुम्हें मेरी बात माननी ही पड़ेगी।"

उसका इतना कहना था कि कवि ने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया। मोहिनी का हाथ मखमल सा था। मानव उसमें नारी जैसी कोमलता नहीं थी। फिर भी कवि ने उस पर अपना हाथ फेर कर कहा

तुम्हारे हाथ जिनमें संगमरमर की तरह हैं। जी चाहता है कि तुम्हारे अंग-अंग पर एक 'शरीर चालीसा' लिख दूं। यह रंग यह रूप सबसे अलग सबसे प्रिय।"

सोहिनी शर्मा गई। वैसे आम तौर से जब कोई युवती शर्माती है तो वह और सुन्दर लगती है लेकिन सोहिनी का चेहरा शर्माने पर और भी बुरा लगता है। उसके फैले हुए मोटे-मोटे होंठ जब मुस्कान के कारण फैले तो उपमा से परे हो गए। कोई माकूल उपमा उनके लिये नहीं थी।

कवि ने भावुकता से कहा "एक दिन मेरे एक दोस्त ने कहा कि ऐसी भूतनी छोरी से क्यों प्यार करते हो? यह छोरी तो उसके लिये है जिसको कोई दूसरी छोरी न मिले। तुमने सोहिनी में क्या पाया?" जानती हो सोहिनी मैंने उसे क्या जवाब दिया! वही जवाब दिया जो मजनू ने लैला के बारे में दिया था। मैंने उससे कहा 'बरखुरदार उसे तू मेरी आँखों से देख।' बस वह चुप हो गया। नजाकत और नफ़ासत के परे तुममें जो प्यार है वह बहुत कम युवतियों में पाया जाता है।

कवि और भावुक हो गया। अनन्य आराध्य की मात्र भरी दृष्टि फेंक कर वह बोला 'मैं रूप से अधिक गुण को महत्व देता हूँ। तुम्हारी आत्मा बहुत उजली है। सफेद परों वाले कबूतर से एक दम गोरी। और तुम जानती ही हो कि मुझे कविता लिखने की प्रेरणा देने वाला मित्र चाहिए। मेरी यही इच्छा रहती है कि जाम की प्याली हाथ में हो तुम मेरे पास हो। मैं तुम्हें अपनी गोद में बिठाए 'खैयाम' की तरह रुबाइयाँ लिखूं।

सचमुच सोहिनी कवि की अंक-शायिनी हो गई। थोड़ी देर कवि की गर्दन घड़ी के पैंडुलम की तरह हिलती रही। बाद में उसने आँखें भी बन्द कर लीं। तब सोहिनी उसको प्यार करती हुई बोली "मैं यह भली भाँति जानती हूँ कि तुम मुझे दिल से प्यार करते हो। लेकिन डियर केवल प्यार में मजा नहीं। प्यार के साथ पैसा भी जरूरी है।"

"क्या कहती हो मोहिनी ? प्यार के बीच पैसों को मत लाओ। प्यार पैसों से दूषित हो जाता है।" कवि ने गम्भीरता से कहा।

"अच्छा अच्छा" उसने अपनी बाँहें उसके गले में डाल कर कहा "आज तुम्हें मेरा कहना मानना ही पड़ेगा। देखो इन्कार न करना। वायदा करो।

क्या ?

"आज मुझे और मेरी एक सहेली को सिनेमा दिखा दो।"

कौन-सा ?

"मिस्टर गवन।"

"यह तो बहुत ही रद्दी फिल्म है। एकदम बकवास।" कवि ने नाक भौं सिकोड़ कर पुनः कहा—"कितना अश्लील गीत है—गोरे-गोरे गालों पे ।"

"यह गाना इसमें नहीं है। इसमें तो एक बहुत ही अच्छा रॉक एन रोल का गाना है—'जान जान जान'।" मोहिनी ने बड़ी दिलचस्पी के साथ मटक कर कहा "ऐसी मजेदार फिल्म को देखने से सिर का दर्द मिट जाता है। मैं तो ऐसी ही फिल्म देखना पसन्द करती हूँ।"

कवि इन्कार नहीं कर सका। मोहिनी की कठोर बातों के बन्धन में कवि बँध गया। थोड़ी सी शर्त थी कि अगर वह किसी अपनी माँ को भी उसमें साथ लेगी तो यह भी सहन नहीं हो सकता था। यह भी तय हुआ कि वह सिनेमा हाल में ऐसा जायगा ताकि कमीने-सार मोहिनी कवि का हाथ प्यार से दबा सके।

लेकिन दूसरे दिन कवि महोदय पैसों का प्रबन्ध नहीं कर सके। कई दोस्तों के पास गए। दोस्तों ने सीधा उत्तर दे दिया। वह अपने एक सम्पादक के यहाँ भी गया उसने भी ऐसा ही उत्तर दे दिया कि आज कल वह बड़ी तंगी में है।

फिर क्या करे ? आखिर आज एक कबाड़ी के पास गया। उसे अपना टेबल-लैम्प बेचा। लेकिन इन रुपयों के टेबल-लैम्प के सौ रुपए मिले।

सोहिनी का मुँह उतर गया। उसके हृदय के मर्म को उसका वार समझ गया और उसकी आँखें भी भर आईं।

इसके बाद सोहिनी ने मन-ही-मन कुँवारी रहने का तय कर लिया। उसने सोचा—"यह दुष्ट मर्दों के बच्चों की ओर देखेगी तक नहीं। यह पुस्तकों को ढोकर पालेगी।" तब उसने एक स्कूल में नौकरी कर ली। वह स्कूल में नियमित रूप से जाती थी। वहाँ अन्य मास्टरनियों के पतियों और प्रेमियों को देखकर उसका मन हाहाकार कर उठता था। वह उन्मादित-सी होकर रात-रात भर छत पर घूमा करती थी। न चाहते हुए भी बरबस उसका ध्यान राहगीरों पर जमा जाता था और वह राहगीर की उपेक्षित नजर नहीं सह सकती थी। वह भीतर भीतर जल जाती थी। और जब उसकी सहेली उसे अपनी बाहों में लेकर कहती "मेरा महबूब मुझे इस तरह चूमता है मुहब्बत करता है कहता है बस्स है तो मुहब्बत में तो बेचारी सोहिनी का मुख करुणा से भर जाता था। स्वप्न में वह चौंक-चौंक जाती थी। वह करे तो क्या? करवटों पर करवटें। रात गुजर जाती थी और दिन निकल आता था।

आखिर उसने अपनी प्रतिज्ञा में संशोधन किया। उसने यह सोचा मैंने विवाह न करने की प्रतिज्ञा की थी पर मैं प्यार तो कर सकती हूँ। लेकिन मुझे प्यार कौन करेगा।

तब वह प्रेमी की टोह में निकलती और निराश होकर वापस आ जाती। वह अपनी सहेलियों के मित्रों में आती-जाती पर वहाँ भी उसे निराशा ही मिलती। जब किसी के नजदीक जाती तो बदकिस्मती उसके सामने नंगी होकर खड़ी हो जाती और उसके दामन में नाकाम मुहब्बत के दाग चमक उठते और लोग उससे दूर हो जाते। कभी-कभी वक्त-बेवक्त उसकी पुरानी दास्तान-ए-मुहब्बत उसके कानों में पड़ती तो तब वह केवल रो पड़ती थी और हीनता से वह उस रास्ते से कई दिन तक नहीं गुजरती थी।

सुना है कोशिश करने पर खुदा भी मिल जाता है। तब सोहिनी

को प्रेमी न मिले यह कैसे हो सकता है। इस बार मोहिनी को एक प्रेमी मिले पत्रकार माने मदनलालगोयल। पत्रकार एक साप्ताहिक पत्र निकालते थे और काफी मुखर भी थे—सगरे बगरे। सरकारी विभागों व मन्त्रालयों से जैसे-तैसे उनका अखबार निकलता था। उस वक्त भी इसलिए चहान मोहिनी को पाकर धन्य धन्य हो उठे। पहले-पहले व चुपके-चुपके ही मिलते थे। लेकिन प्यार कभी छिपता नहीं। वह प्रकट हो गया। तब मोहिनी ने अपने सारे परिचितों से साफ कह दिया "ये मेरे एक अच्छे दोस्त हैं। मैं उनसे ज्ञान-दान लेती हूँ।"

जब कोई उसके प्रेमी गुप्ता जी की आलोचना करते तो वह बिगड़ कर कहती थी "आप लाख कोशिश करें लेकिन आप मुझ में और गुप्ता जी के बीच कभी भी दरार नहीं डाल सकते। हम एक-दूसरे को खूब समझते हैं।"

प्यार बढ़ता ही गया।

पहले वाचिक और बाद में कायिक।

एक दिन मोहिनी ने घबराकर कहा "मैं माँ [illegible]?"

गुप्ता जी के नीचे की जमीन खिसक गई। घबराकर बोले "क्या कहती हो?"

"ठीक कहती हूँ। हजार बार कहा आत्मा का प्यार करो।"

"लेकिन मैं यह समझता था कि जिस स्त्री में पुरुषत्व अधिक होता है उसे इसका खतरा कम ही रहता है।"

मोहिनी बोल पड़ी "बन्द करो अपनी बकवास को। मैं कहती हूँ कि कोई इलाज करो कोई उपाय करो कोई एबॉर्शन करो!"

गुप्ता जी तो एक साहसहीन मन आदमी थे। उनसे सहयोग लिया गया और बच्चा गिरा भी दिया गया।

प्यार खत्म नहीं बाहर को उधर चर्चाओं में बैठा। बदनामी के कारण मोहिनी को नौकरी से निकाल दिया गया। मैं बात मोहिनी का जिक्र तो भी ऐसा हूँ—पर वह गुमसुम-गुमसुम गुप्ता जी की प्रेमिका

बन गई। वाह रे कुंठित जी उन्होंने भी हक निभाया तो रहे दिन से। उन्होंने उसे संपादिका बना दिया। मोहिनी का मुख्य काम था सब व्यवहार करना। पुस्तकों की समालोचनाएँ करना। आलोचना के छिपने लेख लिखना।

कुंठित जी उसमें तल्लीन होते गए। वे उसके प्यार में इतने तन्मय हुए कि वे सारी की सारी तनख्वाह मोहिनी की फरमाइशों को पूरा करने में लगा देते थे। धीरे धीरे उनका परिवार अभाव-ग्रस्त होता गया। जब अभाव की एक सीमा आई तब उनकी बीवी अपना हक मांग बैठी। अधिकार को लेकर कुंठित जी व उनकी बीवी में झगड़ा होने लगा और गुस्से में कुंठित जी तीन-तीन दिन घर नहीं आते थे। इस बीच मानवता पर लेख लिखने वाली मोहिनी कुंठित जी के साथ गुलछर्रे उड़ाती थी। जब उनकी बीवी उनके मित्रों से कहती पर कुंठित जी की दीवानगी पर किसी की बात का कोई असर नहीं हुआ। वे मोहिनी की ओर बढ़ते ही गए।

कई बार उनकी बीवी मोहिनी के पास आई। उससे अपने बच्चों के भविष्य और अपने सुहाग के सुख की भीख मांगी पर मोहिनी ने पत्थर की तरह कह दिया "मेरा उनसे कोई सम्बन्ध नहीं है। हम दोनों मित्र हैं। पत्र को अच्छा बनाने में लगे हैं।

कुंठित जी को मोहिनी से बड़े फायदे रहे। वह अखबार की तरक्की बढ़ाने के लिए खूब प्रयास करती थी। मोहिनी बड़े प्यार से परिचितों को लिखती "अखबार की हालत खराब है आप इसके बीस ग्राहक बना दीजिए। आपकी कहानी इस अंक में छप रही है आर्थिक हालत बहुत खराब होने की वजह से मैं आपको प्रस्तुत अंक की वी पी भेज रही हूँ। भाई साहिब मुझे उम्मीद है कि आप इसे छुड़ा कर अनुगृहीत करेंगे।

इसके साथ ही साथ बड़े-बड़े गीतकार—कलाकार साहित्यकार की वह तन और मन से आवभगत करती थी और उनसे आपसी 'धन' के रूप

में लेती थी।   'मतलब यह है कि सोहिनी के आगमन पर कुंठित जी को साथ-ही साथ सीखें।

लेकिन कुंठित जी के एक चचेरा भाई था। वह बड़े शहर में रहता था। और बहुत ही उच्चकोटि का साहित्यकार था। जब उसे इस अस्वस्थ प्रेम का पता चला तथा अपने भतीजों की दुर्दशा का हाल मालूम हुआ तो वह आया और उसने सोहिनी को समझाया। उसकी लम्बी व तीखी बातों से उच्छृंखल की दीवानी सोहिनी का तीव्रा-एन्टिन जल्दी हो गया और उसने गुस्से में उसका अपमान भी कर दिया। इससे उनके चचेरे भाई ने उसे कुछ कड़वी बातें सुना दीं। सोहिनी की आँखों में बदले की भावना चमक उठी और उसने चुपचाप उनके चचेरे भाई की पुस्तकों की कटुतम आलोचना लिखी और कुंठित जी को बिना पढ़े उनके ही अखबार में छाप दी।

फिर क्या था? इस दीवानी दिवास्वप्न से कुंठित-बीबी का दिमाग गर्म हो गया। वह नीचे उतर आई। सोहिनी सिगरेट का भोलापार धुआँ छोड़ती हुई कुछ लिख रही थी। उसने रोज़ रूप आखिरी कुंठित बीबी को जैसे ही देखा वैसे ही सिगरेट बुझाकर वह सावधान हो गई।

कुंठित-बीबी ने उसके सामने अखबार फेंक कर कहा तुम अपने आपको क्या समझती हो? यह अखबार मेरे देवर का कुछ नहीं बिगाड़ सकता। पर तुमने उनके पात्रों को अस्वाभाविक बताया व उनके बारे में तुम्हें कुछ कहना चाहती हूँ। पहले मुझे तुम इतना बताओ तुमने जिन्दगी और उसके लोगों का कितना अनुभव किया है? उनमें कितनी गहराई से गई हो? और तुम जैसी बच्ची व ओछी बुद्धि वाली आलोचिकाओं के लिए हर नई बात अस्वाभाविक और हर नया दृष्टिकोण दूषित होता है। और दूसरी भाषाओं वाला जो भी लिख दें वह तुम्हारे लिए आदर्श बन जाता है। तुम अपनी हीनता को छोड़कर स्वच्छ आलोचना करना सीखो।"

सोहिनी सिकुड़ी-सी कुंठित-बीबी का चेहरा देखती रही। वह पुनः

भड़क कर बोली "तुम समझती हो कि मैं केवल बच्चे पैदा करती हूँ ? शायद तुम्हें पता नहीं कि मैं मैट्रिक व साहित्यरत्न पास हूँ तथा मुझे साहित्य के अध्ययन का बड़ा शौक है। मैं यह अच्छी तरह जानती हूँ कि यह सब रूप के कारण हुआ है और तुम्हें हिम्मत बंधाने वालों को भी मैं जानती हूँ। एक है विदेशी कहानियों को चुराकर पाठकों पर रौब गालिब करने वाला तैमूरलंग और दूसरा लेखक व पत्रकार जो प्रतिभा पर नहीं चापलूसी व व्यापारिक आधारों पर साहित्यिक बना हुआ है। क्या आलोचना की है ! ग्रन्थ की गलतियाँ भी भाषा की गलतियाँ बताना ! चरित्र अस्वाभाविक है ! जरा मेरी बात का जवाब दो ! क्या यह चरित्र अस्वाभाविक है ? तुम बी ए पास लड़की हो सम्पादिका हो मानवता पर लेख लिखने वाली हो तुम अपनी आत्मालोचना क्यों नहीं करती ! तुम अपने गिरेबान में क्यों नहीं देखती ? तुम्हारी जैसी आदर्शमयी नारी एक औरत की जिन्दगी में आग लगाकर, सात-सात मासूम बच्चों के पेट पर लात मार कर एक प्रौढ़ व्यक्ति से प्यार करे। मैं समझती हूँ कि ऐसा यथार्थवादी चरित्र प्रस्तुत करने वाले को कोई भी स्वाभाविक नहीं बताएगा पर है तो सही ही ? क्यों ? तुम्हारी जैसी चतुर और प्रबुद्ध स्त्री सात बच्चों के बाप को प्यार करती है कि नहीं ? पर इस प्यार की उम्र बहुत कम है। स्वार्थ और पूँजी के आधार पर टिका प्यार चार दिन की चाँदनी की तरह होता है। कभी न कभी मेरी सहिष्णुता कभी न कभी इन बच्चों का स्नेह अपने बाप को पराजित करके ही छोड़ेगा! फिर तुम्हारा क्या होगा ?

वह चली गई !

अभागन !!

रोहिणी को काटो तो खून नहीं। वह निर्जीव-सी कुर्सी पर लुढ़क गई। उसके मन में तूफान खड़ा हो गया। उसे लगा कि वह जो कुछ कर रही है वह गलत कर रही है। उसे अपनी नैतिकता का यह पराजय नहीं बनाना चाहिए। आखिर उसके इस जीवन का अन्जाम

कैसा होगा ?

और उसके समक्ष लम्बा अन्धेरा छा गया। ऐसा अन्धेरा जिसमें रोशनी की लकीर की तरह उसको अपना बिना मंजिल का रास्ता दिख रहा था। उस रात को उसे सपने में उन सात बच्चों के उदास मुख दिखते और चौदह आँखों की घृणा उसे अपने में डुबोना चाहती। और घूँघट में लिपटी एक दुल्हन नारी का धीमा चेहरा दिखता जिसकी मांग का सिन्दूर लहू बनकर उसके चेहरे को वीभत्स कर रहा था और हाथ में वह कलम लिए खड़ी होती थी। धीरे धीरे उसकी आत्मा में उसके अपने ही पाप गूँजने लगे। और एक दिन उसने उन्मादित होकर आत्म-हत्या कर ली।

पोस्टमार्टम के बाद मालूम हुआ कि उसने जहर खाया था।

उसकी अर्थी में कोई भी विशेष व्यक्ति सम्मिलित नहीं हुआ क्योंकि वे उसे एक समझदार-सुशिक्षित पिशाच कहते थे।

मुझे उसकी गम भरी दास्तान-ए-मुहब्बत का अन्तिम और खत्म करते हुए बड़ा ही दुःख हो रहा है। सहानुभूति है उस प्यार की प्यासी धनलक्ष्मी की बेगम मोहिनी के प्रति। अलविदा।

सेवा का सौभाग्य मिला हुआ है।

बूढ़ा निरुत्तर रहा। वह चुप हो गया।

"आप चाय पीजिये न ?" रंजिन के स्वर में आग्रह था।

"नहीं। पता नहीं क्यों मन हर चीज के प्रति उदासीन हो रहा है।"

"बेटी !" उसने अपने बाप के गले में बाँहें डाल दीं। उसके चेहरे पर बचपन सी भोली थी। बूढ़ा हँस पड़ा। वह चुप चाय पीने लगा। वह कुछ देर तक खिड़की के फटे पर्दे को देखता रहा जो भिनगते धूप की किरणों को रोकने का असफल प्रयास कर रहा था। हवा का जोर का झोंका आया। पर्दा बीच में से और फट गया।

"यह पर्दा बिलकुल फट गया है बेटी।"

"आप चिंता न करें, मेरी रेशमी साड़ी भी फट गयी है। मैं उसका नया पर्दा बना दूँगी। संयोग भी तो एक चीज होता है।"

"और हाँ बेटी कल रॉबिन आया था।"

"क्यों ?"

"बस इतना ही कहकर चला गया कि रंजिन आजकल मुझसे थोड़ी नाराज है।"

"वह झूठ बोल रहा था।"

"शायद।"

"शायद नहीं सचमुच। वह चाहता है रंजिन उसके लिए अपने व्यक्तित्व को खत्म कर दे। अपने आपको मार दे। अपने स्वास्थ्य और अपनी इन्सानियत को छोड़ दे यह मेरे लिए संभव नहीं।"

"यह उसकी ज्यादती है।"

"कमजोर पर सभी ज्यादती करते हैं। रॉबिन न करे यह कैसे हो सकता है ?" कह कर वह चाय के बर्तन लेकर वापस रसोईघर में चली गयी। वह रसोई की सफाई करने लगी। तभी बाहर साइकिल की घन्टी बज उठी। घन्टी की टन-टन सुनते ही रंजिन के सारे तन में

नवीन स्फूर्ति पाय गयी। वह हठात् द्वार की ओर बढ़ी। उसको प
पर रौबिन शब्द भी पाया पर पाय उसने उसे प्रकट नहीं होने दि
वह फिर सफाई में तन्मय हो गयी। उसका मन बाहर पहुँच गया
पर उसने अपने आपको अत्यन्त व्यस्त बनाए रखा।

घन्टी एक बार फिर बजी।

वेदना की लकीर रंजिन के मस्तक को चीर कर शांत हो गई
उसने स्वयं पर संयम रखा। वह कपड़े से बर्तनों को निष्प्रयोजन
झाड़ने लगी।

रौबिन रसोई के दीवार के बीचो बीच आकर खड़ा हो गया। उ
छाया का आभास रंजिन को हो गया था किन्तु वह निश्चल वैसी ए
अपने को व्यस्त किये।

"रंजिन!" उसने पुकारा।

रंजिन ने अपनी पलकें उठायीं। अपलक मर्मभरी दृष्टि से उसे दे
रही। उसने चाहा कि वह सदा की तरह आज भी रौबिन को प
बाहों में भर कर उसके मुख पर सहस्र चुम्बनों की वर्षा कर दे
उसने अपने मन की अधीरता को वश किये रखा।

"रंजिन तुम्हारा व्यवहार ऐसा ठीक नहीं है। तुम्हें मेरी बातों
गम्भीरता से विचारना चाहिये। आखिर यह कब संभव हुआ है कि
भरे-पूरे परिवार का जिम्मेदार सदस्य अपनी पत्नी के कहने पर उ
सा आकर रहे। जरा सोचो न मेरे पिता के दिल पर कितना
आघात लगेगा?

रंजिन ने उसकी बात का कोई उत्तर न देकर इतना ही कहा "
पीओगे?

"नहीं अभी ही पीकर आया हूँ।" कहकर वह दालान में पड़ी
को खींच लाया और उस पर बैठ गया।

"फिर भी एक कप तो ही लो।"

"वैसी तुम्हारी मर्ज़ी।"

उसका बाप खुद कमाता है और मेरे बाप की हर साँस को मेरे सहारे की भी जरूरत है।

वह बड़ी देर तक विचारों में खोयी रही।

गिर्जाघर के पीछे रैबिन का मकान था और उसके काफी दूर तक काफी हस्पताल के पीछे रोबिन का। रैबिन का बाप कम्पाउण्डर था जिसकी एक टाँग और एक हाथ लकवा हो जाने से बेकाम हो गया। माँ बचपन में मर गयी थी अतः परिस्थितिवश रैबिन को तुरन्त नौकरी करनी पड़ी। उसने केवल मैट्रिक ही पास किया था।

वह प्रारम्भ से तेज बुद्धि की थी। रोबिन के साथ उसका बचपन बीता था। दोनों साथ-साथ पढ़े थे। यौवन की दहलीज पर रोमांस से भरपूर स्वप्न भी दिखाये थे। विवेक के साथ उनके विचारों में दृढ़ता आने लगी। दोनों ने निश्चय किया कि वे शादी करेंगे किन्तु उस से पूर्व रैबिन के पिता के साथ यह दुर्घटना घट गयी। वे लाचार और असहाय हो गये। अतः वह अकेले पिताजी को नहीं छोड़ सकती थी। अब रोबिन शादी के लिए जल्दी करता और रैबिन कहती कि अभी नहीं। धीरे-धीरे उनका वातावरण बिगड़ गया। रोबिन कभी-कभी बात पर क्रोधित हो उठता था। रैबिन के बाप को भी इस तनाव का धीरे-धीरे आभास हो गया और उसने रैबिन को कई बार समझाया भी पर रैबिन का संवेदनभरा मन अपने लाचार बाप को छोड़ने को तैयार नहीं हुआ।

× × ×

रैबिन का ईसाई बाप प्यारेलाल थामसन बिस्तरे पर बैठा हुआ बाईबिल पढ़ रहा था। उसके चेहरे पर स्निग्धता और प्रगाढ़ शान्ति थी। तभी रोबिन ने प्रवेश किया।

"हैलो !" गुड मॉर्निंग।

आओ रोबिन आओ आज कॉलेज नहीं गये ?"

"नहीं !"

"क्यों ?

"छुट्टी ली है।"

"कोई खास काम था ?

"हाँ वह भी आपसे ही।

"बैठो ही कहो।"

रॉबिन इत्मिनान से बैठ गया। उसने सिगरेट जला ली। उसका कश खींचता हुआ वह बोला "डैडी! आपसे एक प्रार्थना है आप रैबिन को समझा दीजिये। वह अपना हठ नहीं छोड़ रही है। मैंने उसे लाख बार समझा दिया कि तुम डैडी को दिन में कई बार सम्भाल लेना पर वह अपने हठ पर ज्यों की त्यों है। कहती है—तुम यहाँ आकर क्यों नहीं रहते ? भला यह कैसे सम्भव हो सकता है ?"

थामसन ने रूखी मुस्कान के साथ कहा "अब तुम दोनों को विवाह कर ही लेना चाहिए। अधिक देर किसी अनिष्ट का कारण भी बन जाती है।"

"यही तो मैं भी कहता हूँ। रोजिना मेरे डैडी भी मुझे विवाह के लिये बार-बार कह रहे हैं।

"कैसे नहीं कहेंगे। तुम्हारा छोटा भाई पीटर भी तो जवान हो रहा है। और मेरी भी यह इच्छा है कि बचपन का प्यार अब अटूट बन्धनों में बँध जाय।"

"बँध जाने पर आप ।" उसने उसकी भरी हुई टाँग और हाथ की ओर संकेत किया।

मैं ही अभागा हूँ।" थामसन ने भीगे नेत्रों से उसकी ओर देखकर कहा "तुम इन्सान बड़े करुणाशील होते हो। दिनों में मेरे कारण मेरी बच्ची को अपने निजी जीवन का थोड़ा भी सुख नहीं मिल पा रहा है। बेचारी रात-दिन मेरे जीवन को सँवारने में लगी रहती है। मैं अब उसे मजबूर करूँगा।"

लेकिन डैडी आप मेरा नाम मत लीजियेगा। आप अपने किसी भी

उसका बाप सूद कमाता है और मेरे बाप की हर चीज को मेरे सहारे की भी जरूरत है।

वह बड़ी देर तक विचारों में खोयी रही।

मिर्जापुर के पीछे रैजिन का मकान था और उसके काफी दूर पर सरकारी हस्पताल के पीछे रॉबिन का। रैजिन का बाप कम्पाउन्डर था जिसकी एक टांग और एक हाथ लकवा हो जाने से बेकाम हो गया। मां बचपन में मर गयी थी अतः परिस्थितिवश रैजिन को तुरन्त नौकरी करनी पड़ी। उसने केवल मैट्रिक ही पास किया था।

वह प्रारम्भ से तेज बुद्धि की थी। रॉबिन के साथ उसका बचपना बीता था। दोनों साथ-साथ पढ़े थे। यौवन की दहलीज पर प्रेमाभ से भरपूर क्षण भी बिताये थे। विवेक के साथ उनके विचारों में दृढ़ता आने लगी। दोनों ने निश्चय किया कि वे शादी करेंगे किन्तु अब दो वर्ष पूर्व रैजिन के पिता के साथ यह दुर्घटना घट गयी। वे लाचार और असहाय हो गये। अतः वह अकेले पिताजी को नहीं छोड़ सकती थी। अब रॉबिन शादी के लिए जल्दी करता और रैजिन कहती कि नहीं अभी नहीं। धीरे-धीरे अनमना वातावरण बिगड़ गया। रॉबिन कभी-कभी उस पर क्रोधित हो उठता था। रैजिन के बाप को भी इस तनाव का धीरे धीरे आभास हो गया और उसने रैजिन को कई बार समझाया भी पर रैजिन का पवित्रमना मन अपने लाचार बाप को छोड़ने को तैयार नहीं हुआ।

× × ×

रैजिन का बीमार बाप प्यारेलाल जामसन बिस्तर पर लेटा हुआ बाईबिल पढ़ रहा था। उसके चेहरे पर स्निग्धता और अगाढ़ शांति थी। तभी रॉबिन ने प्रवेश किया।

"डैडी ! गुड मॉर्निंग।

'आओ रॉबिन आओ आज कॉलेज नहीं गये ?

'नहीं।

"क्यों ?"

"छुट्टी ली है।"

"कोई खास काम था ?"

"हाँ, वह भी आपसे ही।"

"बैठो तो कहो।"

रॉबिन इत्मिनान से बैठ गया। उसने सिगरेट जला ली। उसका कश खींचता हुआ वह बोला "डैडी! आपसे एक प्रार्थना है। आप ईविन को समझा दीजिये। वह अपना हठ नहीं छोड़ रही है। मैंने उसे बार बार समझा लिया कि तुम डैडी को दिन में कई बार संभाल लेना पर वह अपने हठ पर ज्यों की त्यों है। कहती है—तुम यहीं आकर क्यों नहीं रहते ? भला यह कैसे सम्भव हो सकता है ?"

थामसन ने रूखी मुस्कान के साथ कहा "अब तुम दोनों को विवाह कर ही लेना चाहिये। अधिक देर किसी अनिष्ट का कारण भी बन जाती है।"

"यही तो मैं भी कहता हूँ। ईविन न, मेरे डैडी भी मुझे विवाह के लिये बार-बार कह रहे हैं।"

"कैसे नहीं कहेंगे। तुम्हारा छोटा भाई पीटर भी तो जवान हो रहा है। खैर, मेरी भी यह इच्छा है कि जवानी का प्यार अब अटूट बन्धनों में बँध जाय।"

"बँध जाने पर आप...।" उसने उसकी मरी हुई टाँग और हाथ की ओर संकेत किया।

"मैं भी समझता हूँ।" थामसन ने भीगे नेत्रों से उसकी ओर देखकर कहा "कुछ इन्सान बड़े बदनसीब होते हैं। देखो न, मेरे कारण मेरी बच्ची को अपने निजी जीवन का थोड़ा भी सुख नहीं मिल पा रहा है। बेचारी रात-दिन मेरे जीवन को संवारने में लगी रहती है। मैं बड़ा मजबूर बनेगा।"

"लेकिन डैडी आप मेरा साथ मत छोड़ियेगा।

तरह शादी के लिए राज़ी कर लीजिये।

"कर दूँगा।"

"सच!"

"यकीन रखो।"

रॉबिन चला गया। श्यामलाल बड़ी देर तक विमूढ़ सा बैठा रहा। वह अपनी बदनसीबी के बारे में न जाने क्या-क्या सोचता रहा जिसके वाक्य उसे दूसरे पल याद नहीं रहे। हाँ यह सही था कि उसने अपने मन में यह निर्णय ज़रूर कर लिया था कि उसकी बदनसीबी अब उसकी बेटी के जीवन को भी निगलने लगी है।

× × ×

घर में प्रवेश करते ही रंजिन ने पुकारा "डैडी गुड ईवनिंग।" और उसने आकर डैडी को अपना चुम्बन दिया।

"आज बड़ी देर कर दी?"

"डैडी मैंने एक ट्यूशन कर लिया है। सेठ बनारसी दास है न उनकी लड़की को पढ़ाऊँगी। तीन रुपये एक घण्टे के देंगे। है न खुशखबरी?"

"नहीं पगली क्यों अपने प्राण पर अत्याचार कर रही है।" उसने थोड़ा रुककर कहा "मेरी एक बात मानेगी?

एक नहीं अनेक कहो डैडी।

"फिर तू विवाह कर ले। बेचारा रॉबिन तेरे प्यार में पागल बना फिरता है। और मेरी भी आँखें बन्द होने के पहले तुझे दुल्हन के रूप में देखना चाहती हैं। बूढ़े बाप की सबसे बड़ी लालसा यही तो होती है कि उसकी सन्तान को सारे सुख उसकी आँखों के सामने मिल जायें।

रंजिन का स्वर एकदम बदल कर तेज हो गया "मालूम होता है रॉबिन आया था।"

श्यामलाल घबरा गया परन्तु उसने अपने आपको सँभाल लिया। अपनी झेंप को हँसी में छुपाकर बोला, "नहीं नहीं तुम्हें तो आजकल इस विषय

मैं रॉबिन ही नज़र आता है। वह यहाँ क्यों आने लगा? वह तो इस समय कॉलिज चला जाता है।"

"फिर आप मुझे कभी भी शादी के लिए न कहा करें। मैंने प्रतिज्ञा कर ली है कि आपके जीते जी आपको अपने से विलग नहीं करूँगी। रॉबिन में अगर इन्सानियत है और वह मुझसे सच्चा प्यार करता है तो वह यहाँ रहने की शर्त के साथ मुझसे विवाह कर सकता है।" रैबिन ने बड़ी दृढ़ता से कहा। उसकी आँखें स्थिर हो उठीं। उसका बदन काँपने लगा जैसे वह अपनी सभी भावनाओं को मार कर कह रही है।

थामसन कुछ बोले इसके पहले ही रॉबिन बाहर चली गयी। वह अपने काम में व्यस्त हो गयी। बाप-बेटी ने साथ-साथ खाना खाया पर दोनों में से कोई नहीं बोला। उनकी भाव-भंगिमा से लगता था जैसे वे दोनों बाप-बेटी नहीं अपरिचित हैं। थामसन ने सोने के पूर्व पूछा 'मुझसे तुम नाराज़ हो रैबिन? अपने इस आचरण बाप को क्षमा कर देना। अब मैं तुम्हें कभी भी विवाह के लिए मजबूर नहीं करूँगा।" थामसन की आँखें भर आयीं। रैबिन भी अब अपने को नहीं रोक सकी। नन्हीं बालिका की तरह पिता की गोद में फूटकर सिसक पड़ी।

रात गहरी और काली हो रही थी।

× ×

रैबिन प्रगाढ़ निद्रा में निमग्न हो गयी। सोया आसमान। थामसन ने खिड़की की राह ताका—आकाश-गंगा उदासी के ओट में मदहोश और खामोश है।

चाँद निर्जीव। सन्नाटा।

वह सोच रहा था—"मेरे जीवन का क्या मकसद है? मैं गद्दार हूँ मक्कार हूँ बेटी की ज़िन्दगी का दुश्मन हूँ क्यों हूँ? केवल जीवन के इन गिने-चुने सिसकते-तड़पते चंद साल और मरने के दिन। छि छि छि मैं कितना स्वार्थी और नीच हूँ!" उसने खाली ताका को सोयी अपनी बेटी को देखा। उसका मन उसके पीड़ित जीवन की स्मृति से भर गया और

वह न जाने क्यों सिसकने लगा। उसकी सिसकी उसे ही सुनाई पड़ती थी और अंत में वह सिसकता हुआ रैजिम के पास पहुँचा। उसके सिर को चूमा और अपने मन में कहा "घोड़े की टाँग टूट जाने पर समझदार मालिक उसे पीड़ा से बचाने के लिए गोली मार देता है फिर क्यों नहीं ईश्वर एक ऐसा कानून बनाता जिसमें प्रयोजनहीन इन्सानों को भी छोड़ देने का हक न हो।" उसके मन में भयानक आन्दोलन होने रहे।

वह बु बकड़े के सहारे बढ़ा। खुरदरे फर्श पर घिस-घिस कर चलने से उसे बड़ी तकलीफ हो रही थी। धीरे-धीरे वह कमरे के बाहर हो गया। उसने चारों ओर देखा—स्तब्ध और सूना वातावरण। वह आकाश को निहारता रहा। गिर्जे के ऊपरी गुम्बद को कातर भरी दृष्टि से देखता रहा "ईश्वर! मुझे क्षमा करना।" वह धीरे धीरे बकरी के पास गया। बकरी जैसे उसके मन के बुरे इरादों से परिचित हो गयी हो वह मिमिया उठी। आसमान काँप गया। उसमें क्षणिक जड़ता आ गयी और आँखें अनायास गिर्जे की ओर उठ गयीं।

उसने बड़ी सफाई से रस्सा खोला। वह सारा कार्य इस तरह कर रहा था जैसे उसने सारी योजना पहले ही बना रखी हो। वह रस्सा लेकर फिर बढ़ा। घिसटने-घिसटने उसका पुराना पाजामा भी फट गया। वह छत की सीढ़ियों के पास जाकर सुस्ताने लगा। उसने तुरन्त उस रस्से को अपने गले के चारों ओर लपेटा तभी गिरजे की घड़ी ने तीन बजाये। उसे लगा कि तीन टंकारें हथौड़े की तरह उसके दिल पर पड़ रहे हैं। वह विचलित हो उठा और उसका सारा बदन काँप गया क्योंकि उसने उसी समय सोचा था "कहीं रैजिम जाग गयी तो?" उसने सीढ़ियों की ओर अपनी पीठ कर दी और पीठ के बल वह सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। धीरे-धीरे वह सारी सीढ़ियाँ चढ़ गया। वह छत पर जाकर सुस्ता सा गया। उसका शरीर टूटने लगा उसने प्रभु से प्रार्थना की और रस्से का एक सिरा मोरी के नल में बाँध दिया और दूसरा गले में डाल कर गाँठ लगाली। अपने एक हाथ से बड़ी देर में वह गाँठ लगा पाया।

जब वह यह काम पूरा कर चुका तब उसने ईश्वर को धन्यवाद दिया कि उसने एक मासूम आदमी के दुखों का अंत करने में जो सहयोग दिया है उसके लिये वह उसका अत्यन्त कृतज्ञ है। उसका दिल अपनी लाडली बेटी के लिए अनायास ही तड़प उठा। वह बालक की तरह जार-जार से रोना चाहता था पर वह ऐसा नहीं कर सका। धीरे धीरे उसका मन फिर बेटी के प्यार में उत्तरोत्तर कमजोर होता गया। उसे महसूस हुआ कि वह अपनी बेटी के जीवन को अपने प्राणों के मोह में सुखी नहीं कर सकेगा। इसलिए वह तुरन्त मस के पीछे की ओर लटक गया। कुछ ही देर तड़पता रहा—कब उसके प्राण निकले यह कोई नहीं जानता। हाँ मरने के पूर्व उसने अपनी प्यारी बेटी के सुखद जीवन की कामना की है ईश्वर! उसे रौशिल की दुल्हन बनाकर उसके प्यार को प्रस्फुटित करना है। वह एक अच्छी बीवी की तरह अपनी उम्र गुजारे, और उसकी पथराती दृष्टि मिर्ले पर जम गयी।

एक मीनार और दो टूटे दिल

o

मीनार की सीढ़ियों के दरवाज़े के आगे पहरेदार के नालदार जूतों की अप्रिय आवाज़ गूंज रही थी—खट-खट-खट। कभी-कभी वह अपने मन्द स्वर में कोई फ़िल्मी गीत गुनगुना उठता था। प्रौढ़ावस्था में उस पहरेदार के मुंह से यह घटिया फ़िल्मी गीत बड़ा विचित्र लग रहा था। लेकिन उसकी मुद्रा से उसकी तन्मयता का अन्दाज़ा सहजता से लगाया जा सकता था। उसका हिलता हुआ सिर उसके गीत में खो जाने का प्रमाण था।

मीनार के चारों ओर गोलाकार बगीचा था। उस एक विशाल इमली के पेड़ के तने का सहारा लिए हुए एक युवक बैठा था। उसके मुख पर चिन्ता और व्यग्रता के भाव स्पष्ट दीख रहे थे। उसका कुर्ता और पाजामा फटा और मैला था। हां उसके पांवों में जो जूते थे वे बिल्कुल नए और चमकदार थे जिससे देखने वाले सहजता से यह अनुमान लगा सकते थे कि यह जूते चुराए हुए हैं—किसी मन्दिर के आगे से या किसी दुकान से। युवक के चेहरे की उभरी हड्डियों ने उस की बड़ी-बड़ी आंखों की सुन्दरता को निगलकर उन्हें भयानक बना दिया था और जब उसकी आंखें स्थिर होतीं तब ऐसा प्रतीत होता था कि इन आंखों में चिनगारियां जल रही हों

और वे किसी को भस्म करने को आतुर हों। उसकी बार-बार बन्द होती मुट्ठियाँ उसके मस्तक के आक्रोश और रोष की प्रतीक थीं। देह से टकराते सिर से लगता था कि उसके मस्तिष्क का विपुल विद्रोह धमधम हो गया है और वह कुछ धमाका कर देना चाहता है। पहरेदार उस युवक पर बार-बार तेज निगाह डाल देता था। वह तेज निगाह प्रश्न भरी होती थी जिसे वह युवक सहन नहीं कर पाता था। और जब कभी पहरेदार घूमता हुआ उसके पास आकर सीटी बजाने लगता तब उस युवक के चेहरे पर घृणाभरी रेखाएँ व झुँझलाहट साफ उभरती थी। अन्त में वह बीड़ी पीता हुआ उसके पास आया और बोला "बीड़ी पियोगे यार?"

युवक ने मौन रहकर अपना हाथ बढ़ाया और पहरेदार से बीड़ी लेकर पीने लगा। उसके चेहरे पर गहरा आवेश और आक्रोश था।

पहरेदार ने उस युवक पर गहरी नजर डालकर अपने आप ही कहा "अच्छा किया सरकार ने?"

"क्या अच्छा किया?" चीख पड़ा युवक। न चाहते हुए भी उसने पहरेदार को उत्तर दिया। उसकी गहरी धँसी आँखों में विस्मय तैर उठा।

"कि अकेले आदमी को मीनार पर चढ़ने नहीं देती वर्ना यहाँ हमेशा एक न एक आदमी जरूर मरता।"

"क्यों?"

"मानो जमाना ही कुछ ऐसा आ गया है।" जिसे देखो छोटी-छोटी बात पर यहीं से मरने को दौड़ा चला आता है, हुँ!" और उसने घृणा से थूक दिया।

युवक चुप हो गया। पहरेदार लम्बा कश खींचकर पुनः बोला—"मुझे तो तुम्हारे पर भी शक हुआ था कि तुम जरूर कोई गड़बड़ करने आये हो।"

युवक का मुख विवर्ण हो गया। अपने दोनों होंठों के सम्पुट को अपने दाँतों के बीच भींच कर उसने अपनी सहमी दृष्टि से उस

पहरेदार को देखा। पहरेदार खिलखिला कर हँस पड़ा और बोला "ऐसी ड्यूटी निभाते मैं बहुत देख चुका हूँ। हरएक के दिल की बातों को आँखों से भाँप जाता हूँ। यहाँ का बहुत पुराना नौकर हूँ। काफी तजुर्बा हो चुका है।" क्षण भर रुककर बोला "सुनो जब तुम भरी नजर बचाकर मीनार पर आये तभी मैंने समझ लिया था कि तुम कुछ गजब करने आए हो। बोल भी नहीं रहे हो। मत बोलो पर यह बड़ी देर की लम्बी चुप्पी तुम्हारे दिल के बुरे इरादों को नहीं छिपा सकती?" और वह मौन होकर फिर बीड़ी पीने लगा। वह धुआँ दंभ के साथ आसमान की ओर छोड़ रहा था। कभी-कभी वह गोलाकार धुआँ छोड़ने की भी असफल चेष्टा करता था।

युवक अपने हाथ की बुझी बीड़ी को तोड़ते हुए बड़बड़ाया 'सब बकवास है, जाओ अपना काम करो।"

'मैं बकवास करता हूँ?" वह विस्मय से उसके सन्निकट आकर बोला अच्छा फिर तुम यहाँ क्यों आए थे?"

युवक इस समय दुखी और व्यंग भरी हँसी-हँस पड़ा। दार्शनिक की भाँति भारी स्वर में बोला "मीनार पर चढ़कर तुम्हारी इस दुनिया को देखने। यह पता लगाने कि इस विराट दुनिया में मेरा अपना क्या अस्तित्व है। मेरे इस छोटे से जीवन का क्या मूल्य है?'

पहरेदार उस युवक की भारी बातें न समझा। अपनी मूर्खता को छिपाने के लिए वह अपने होंठो पर रूखी-सूखी मुस्कान लिए अपनी नियत जगह पर आ गया। युवक दूब को तोड़ रहा था और पहरेदार को प्रश्न भरी दृष्टि से देख रहा था। कभी-कभी वह दूब के दो-चार तिनके मुँह में दबाकर चबाने भी लगता था।

थोड़ी देर बाद उस युवक ने मीनार की ओर आते हुए एक अन्य युवक को देखा। पहले युवक की नसों में गर्मी दौड़ गई। वह शीघ्रता से उठा और पहरेदार के पास चला आया। व्यंगमिश्रित स्वर में धीरे धीरे बोला 'क्यों पहरेदार साहब मैं इस आदमी के साथ ऊपर जा

सकता है ? अब तो हम दो गए हैं न ?

"धमाक ! एक साथ दो आदमी इस मीनार पर बिना किसी रोक-टोक के आ सकते हैं।" पहरेदार ने दूसरी बीड़ी सुलगाई। सुना था एक आला हुक्मी 'ममोले' था। गुरु बरमान दिमाग छोकरियों के पीछे भागता था पर जब उसकी बीबी ने एक दो हरफ कलाम के मगर लड़ाई तब साला दाँव बचाकर ऊपर से कूद पड़ा। यह बात भी बड़ी अजीब होती है। फिर भी अपनी ओर पर भी [illegible] रखना चाहती है।"

दूसरे युवक की आकृति अब दिखाई पड़ने लगी थी। वह बहुत धीरे धीरे आ रहा था। अस्त व्यस्त कपड़ों एवं बिखरे बालों में वह आधुनिक मजनूँ सा लगता था। उसके उलझे हुए एक एक कदम उसके टूटे दिल की दास्ताँ सुना रहे थे।

पहला युवक प्रश्न भरी दृष्टि से अब भी पहरेदार की तरफ देख रहा था। मुस्करा रहा था। अन्त में वह युवक बोला "ऊपर चढ़कर देखना तुम्हारी इतनी बड़ी दुनिया में क्या-क्या है ?"

"क्या तुम कभी पहले हुए हो ?" पहरेदार ने जिज्ञासा से पूछा।

"जब किसी आदमी के मन में एक नया दुःखद विचार आता है तब उसे ऐसा मालूम होता है कि उसका नया जन्म पाता है। उसके लिए उसकी प्रत्येक निरर्थक वस्तु सार्थक और अजाना बन जाती है।"

पहरेदार इस बार भी उसके भारी भरकम विचारों को नहीं समझ सका। वह चुपचाप मौन रहा।

दूसरा युवक मीनार की सीढ़ियों के दरवाजे पर [illegible] आया। पहरेदार की ओर बिना देखे ही ऊपर चढ़ने लगा कि पहरेदार ने दूसरे युवक को ठोस स्वर में कहा "ठहरो ! [illegible] आदमी है। तुम इस युवक के साथ आ सकते हो। देखो कोई [illegible] मत करना। अभी तक मेरे पहर में दो आदमी [illegible] है किसी को भी कामयाबी नहीं मिली। मेरे पहरेदारों का [illegible]

पहरेदार को देखा। पहरेदार खिलखिला कर हँस पड़ा और बोला "ऐसी तेज निगाहें मैं बहुत देख चुका हूँ। तुरन्त ही दिल की बातों को आँखों से भाँप जाता हूँ। यहाँ का बहुत पुराना नौकर हूँ। काफी तजुर्बा हो चुका है।" क्षण-भर रुककर बोला "जभी तुम भरी नजर उठाकर मीनार पर आये तभी मैंने समझ लिया था कि तुम कुछ मतलब करने आए हो। बोल भी नहीं रहे हो। मत बोलो पर यह बड़ी देर की लम्बी चुप्पी तुम्हारे दिल के बुरे इरादों को नहीं छिपा सकती?" और वह मौन होकर फिर बीड़ी पीने लगा। वह धुआँ दंभ के साथ आसमान की ओर छोड़ रहा था। कभी-कभी वह गोलाकार धुआँ छोड़ने की भी असफल चेष्टा करता था।

युवक अपने हाथ की बुझी बीड़ी को तोड़ते हुए बड़बड़ाया "सब बकवास है जाओ अपना काम करो।"

"मैं बकवास करता हूँ?" वह विस्मय से उसके सन्निकट आकर बोला "अच्छा फिर तुम यहाँ क्यों आए थे?"

युवक इस समय रूखी और व्यंग भरी हँसी-हँस पड़ा। दार्शनिक की भाँति भारी स्वर में बोला "मीनार पर चढ़कर तुम्हारी इस दुनिया को देखने। यह पता लगाने कि इस विराट दुनिया में मेरा अपना क्या अस्तित्व है। मेरे इस छोटे से जीवन का क्या मूल्य है?"

पहरेदार उस युवक की भारी बातें न समझा। अपनी मूर्खता को छिपाने के लिए वह अपने होंठों पर रूखी-सूखी मुस्कान लिए अपनी निश्चित जगह पर आ गया। युवक दूब को तोड़ रहा था और पहरेदार को प्रश्न भरी दृष्टि से देख रहा था। कभी-कभी वह दूब के दो-चार तिनके मुँह में दबाकर चबाने भी लगता था।

थोड़ी देर बाद उस युवक ने मीनार की ओर आते हुए एक अन्य युवक को देखा। पहले युवक की नसों में गर्मी दौड़ गई। वह शीघ्रता से उठा और पहरेदार के पास चला आया। व्यंगमिश्रित स्वर में धीरे धीरे बोला "क्यों पहरेदार साहब मैं इस आदमी के साथ ऊपर जा

करता है ? अब तो हम दो गए हैं न ?"

"अजब ! एक साथ दो आदमी इस मीनार पर बिना किसी रोक-टोक के आ सकते हैं ।" पहरेदार ने दूसरी बीड़ी सुलगाई "सुना भाई एक साला हरामी 'मनोज' था । खूब बदमाश दिमाग लोगों के पास आता था पर जब उसकी बीबी ने एक लो हाथ मकान से मकर लड़ाई तब साला छोड़ बनाकर ऊपर से कूद पड़ा । दर जान की बड़ी बला होती है । फिर भी अपनी ओर पट भी अपनी रखना चाहती है ।"

दूसरे युवक की आकृति अब दिखाई पड़ने लगी थी । वह बहुत धीरे धीरे आ रहा था । सफेद कपड़ों एवं बिखरे बालों में वह आधुनिक मजनूँ सा लगता था । उसके उठते हुए एक एक कदम उसके टूटे दिल की कहानी सुना रहे थे ।

पहला युवक प्रश्न भरी दृष्टि से अब भी पहरेदार की तरफ देख रहा था मुस्करा रहा था । मन में वह सुनना चाहता [illegible] ऊपर बढ़कर "देखना तुम्हारी इतनी बड़ी दुनिया में क्या-क्या है ?"

"क्या तुम कभी पैदा हुए हो ?" पहरेदार ने जिज्ञासा से पूछा । "जब किसी आदमी के मन में एक नया कुसुम खिलकर पनपता है तब उसे ऐसा मालूम होता है कि उसने नया जन्म पाया है । उसके लिए उसकी प्रत्येक चिरपरिचित वस्तु अपरिचित और अनोखी बन जाती है ।"

पहरेदार इस बार भी उसके भारी भरकम विचारों का भरी [illegible] न समझ सका । वह चुपचाप मौन रहा ।

दूसरा युवक मीनार की आखिरी के दरवाजे पर हड़बड़ाता हुआ आया । पहरेदार को ओर बिना देखे ही ऊपर बढ़ने लगा कि पहरेदार ने दूसरे युवक को आगे से रोक के कहा "रुको । [illegible] कदम आगा और तुम इस युवक के साथ आ सकते हो । देखो, कोई दुर्घटना न करना । अभी इस माह शहर में दो घटनाएँ हो चुकी हैं [illegible] हैं । [illegible] किसी को भी बचाओ नहीं [illegible] । [illegible] लोगों का [illegible]

बहुत नाराज़ है। किसी के पीछे और किसी के बस। पहरेदार ने अपनी मूछों पर ताव दिया।

दूसरे युवक ने उसे एक पल के लिए देखा और बिना कुछ कहे वह सीढ़ियों की ओर बढ़ गया। पहरेदार ने मुँह बिचकाकर कहा "आज किसी भी आने वाले का मूड अच्छा नहीं है। जाओ तुम भी उसके साथ देख आओ कि यह दुनिया कितनी बड़ी है?"

पहला युवक भी लपक कर सीढ़ियों पर चढ़ गया।

सीढ़ियों पर घोर अन्धेरा था। पर हर घुमाव पर एक छोटी-सी खिड़की थी। पहले युवक ने जिसके मुख की व्यग्रता और असंतोष कुछ कम हो गया था एक घुमाव की खिड़की के प्रकाश में दूसरे युवक के अन्तर्वेदना से दहकते हुए चेहरे को देखा तो उसके अधरों पर घृणा की एक मुस्कान थिरक गई। दूसरे युवक ने अपनी गति को धीमा किया और अपने अपने बालों में एक चुटकी को ओर से पकड़ते हुए उसने पहले युवक की ओर देखा तथा अपने सम्पूर्ण शरीर को एक विचित्र झटका दिया।

पहले युवक की नज़र एक पीछा करने वाले की भाँति झुक गई। वह एकदम गम्भीर हो गया। फिर जाने क्यों सीटी बजाने लगा?

दूसरा युवक धीरे धीरे घुमाव पार कर रहा था। मीनार का गुम्बद नज़दीक आ रहा था। अप्रत्याशित दूसरा युवक एकदम रुक गया। उसके रुकते ही पहला युवक एक झटके के साथ उसके पास आ गया। दोनों की नज़रें एक हुईं और दोनों ने अपने अपने चेहरे के उग्र भावों एवं घृणा भरी दृष्टि [illegible] दूसरे का [illegible] दोनों उसे अत्यन्त धीरे धीरे, [illegible] हुए।

गुम्बद

प्रिय रोमी

तुम मेरे जीवन की मधुर धड़कन और नयनों की ज्योति हो पर यह बेरहम समाज हम दोनों को मिलने नहीं देता। मेरी मृत्यु के बाद तुम अपने जीवन को व्यर्थ मत खोना और मुझे भूल जाने का प्रयास करना। चाहो तो तुम किसी और से विवाह कर सकती हो। मेरे हृदय में तुम्हारा प्यार सदा बासन्ती पुष्प की तरह रहा है और मृत्यु के बाद भी रहेगा।

तुम्हारा अभागा प्रेमी
—सागर

पहले युवक ने पत्र को फाड़ते हुए कहा "कमबख्त कहता था कि आत्महत्या मूर्खता है।" और उसके होठों पर जीवन भरी मुस्कान दौड़ गई।

× × ×

दूसरे युवक ने भी विस्मय के साथ पहले युवक के पत्र को पढ़ा।
मेरे साथियो,

मैं ग्रेजुएट हूँ और निरन्तर तीन वर्षों की बेकारी से तंग हूँ। और सिफारिश के अभाव में मुझे कहीं भी काम नहीं मिल रहा है।
मैं गत तीन दिनों से भूखा भी हूँ जीवन के सारे रास्ते बन्द हो गए हैं। इसलिए 'मीनार' पर चढ़कर आत्महत्या कर रहा हूँ। मेरे बाद किसी को भी न सताया जाए। मेरी आखिरी इच्छा है कि देश में समाजवादी व्यवस्था की स्थापना हो और आर्थिक विषमताएँ मिटें।

दूसरे युवक ने पत्र को फाड़ते हुए कहा "भूखा कहीं का! आत्महत्या को पाप बता रहा था।" और उसके अधरों पर वैसी ही जीवन भरी मुस्कान दौड़ गई।

दूसरे की हार देख कर अपनी हार विजय में परिणत हो गई थी।

टूटे हुए इन्सान

०

धीरे-धीरे उसने अपने किराये के मकान की दहलीज पर कदम रखा। उसकी इच्छा हुई कि दम भर के लिये सीढ़ियों पर बैठ जाय पर सीढ़ियों पर धूल बिखरी हुई थी और पानी के घूमने पर कई अजीबो-गरीब चित्र बन गये थे। वह बेमन सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। एक बार उसने अपनी आदत के अनुसार खँखारा और पेंट की जेब से मैला-सा रूमाल निकाल कर गरदन पर बहते हुए पसीने को पोंछा।

उसका रंग काला था और व्यक्तित्व प्रभावहीन। अगर चेहरा थोड़ा और पतला होता तो उसकी शक्ल कम से कम नाक को लेकर कौवे की चोंच से साम्य भी पा सकती थी। फिर भी उसके दफ्तरी-यार उसे मजाक में 'कागराम' कहते ही थे।

जीना पार कर वह क्षण भर के लिए रुका। हल्की अँगड़ाई-सी ली। फिर दायें पैर के अँगूठे की टूटी चप्पल को जोर से झाड़ा। हल्की-सी रेत उड़ी और उसने अपने बड़े लड़के को पुकारा 'मुन्ना ओ मुन्ना!'

'क्या है!' मुन्ना दाँत से नाखूनों को काटता हुआ आया। अब वह बाहरवाली बैठक में बैठ गया था। मैली-सी चादर से ढँका एक पुराना-धुराना बिस्तर बिछा था। उसने पेंट-कमीज

प्रिय रोमी

तुम मेरे जीवन की मधुर धड़कन और नयनों की ज्योति हो पर यह बेरहम समाज हम दोनों को मिलने नहीं देता। मेरी मृत्यु के बाद तुम अपने जीवन को व्यर्थ मत खोना और मुझे भूल जाने का प्रयास करना। चाहो तो तुम किसी और से विवाह कर सकती हो। मेरे हृदय में तुम्हारा प्यार सदा बासन्ती फूल की तरह रहा है और मृत्यु के बाद भी रहेगा।

तुम्हारा अभागा प्रेमी
—सागर

पहले युवक ने पत्र को फाड़ते हुए कहा "कम्बख्त कहता था कि आत्महत्या मूर्खता है।" और उसके होठों पर जीवन भरी मुस्कान दौड़ गई।

× × ×

दूसरे युवक ने भी विस्मय के साथ पहले युवक के पत्र को पढ़ा।

मेरे साथियो

मैं ग्रेजुएट हूँ और निरन्तर तीन वर्षों की बेकारी से तंग हूँ। और सिफारिश के अभाव में मुझे कहीं भी काम नहीं मिल रहा है।
मैं अब तीन दिनों से भूखा भी हूँ जीवन के सारे रास्ते बन्द हो गए हैं। इसलिए 'मीनार' पर चढ़कर आत्महत्या कर रहा हूँ। मेरे बाद किसी को भी न सताया जाए। मेरी आखिरी इच्छा है कि देश में समाजवादी व्यवस्था की स्थापना हो और आर्थिक विषमताएँ मिटें।

दूसरे युवक ने पत्र को फाड़ते हुए कहा "झूठा कहीं का। आत्महत्या को पाप बता रहा था। और उसके अधरों पर वैसी ही जीवन भरी मुस्कान दौड़ गई।

दूसरे की हार देख कर अपनी हार विजय में परिणत हो गई थी।

खोल कर अपनी बीबी की साड़ी को तहमद के रूप में लपेट लिया था और चारमीनार सिगरेट निकाल कर होंठों से लगा ली थी।

'मुन्ने जा माचिस ला।'

मुन्ना पूर्ववत उँगलियाँ चाटता हुआ चला गया।

फिर उसने पुराने तकिये का सहारा लिया और विचारमग्न हो गया। मुन्ना माचिस ले आया था। उसने सिगरेट जलायी। दो चार लम्बे कश खींच कर उसने आवाज लगायी 'मुन्नी मम्मी को जा कर कहना चाय बना दे।'

उसकी मम्मी सरस्वती ने अपनी पतली आवाज में भीतर से ही कहा 'मैं चाय बना कर लाती हूँ।'

वह ध्यानमग्न-सा सिगरेट फूँकता रहा। पहली सिगरेट समाप्त हो गयी थी। दूसरी उसने अपनी सिगरेट द्वारा जला ली। राख एक टूटी हुई प्लेट में इकट्ठा हो रही थी। धुआँ आर-पार खिड़की के न होने की वजह से ऊपर कई सिरों में उड़ रहा था, जिससे घुटा-घुटा वातावरण हो गया था।

चाय की गन्दी-सी मोटी प्याली रखते हुए सरस्वती ने पूछा 'सब्जी लाए?'

'नहीं भाई भूल गया।' उसने चाय की चुस्की ली और सिगरेट का धुआँ बाहर की ओर छोड़ा पर हवा विपरीत होने की वजह से वह वापस बैठक में आ गया। घुटन और बढ़ गयी।

सरस्वती ने मुँह फेर लिया और उत्तप्त स्वर में बोली 'सब्जी नहीं लाये फिर मैं बनाऊँगी क्या? जाइए और मुझे बाजार से सब्जी ला कर अभी दीजिए।'

'देखो सरो मुझे तंग मत करो। जो हो बना दो। अब ऐसी थकान में मुझसे बाजार नहीं जाया जा सकता। थक गया हूँ पूरी तरह। दफ्तर में बहुत काम था। सिर में दर्द भी है। दाल बना लो।'

'हमेशा-हमेशा की बात मुझको अच्छी नहीं लगती।' इस बार उसके स्वर का अंदाज बदल गया था। वह रूठी हुई सी लग रही थी 'रोज

दिन से साग बना रही हूँ। पर आज मैं साग नहीं बना सकती।

आनंद ने सिगरेट का अन्तिम कश लिया। उसे बाहर फेंकते हुए उसने कहा—मैं अभी नहीं जा सकता। मेरे सिर में दर्द है।

सरो भी बिगड़ गयी—मैं खुद बाजार से ले आऊँगी। आप इस तीन माह की बच्ची को सँभाल लीजियेगा।

सरो क्रोध में फुफकारती-सी भीतर गयी। उसका मुँह कठोर और लाल हो गया था। तमक झपटते वह अपनी तीन माह की बच्ची को कपड़े में लपेट कर उठा लायी। उसे छाती से चिपकाते हुए अभिनय करती हुई वह बोली—मैं बाजार जा रही हूँ। मुझे पैसा दीजिए। मैं क्या वह चीज नहीं ला सकती? जिससे मुझे नमक मयस्सर हो। मैं कहती हूँ कि आप चीज बाजार से लाते हैं फिर सब्जी क्यों नहीं लाते? वह अब बहुत ही आवेश-आवेश से भर उठी थी—आप मुझे किसी तरह का सुख नहीं देना चाहते। केवल सताना चाहते हैं। सताइए जी खोल कर सताइए। वह अपनी बच्ची को ले कर रोती हुई भीतर चली गयी।

आनंद टूटे हुए इन्सान की तरह हाथ को जल्दी-जल्दी पोंछ कर खड़ा हुआ। पायजामा कपड़े पहने। पल भर वह अपनी साइकिल के पास खड़ा हुआ। साइकिल का पिछला ट्यूब एकदम खराब हो गया था। कई बार बिनवाया था पर अब चिप्पियाँ ठहर ही नहीं रही थीं। दुकानदार ने भी साफ-साफ कह दिया था—बाबू जी अब इस पर चिप्पियाँ लगवाने से पैसा फिजूल खर्च कर रहे हैं। बदलेंगे तो नहीं। आप ट्यूब ही बदलवा लेते?

किन्तु उसके पास पैसा नहीं है। इधर उसका जीवन मंहगाई की हवालात के बीच गर्दिश में पड़ा है। इन दो वर्षों से कभी उसने चैन की सांस नहीं ली। उफ! बीसवीं शताब्दी का जमाना! पल भर के लिए भी चाँदनी नहीं।

वह पैसा ले कर चल पड़ा।

साथ के उड़ते पत्तों की तरह दिल की धड़कनें तेज हो कर उसके मन में ताप लाती और चली गयी।

वह सरकारी दफ्तर में एम० डी० सी है। मन्ने रुपये पाता है। बहुत भावुक है और उसकी भावना सपनों के चारों ओर लिपटी रहती है। उसकी महत्त्वाकांक्षा को उकसाती रहती है। उसे प्रेरित करती है अपनी कल्पनाओं को साकार करने को।

जब वह स्कूल में था तब बहुत अच्छा अभिनय करता था। वह विदूषक बनता था और दर्शकों को अपने हास्य अभिनय से खूब हँसाता था। उसके शहर में पेशेवर नाट्य-पार्टियाँ भी कभी-कभी उसे अपनी मंडली में शामिल करती थीं। उसका सम्मान और आदर करती थीं। फिर उसने मैट्रिक पास किया। विवाह किया। तीन बच्चे भी हुए। सपनों और परिस्थितियों में संघर्ष हुआ। नौकरी करके माँ-बाप से दूर, पराये शहर में आ गया।

माँ-बाप को एक वर्ष तक एक पैसा भी नहीं भेजा। असल्में जब वह बहुत ही तंगी में हुआ तो बच्चों व पत्नी को घर जरूर भेज दिया करता था। परिणाम स्वरूप माँ का स्नेह भी उसने खो दिया। एक बार माँ ने साफ-साफ लिख भी दिया कि अपनी बीवी और बच्चों को मेरे पास मत भेजा करो मेरे पास धन का कुआँ नहीं है जो उसमें से रुपये निकाल निकाल कर तुम लोगों को खिलाती रहूँ।

और इस घटना के तीन बाद उसने नौकरी छोड़ दी। वह एक नाटक मंडली में सम्मिलित हो गया। दो माह के बाद वह मंडली टूट गयी और मार्गद में बड़ी अनुनय विनय और दौड़ धूप के बाद पहले वाली नौकरी वापस पायी।

लेकिन अकांक्षाएँ उसके कल्पना लोक में छायी रहीं। अपने आप से तीव्र असंतोष लिये हुए वह जी रहा था। सुबह-शाम वह दफ्तर जाता और घर में आकर पड़ जाता। उसे हर घड़ी लगता कि उसके जीवन में तनाव ही तनाव है और हर पल मुर्दा है इतना मुर्दा कि उसमें सह जता से रहा भी नहीं जा सकता। और वह सोचता है कि हम सभी मुर्दा हैं, इतने मुर्दे कि हममें अपने जीवन्त सुखी क्षणों को प्राप्त करने की

लालसा ही नहीं है।

बाजार पहुँच गया। उसका ध्यान भंग हो गया। उसने कमल सब्जी ली और वापस घर की ओर चल पड़ा।

वह धीरे-धीरे ऊबड़-खाबड़ सड़क पर चला जा रहा था। कैसा है उसका जीवन? न उल्लास और न खुशी।

एकदम बंजर भूमि की तरह अनुपयोगी।

और एकाएक उसे अपना अभिन्न दोस्त संतोष मिला। बोला, 'तुम्हें ही ढूंढ रहा था। खूब मौके पर मिले।'

'क्यों?'

'आज रिहर्सल में चलना है।'

'कितने बजे?' आनंद उत्साह से भर आया। उसकी बुझी-बुझी आँखों में एकाएक आशा की चिनगारी-सी जली।

'ठीक दस बजे।'

'कहाँ?'

'नाट्य मंडल के दफ्तर में।'

और वह ठीक दस बजे नाट्य मंडल के दफ्तर पहुँचा। संतोष ने उसकी बड़ी आवभगत की। उसे अपने साथियों से परिचय कराया। उसे हीरोइन 'रमा' से मिलाया। रमा ने अर्थ भरी मुस्कान से उसका स्वागत किया, 'आप कहते हैं कि आप यहाँ के ए-वन मार्लेविल्न हैं।'

आनन्द लज्जा से सिकुड़ गया। गर्दन नीची करके वह बोला, 'आप मुझे शर्मिंदा करती हैं।'

'अबकी बार मैं आपका अभिनय देखने दिल्ली से यहाँ आऊँगी। मेरा अभिनय तो तुम नाटक में आज देखोगे ही।'

और आनन्द ने अपने मित्र संतोष से प्रार्थना की, 'भाई मुझे भी इस नाटक में छोटा-सा पार्ट दे दो। मैं अपनी जान लगा दूँगा—अपने पार्ट में।'

लेकिन संतोष ने उसे कोरा उत्तर दे दिया। उसने सिगरेट का कश खींच कर कहा, 'इस नाटक में सभी बाहर के लोग काम करेंगे। मैं अब

उसकी पत्नी भी उसके कार्य की तारीफ करेगी और वह उसके लिए एक अच्छी-सी सोने की अंगूठी लाभ के रुपयों की बना कर देगा । वह सुख के सपनों में खोया रहा । झूलता रहा ।

उसने उस दिन दफ्तर से छुट्टी ले ली । वह संतोष के पास गया । उसे अपनी योजना सुनायी ।

संतोष की आँखों में गजब की चमक दीप्त हो उठी । कुटिल भरी मुस्कान बिखेरता हुआ वह बोला 'पैसा खरच पड़ेगा । नाटक के तुम बादशाह हो और दया रूप की अभिनेत्री है । दोनों की जोड़ी खूब रहेगी ।

और आनंद ने बड़ी मेहनत से एक नाटक लिखा । जैसी योग्यता वैसा नाटक ! हर रात को अभिनेता संतोष अपनी मित्र मंडली को इकट्ठा करके खूब खान-पान उड़ाता था । धीरे धीरे पूंजी आधी रह गयी । एक दिन चिन्तित स्वर में आनंद ने पूछा 'संतोष जी सौ रुपयों में से सौ ही बचे हैं । नाटक कैसे होगा ?

'तुम इसकी चिंता मत करो । बस पचास रुपये दया को एडवांस भेज दो और उसे लिख दो कि हमारा तार पाते ही वह चली आये ।

यह भी काम हो गया । नाटक की तारीख भी तय हो गयी । दो दिन पहले तार दे दिया गया । उसने जवाब दिया 'दो सौ रुपये पहले भेज दो ।

आनंद के पाँवों के नीचे से ज़मीन खिसक गयी । वह संतोष के पास गया । संतोष ने गंभीर हो कर कहा 'साली ने धोखा दे दिया । इन अभिनेत्रियों की कोई जात नहीं होती । अब क्या करें ? मुझे ऐसा गुस्सा आता है कि जा कर साली को पीटूं ।

'भाई अभी इन बातों से कोई फायदा नहीं । अभी तो कुछ करो मेरी बीवी के जेवर गिरवी हैं ।' उसने कपकपाते स्वर में कहा 'मैं बरबाद हो जाऊँगा संतोष ! मैं अपनी बीवी को अपना मुँह नहीं दिखा पाऊँगा ।

संतोष ने साफ पल्ला झाड़ते हुए कहा 'मैं क्या कर सकता हूँ ।

तुम मेरी सब बातें जानते ही हो। बड़ी कड़की में हूँ। अब कहां से तीन सौ रुपये लाओगे तो काम चले वर्ना तुम्हारे साथ मेरी भी इज्जत मिट्टी में ही मिलेगी।

आनन्द को आँखों में अँधेरा छा गया। व्यथा की तीव्रता के कारण मस्तक हाथ से लग गया। वह फिर पलंग पर बैठ गया। वह क्या करे? नाटक नहीं हुआ तो उसकी बीवी के सारे जेवर बिक जायेंगे और उसकी शहर में बड़ी बदनामी होगी? वह क्या करे? वह कहां से रुपये लाये?

उसके मन की सारी शान्ति गायब हो गयी।

वह टूटा-टूटा-सा घर आ गया। उसने बचे हुए पैसों में से चार पैकेट चारमीनार सिगरेट के खरीदे और रात भर उन्हें फूंकता रहा।

नाटक नहीं हुआ। जेवर गिरवी रख दिये गये। पत्नी भी खूब रोयी। खूब दरदनाक झगड़ा हुआ और अन्त में जीत भी आनन्द की हुई। पत्नी रो-धो कर चुप हो गयी। किन्तु आनन्द ने कुछ दिनों बाद महसूस किया कि अब उसकी पत्नी का व्यवहार एकदम बदल गया है। वह उसका पक्ष भी विरोध नहीं करती है। बच्चों की उसके सुख-दुख के बारे में नहीं पूछती है। केवल उसकी आज्ञा को पूरा करती है। एक दिन नहीं पूरे मास-मास दिन रात लगती है। बातों में चापुन नहीं लगाती है। एकदम मुर्दा इन्सान! एकदम मुर्दा व्यवहार! हर बात में मौन स्वीकृति! वह घबरा उठा है। वह यह सब नहीं सह सकता। वह बगावत, मौन और स्वीकृति रहित जीवन की आदत बनाना चाहता था। ठीक जब तब उसकी इच्छा होती है कि उसकी पत्नी उससे झगड़े, रोये, उलाहने दे, नफरत करे। पर उसे शौक भी है पर उसकी पत्नी चुप रहती है एकदम चुप! पत्थर की मूर्ति की तरह मौन।

अब वह चीखना चाहता है—बोलो, न कर उर्मिला, बस उर्मिला। तुम चुप क्यों रहती हो। मैं तुम्हारा यह रूप नहीं सह सकता। तुम कुछ कह कर बोलो आनन्द!

सरो का मन भर गया है। उसमें कुछ प्रतिक्रिया नहीं होती है। वह खामोश रहती है और मार्तंड परेशान। जीवन इसी घुटनदार खावर्द में सिसकता हुआ गुजर रहा है गुजरता रहेगा।

और कभी-कभी सरो भी चिढ़ कर कहती है 'आप मुझे अधिक तंग न करें। मैं बहुत दुख हूँ दुख ! आप विश्राम क्यों नहीं करते ?

और दोनों प्राणी समुद्र के अंतर में डूबे जाते हैं जैसे उनके चारों ओर मुर्दा तक जीवित हो गये हैं और उन्हें अपने में लील रहे हैं। और वे इतने टूट गये हैं कि उन्हें मिटा नहीं सकते।

एक इन्सान की मौत एक इन्सान का जन्म

●

कार्नेस स्ट्रीट के बस स्टैंड पर, जहाँ सन्ध्या का हल्का हल्का अंधेरा छाने लग गया था वहाँ अनेक लड़कियाँ बगल में पुस्तकें दाबे खड़ी थीं। वे सब हँसमुख थीं ही साड़ियाँ पहने हुए थीं और उनके चेहरों पर आपसी हँसी-मजाक से उत्पन्न ताजगी दिखाई पड़ रही थी। लड़कियाँ आपस में बात चीत कर रही थीं। कभी-कभी उनमें से कोई एक काली सी लड़की अंग्रेजी में फर्राटे से बोलकर सभी का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लेती थी। मैं भी उस झुण्ड को निहारता रहा। न जाने कितनी बसें आईं और गुजर गईं क्योंकि उस स्थान से जाने वाली प्रत्येक बस मेरे गन्तव्य स्थान को जाती थी।

एकाएक एक भारी हाथ पीछे से मेरे कन्धे पर पड़ा। मैं एकदम चौंका। तुरन्त घूम कर देखा—महेश था। उसकी दृष्टि और मुस्कान दोनों में रहस्य भरा हुआ था। वह कुछ देर तक मुझे उसी दृष्टि से देखता रहा और मैं इस अप्रत्याशित मिलन के कारण अवाक् हो गया। मुख से कुछ बोला नहीं गया।

तभी उसने उसी मुस्कान के साथ कहा— "पहचाना नहीं मुझे?" और वह खिलखिलाकर अट्टहास में खो गया।

"तुम्हें कैसे भूल सकता हूँ?" मैंने अपनी आत्मीयता से

गम्भीर स्वर में कहा, "तुम्हारे साथ मेरे अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण क्षण गुजरे हैं। बताओ आजकल क्या चल रहा है?"

"कुछ नहीं।" उसने तुरन्त कहा।

"क्या मतलब?"

"बस कुछ नहीं। कोई काम तुम्हारे ध्यान में हो तो बताना आज-कल मैं बड़ी तंगी में हूँ।" और वह मुझे समीप के एक रैस्तराँ में चाय पिलाने को ले गया।

हम दोनों गिलासों में बहुत ही कड़क चाय पीने लगे। मैंने अपनी दृष्टि रैस्तराँ में लगे किसी बंगाली चित्र के मैले पोस्टर पर जमा कर पूछा, "फिर तुम्हारे उस साप्ताहिक का क्या हुआ? उस प्रेस का क्या हुआ?"

उसके चेहरे पर संकोच की रेखाएँ दौड़ गईं। अब मेरी दृष्टि बहुत पैनी और तेज हो गई थी तथा उसके मुख पर अपलक लगी हुई थी। वह इधर-उधर ताकने लगा और उसने झट से चाय का जलता हुआ एक बड़ा घूँट लिया जिससे उसकी आँखों में पानी तैर आया। अपने रूमाल से अपनी आँखों को पोंछता हुआ वह बोला, "सभी कुछ चला गया चन्द्र भैया, सभी कुछ। अब तो यह शरीर रह गया है और इन्सान का शरीर जिसमें पुरुष का उतनी फूटी कौड़ी भी नहीं उठती। वह जरा भर रुका और मेरी ओर देखता हुआ व्यथापूरित स्वर से बोला, "कोई काम दिलाओगे न? तुम्हें शायद यह मालूम नहीं है कि मुझे टाइप भी करना आता है। मेरी स्पीड ४०-४५ की है।"

मैंने उससे प्रश्न किया, "लेकिन तुम तो घर के अमीर हो। तुम्हारे अपने घर का बड़ा व्यवसाय है, फिर ऐसी दिक्कत क्यों?"

वह चुप रहा। मेरी प्रश्न भरी दृष्टि उस पर जमी हुई थी। चाय के गिलास खाली हो गए थे। वह हठात उठता हुआ बोला, "छोड़ो इन बातों को। बताओ तुम कलकत्ता कितने दिन और रहोगे? बड़े सालों के बाद आए हो? शायद चार-पाँच साल बाद।"

गम्भीर स्वर में कहा "तुम्हारे साथ मेरे अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण गुजरे हैं। बताओ आजकल क्या चल रहा है ?

"कुछ नहीं।" उसने तुरन्त कहा।

क्या मतलब ?"

"बस कुछ नहीं। कोई काम तुम्हारे ध्यान में हो तो बताना काम में करूँ तभी न हूँ।" और वह मुझे समीप के एक रेस्तरां में खिलाने को ले गया।

हम दोनों गिलासों में बहुत ही कड़क चाय पीने लगे। मेरी दृष्टि रेस्तरां में लगे किसी बंगाली फिल्म के भद्दे पोस्टर पर था पूछा "फिर तुम्हारे उस साप्ताहिक का क्या हुआ ? उस प्रेस का हुआ ?"

उसके चेहरे पर संकोच की रेखाएँ दौड़ गई। अब मेरी दृष्टि पैनी और तेज हो गई थी तथा उसके मुख पर अपलक जमी हुई वह इधर-उधर ताकने लगा और उसने कप से चाय का अंतिम एक बड़ा घूँट लिया जिससे उसकी आँखों में पानी तैर आया। रूमाल से अपनी आँखों को पोंछता हुआ वह बोला "सभी कुछ क्या चन्द्र भैया सभी कुछ। अब तो यह शरीर रह गया है और का शरीर जिसमें पुरुष का उसकी फूटी कौड़ी भी नहीं चलती। क्षण भर रुका और मेरी ओर देखता हुआ व्यथापूरित स्वर से "कोई काम दिलाओगे न ? तुम्हें शायद यह मालूम नहीं है कि मुझे भी करना आता है। मेरी स्पीड ४०-४५ की है।"

मैंने उससे प्रश्न किया "लेकिन तुम तो घर के अमीर हो। अपने घर का बड़ा व्यवसाय है, फिर ऐसी दिक्कत क्यों ?"

वह चुप रहा। मेरी प्रश्न भरी दृष्टि उस पर जमी हुई थी। गिलास खाली हो गए थे। वह हठात् उठता हुआ बोला "छोड़ो बातों को। बताओ तुम कलकत्ता कितने दिन और रहोगे ? बड़े

पूरे छह साल बाद। आधा युग बीत गया है। समय की रफ्तार भी कितनी तेज है? ऐसा प्रतीत होता है कि मैंने कलकत्ते को कल ही छोड़ा है।

हम दोनों बाहर आ गये। थोड़ी दूर पर कामक स्ट्रीट का पार्क था। हम दोनों सरदी का मजा लेकर चल रहे थे। अधूरी बात ने मेरे मन में उत्कंठा पैदा कर दी थी। मैंने उससे प्रश्न किया "नहीं भाई, बात क्या है यह मुझे बतानी ही होगी। यदि तुम आनाकानी करोगे तो मैं भूत की तरह तुम्हारे पीछे लग जाऊँगा और सारी रात तुम्हारा पीछा नहीं छोड़ूँगा।"

"बात यह है कि अभी मुझे एक जरूरी काम से जाना है। मैंने अपने एक मित्र को समय दे रखा है। उससे मुझे कुछ रुपए लेने हैं।"

"यह प्रोग्राम तुम्हारा कैंसल ही समझो। जब तक तुम मुझे सही स्थिति से अवगत नहीं कराओगे तब तक मैं तुम्हारा पिंड नहीं छोड़ने वाला हूँ। यह रात है और मैं हूँ। भूत की तरह पीछे लगा रहूँगा।"

"तुम ज़िद न करो। मुझे जाने दो।"

"नहीं जाने दूँगा।" मैंने बालक की तरह हठ करके कहा, "समझ में नहीं आता आखिर तुम मुझ से कोई बात छुपाते क्यों हो? जरा पिछले दिनों को भी याद करो, सचमुच प्रद्युम्न तुम बहुत बदल गए हो?"

पार्क के पास हम दोनों आ गए थे। अंधेरा गहरा हो गया था। पार्क की कुर्सियों पर थके-हारे युवक-युवतियाँ बैठी थीं। सरकारी बत्तियों का पड़ता हुआ प्रकाश उनके चेहरों की उदासियों को स्पष्ट कर रहा था। मेरा अनुमान था कि इस बड़े नगर में वे ही इन बगीचों की बेंचों तथा कुर्सियों पर बैठते हैं जिनके पास होटलों में खर्च करने के पैसे नहीं होते। बड़े बड़े चेहरे घूमते रहे मेरे आगे।

ट्राम की गड़गड़ाहट ने मेरा ध्यान भंग किया। हम दोनों ठीक लैम्प-पोस्ट के नीचे थे। प्रद्युम्न का चेहरा कुछ अवसादजनित विषण्णता से

"पूरे छह साल बाद। आधा युग बीत गया है। समय की रफ्तार भी कितनी तेज है? ऐसा प्रतीत होता है कि मैंने कलकत्ते को कल ही छोड़ा है।"

हम दोनों बाहर आ गये। थोड़ी दूर पर कालेज स्ट्रीट का पार्क था। हम दोनों सरदी का मजा लेकर चल रहे थे। अधूरी बात ने मेरे मन में उत्कंठा पैदा कर दी थी। मैंने उससे प्रश्न किया "नहीं भाई, बात क्या है यह मुझे बतानी ही होगी। यदि तुम आनाकानी करोगे तो मैं भूत की तरह तुम्हारे पीछे लग जाऊँगा और सारी रात तुम्हारा पीछा नहीं छोड़ूँगा।

"बात यह है भाई अभी मुझे एक जरूरी काम से जाना है। मैंने अपने एक मित्र को समय दे रखा है। उससे मुझे कुछ रुपए लेने हैं।"

"यह प्रोग्राम तुम्हारा फेल ही समझो। जब तक तुम मुझे सही स्थिति से अवगत नहीं करायोगे तब तक मैं तुम्हारा पिंड नहीं छोड़ने वाला हूँ। यह रात है और मैं हूँ। भूत की तरह पीछे लगा रहूँगा।

"तुम जिद न करो। मुझे जाने दो।"

"नहीं जाने दूँगा। मैंने बालक की तरह हठ करके कहा, "समझ में नहीं आता आखिर तुम मुझ से कोई बात छुपाते क्यों हो? जरा पिछले दिनों को भी याद करो सचमुच प्रह्लाद तुम बहुत बदल गए हो?"

पार्क के पास हम दोनों आ गए थे। अंधेरा गहरा हो गया था। पार्क की कुर्सियों पर थके-हारे युवक-युवतियाँ बैठी थीं। सरकारी बत्तियों का पड़ता हुआ प्रकाश उनके चेहरों की उदासियों को स्पष्ट कर रहा था। मेरा अनुमान था कि इस बड़े नगर में ये ही उन गरीबों की बेंचों तथा कुर्सियों पर बैठते हैं जिनके पास होटलों में खाना करने के पैसे नहीं होते। उड़े उड़े चेहरे घूमते रहे मेरी आँखें।

ट्राम की गड़गड़ाहट ने मेरा ध्यान भंग किया। हम दोनों ठीक लैम्प पोस्ट के नीचे थे। प्रह्लाद का चेहरा कुण्ठाजनित विवशता से

भरा हुआ था। वह कुछ सोच कर बोला, "स्वामी [illegible] तुम्हारी बड़ी बदनामी है ?"

"कुछ भी समझो।" मैंने उसकी ओर बिना देखे ही कहा, क्योंकि मैं तब ही मन उसके इस व्यवहार को बड़ा अनिष्ट समझ रहा था।

"कहो फिर तुम्हें ?" उसने आँखों से लम्बी दृष्टि इधर उधर दौड़ाई। बैल-मोटर के पीछे कोई नहीं था। थोड़ी दूर पर सड़क के तट दो पुरुष अपनी बातचीत में तल्लीन थे। महन्त ने मुझसे कहा, "कि तुम्हारी ही मैं पूजा देखता हूँ। आज मुझे तुम्हारी सी [illegible] देते हैं, अगर नहीं देता तो मेरी इज्जत धूल में मिल जाती समझो। अब मैं [illegible] हूँ सब हो गया है।" और वह बात कर अपनी राह में चल गया।

मेरे मस्तक में एक दोहरा सा प्रश्न घूमने लग गया। किन्तु [illegible] की तरह मैं निश्चल-निर्विकार खड़ा रहा। महन्त के मन के भावों का तोला [illegible] कर रहा था। उसकी बात मुझसे बहुत कुछ निकल गई थी, मन में विचार-सा कुछ बैठ गया था।

फिर मैं धीरे धीरे कदम उठाता हुआ सड़क पर चलने लगा। घर पहुँच कर कालिन्दी के कूल आया और पड़ रहा। बिस्तरे पर करवटें बदलता रहा। बार-बार सोचता रहा लगातार अपने बारे में — महन्त कुमारी कैसे बन गया ? इसने अपना गर्भस्थ पुत्र ले उठा लिया ? मन को विश्राम नहीं हुआ। लगता था जैसे कभी कुछ मिला हो। [illegible] पतित पापी की तरह। लगा मुझे कोई भ्रम ही गया हो। इसी उधेड़-बुन में मैं सो गया।

दूसरे दिन सुबह ही सुबह मैं महन्त के घर गया। वर्षों के बाद गया था इसलिए उसने बात में मुझे पहचाना नहीं। उसने [illegible] राजस्थानी पगड़ी को बाँधते हुए बाहर आए और कहकर कर बोले "कहिए, आपको कितने रुपए मिले हैं उनसे ? कितने की चिट्ठी (१८ मोर) लिखवाई है ? पर मैं आपका साफ-साफ बताए देता हूँ कि अब मैं उस [illegible] की एक पाई भी देने वाला नहीं हूँ। मुझे [illegible]

मालूम है कि आजकल वह चार लेकर चालीस सिल रहा है।"

मैं उन्हें केवल देखता रहा। जब उन्होंने एक साथ यह कह कर चुप्पी साधी तब मैंने विनीत स्वर में कहना शुरू किया "बाबू जी। आपने मुझे पहचाना नहीं। मैं हूं चन्द्र बीकानेर।"

"अरे चन्द्र बेटा आओ-आओ प्रह्लाद की माँ देखो चन्द्र आया?"

जिन्दगी ने अपनी निर्दयता से जिसकी हर वस्तु छीन ली है ऐसी कंकालवत् एक वृद्धा मेरे समक्ष खड़ी हो गई। उसने मुझे थोड़ी देर देखा फिर ममता भरे स्वर में बोली 'आँखों की ज्योति भी जाती रही बेटा बड़ी मुश्किल से चेहरा पहचान पाती हूँ एक कपूत सारे कुटुम्ब की नैया को डुबो देता है। आ बेटा आ तेरे लिए चाय बनाऊं?"

"नहीं माता जी चाय पीने के बाद ही बिस्तरा छोड़ता हूँ। बड़ी गंदी आदत पड़ गई है। प्रह्लाद कहाँ है?"

उसके बाप ने पगड़ी पहन ली थी। कोट को परखते हुए वह बोले "हमारे लिए वह मर गया और हम उसके लिए मर गए। बेटा उसने हमें कहीं का नहीं रखा समाज में इतना जलील करा दिया है कि हम गर्दन ऊँची उठाकर भी नहीं चल सकते। पन्द्रह-हजार का भुगतान करने के बाद मैंने अपना हाथ रोक लिया। शायद तुम्हें नहीं मालूम? हो भी कैसे? तुम्हारे जाने के बाद वह कुछ रईसजादों के फेर में पड़ा। उनसे मित्रता करने के लिए उसका मन लालायित हो उठा। अपनी हैसियत की परवाह किए बिना वह उनके साथ अनाप-शनाप खर्च करने लगा। धीरे-धीरे वह जुओं में आने लगा। ताश खेलने लगा। पहले एक आना प्वाइंट और बाद में एक रुपया। जमा हुआ धंधा उखड़ने लगा। पत्र बन्द हो गया। प्रेस बिक गया। फिर वह रात-रात भर घर नहीं आता। जुए के अड्डे पुकारने लगा और एक दिन एक पुल के अड्डे में कई जुआरियों के साथ वह भी पकड़ा गया। अखबारों ने खबरें छापीं यद्यपि उसमें कई रईसजादे भी थे नतीजा यह निकला की खानदान की शान मिट्टी में मिल गई।" उन्होंने गहरी सांस लेकर कहा "मैंने सोचा कि

इस मकान में वह सुन्दर बगीचा बन गया। वही बैठकी लालटेन। सब कहता है खूब चहल-पहली होती थी। धीरे धीरे सब बदल गया [illegible] सब दिन बंगले वालों के पलीत था थी।"

'पलीत ! मेरे कुल में कीच की निकली।

यहाँ देख पलीत आ गी। साथसाथ चार छैः दस हजार का देना चुकाना और उसके लड़के सारी उम्र याद रखें कि कब वह कभी भी चुका नहीं सकता पर [illegible] है बीच की लिखा ही थी ये रोता आँसू भर सीना नहीं होगा [illegible] इसी तरह किसका स्वभाव जैसा हो जाता है वह मरने के बाद ही छूटता है। तो उसके लिए समय नहीं। वह जागते ही दिन का राज था बड़ी चालू। वही लालटेन। साथसाथ दिये उसे घर से अलग कर दिया। खानदानी परिवार का बाप उसका लड़का भी भूला है पर तब क्यों ? कुछ पता भी मिलता। हाँ मिन्नी की शादी हो गई। तुम्हारी वह कौन जानता बतायेगा ? [illegible] पर नहीं बन सकी। सारा खानदान हार गई। लोग कहते थे तब यहाँ कभी ऐसा था नहीं ? हीनता के कारण के बस में ही [illegible]। बेटा इस शैतान ने मेरा सर्वनाश कर दिया। और उसकी खोज कर लाई।

मैंने उन्हें सान्त्वना देने के लिए कहा "आप क्या उदास होते हैं बाबू जी।

"और कोई भी दिन दिया जा सकता है ?"

तभी मिन्नी आ गई। बहुत बड़ी हो गई थी मिन्नी। यौवन की लज्जा उसकी आँखों में स्पष्ट झाँकी थी। मैंने हँसी मुस्कान के साथ कहा "मिन्नी तू तो बहुत बड़ी हो गई।"

मिन्नी ने गर्दन नीची कर ली।

"तू बड़ी खुदगर्ज बहन है। जाने के बाद कभी चिट्ठी ही नहीं भेजी ?"

उसने सहमते-सहमते कहा "आप पता भी देकर नहीं गये। आपको चिट्ठी देनी चाहिए थी।"

तभी बाबू जी ने प्रस्ताव उपस्थित किया "मिन्नी का भया के लिए चाय बना ही ला।" मिन्नी चली गई। उसका करुणा-प्लावित मुख मेरे सम्मुख बड़ी देर तक नाचता रहा। पलकों की नीचे तैरती दर्द की छायाएँ उदास-उदास रेखाएँ। मेरा मस्तक पसीज गया। चाय पीकर मैं बैठा ही बाड़ी के मुख्य द्वार पर पहुँचा वैसे ही मिन्नी ने मुझे पुकारा "भैया।"

मैं रुक कर गया था पर मैंने कोई उत्तर नहीं दिया।

"भैया! आप भी प्रमोद को समझाइए न उसके कारण सारे परिवार पर संकट आ पड़ा है। सभी दुखी हैं।" उसका स्वर जरा गीला पूरित हो गया "और मुझ पर तो दुख का पहाड़ टूट पड़ा है। जेल के कैदी की तरह जीवन हो गया है मेरा हर कदम पर माँ खड़ी रहती है मानो मेरा अपना कोई व्यक्तित्व नहीं मेरी अपनी कोई अस्मिता नहीं जैसे मैं अपना भला-बुरा जानती ही नहीं हूँ। हर घड़ी माँ मुझ से जली हुई सी बोलती है। भाई भैया के कारण सभी ओर उसका दुःख मुझे भोगना पड़ रहा है। जानते हैं आप मेरी पढ़ाई बीच में ही छुड़वा दी वर्ना मैं अब मैट्रिक पास कर लेती मुझे किसी से हँसकर बातचीत नहीं करने दी जाती है यहाँ तक कि अपने छोटों से भी। पड़ोसियाँ कहती हैं कि तू आजन्म कुँवारी रहेगी। पुजारी जी खानदान को अपने बिरादरी-समाज में कोई भी बहू नहीं बनाएगा और बाबू जी मुझे अभागी निरभागी ही कहा करते हैं। मैं आपसे हाथ जोड़ती हूँ कि आप भैया को समझाएँ, उनसे कहिए कि वह जिस मिट्टी के लिए प्राण देने को तत्पर रहते थे उसकी जरा दुर्दशा तो देखिए।" मिन्नी की आँखें सजल हो गईं। मेरा मन भी भारी हो गया। तभी 'मिन्नी-मिन्नी' की करुण पुकार हुई और मैं उनसे विदा लेकर चला आया। आते-आते प्रमोद का पता भी पूछ आया।

चौथे रोज मैं प्रमोद के घर पहुँचा। मुहल्ले का नाम मुहल्ला ' एक छोटी सी बाड़ी में वह एक कमरा लेकर रहता था। कमरे की खिड़की

दीवार ओढ़कर वे बैठी थीं। इन दस वर्षों में उनके दो बच्चे और हो गए थे। उनकी वह मस्ती व चपलता उदास रही थी। उनकी देह पहले जैसी ही भोली थी। मुझे देखकर ही वह उदास कर हंसी-खुशी रहीं बाद में जिसकर कहीं मुस्कान बिखेर कर बोलीं ... कब आए? हमारा बहन को याद था नहीं?

उसने मेरे लिए चाय बोली दिया थी। मैं उन पर वे ... हुआ बोला "नहीं, बोलता ही जाता हूँ। किसी से बातचीत किये हो गया था।"

"क्या बहाना बना रहे हो? आजकल तुम कहाँ रहते ... भाभी बड़े एक मैं होते हैं।"

पता नहीं क्यों मुझे बरदाश्त हुआ? ऐसे हँसते हुए धीरे से कहा "कई एक दिन न होते तो मन दुख ही न पड़ जाती।"

भाभी बड़ा उदास हो गई। मेरे अकार का उनके हृदय पर चोट का आघात लगा। वह दुःखी हुई सी बोली "काश मुझे किसी खुशी बाँटने लायक ही तो मौका होते हैं। ... कितना बदसूरत जीवन है? उनके बीच मेरे बीतते वाले भी कुछ के पीछे में बात नहीं करते। उन में भी गाँव के जमाने दे कोई शोर-शराबा नहीं रहो किन्तु उन्हें ... देखना भी ... ऐसी बात को सुनते हो क्यों! बस उनकी ही उम्रें। लगता और ... उनके लिए कुछ भी नहीं। कई बार पहले माँ ने भी लिखे थे मेरी मदद की पर इस बार भी वह हो गई। मेरे पिता की यह इच्छा है कि तू ऐसे घरबार-लड़के को छोड़कर अपने घर क्यों नहीं आती? मैं समझ सकी कि तू कितना है। ... पर मैं इन्हें छोड़कर नहीं जा सकती। बुरे दिन में ही पत्नी की परीक्षा होती है। कुछ भी हो आखिर ऐसा आखिर यह है तो मेरे पति? ... पास में सामने आज तक किसी भी नहीं आती है? यह कोई खुशी बात है भी है? कभी खिलखिलाते बच्चों को देखकर रो पड़ते हैं पर खुशी प्रकट नहीं करते।"

मल्हार आ गया था। उनके साथ मिली। मुझे देखते ही वह लिपट

पड़ा "तुम्हें मैंने मना किया था फिर भी तुमने अपने मन की पूरी की। तुम्हारी यह प्रवृत्ति मुझ से सहन नहीं हो सकती।"

मैं उठ खड़ा हुआ और बोला "अपनापन मुझे यहाँ तक खींच लाया। जिसने सौहार्द और बन्धुत्व में विलय कर दिया। प्रभुदा! गुस्सा करना छोड़ दो।" मेरा स्वर अन्त में भारी हो गया।

"नहीं ऐसा अब नहीं छूटता। तुम समझते हो कि मैंने चेष्टा नहीं की। बहुत की पर हर बार हिस्टीरिया के रोगी की तरह मेरा मन कुएँ के मुँह पर जाने के लिए छटपटाने लगता है। बीबी का अनुरोध बच्चों की दयनीयता और घर की तबाही सभी कुछ उस समय के पीछे ओझल हो जाते हैं और मैं...।" वह एक दम रुक गया "तुम यह नहीं जानते कि मैं किसी को कितना चाहता हूँ। इस बहन को मैंने फूलों की डाली की तरह अपने इन हाथों से पाला-पोसा है। इसके एक-एक आँसू को सुखाने के लिए मैंने सौ-सौ मुस्कान बिखेरी है। किन्तु क्या करूँ? इसी बहन के जीवन को मैंने जहर बना दिया है। मैं इसके दर्द को खूब जानता हूँ पर मेरी परवशता सबसे अधिक शक्तिमान और क्रूर है।"

वह पश्चात्ताप की आग में जल रहा था। कमरे में सन्नाटा छा गया। मिन्नी की आँखें भरी-भरी सी हो गईं। विषम-विचार चारों ओर व्याप्त सा हो गया।

मैंने आत्मविश्वास के साथ कहा "मनुष्य तत्पर हो तो प्रत्येक दुर्गुण छोड़ सकता है। संसार में असम्भव कुछ भी नहीं है।"

वह तरल भरी हँसी हँस पड़ा "सूक्तियाँ बोलने में बड़ी सहज होती हैं पर प्रयोग में उतनी ही दुष्कर हैं। खैर, जब तुम सभी लोग ऐसा ही समझते हो तो समझते रहो। मैं जुआ मरने पर ही छोड़ूँगा। अब तुम जा सकते हो।"

मैंने जाते हुए गुस्से से कहा "तुम्हारे साथ कोई मजबूरी नहीं है तुम बरबादी पर उतर आये हो और जो व्यक्ति बरबादी पर उतर आता है उसे कोई भी शक्ति वापस नहीं ला सकता।" मैं दुःख की

दीवार सीमेन्ट से पोती थी। इन दस वर्षों में उसके दो बेटियाँ और हो गई थीं। उसकी वह अंगीठी व धातु उदास रही थी। उसकी देह पहले जैसी ही मोटी थी। मुझे देखते ही वह हड़बड़ा कर इधर-उधर हटी और में विस्मय भरी मुस्कान बिखेर कर बोली "कब आए आप? हमारी बहन को लाए या नहीं?"

उसने मेरे लिए एक पीढ़ी बिछा दी। मैं उस पर बैठता हुआ बोला "नहीं, अकेला ही आया हूँ। दिल्ली में अचानक विचार हो गया था।"

"क्या बहाना बनाते हो? जानबूझ कर नहीं लाते। आप सभी मर्द एक से होते हैं?"

पता नहीं क्यों मुझे मजाक सूझा? मैंने हँसता हुआ धीरे से कहा "मर्द एक से न होते तो आप दुखी न पड़ जातीं?"

भाभी प्रभा एकदम उदास हो गई। मेरे मजाक का उनके हृदय पर चोट का आघात लगा। वह दुखी हुई सी बोली "आप मुझे कितनी दुखी मानते रहिए, मैं तो मोटी ही होऊँगी। अब आप ही देखिए न? कितना बदहवास जीवन है? इसके बीच मेरे पीहर वाले भी मुझ से सीधे मुँह बात नहीं करते। उन्होंने भी उन्हें समझाने में कोई कोर-कसर नहीं रखी किन्तु इनके सिर पर जाने किसका जादू है! किसी बात को सुनते ही नहीं! बस उल्टी ही उल्टी। बच्चे और पतिव्रताएँ इनके लिए कुछ भी नहीं। कई बार पहले माँ ने भी दिनों तक में मेरी मदद की पर अब वह भी बन्द हो गई। मेरे पिता जी का कहना है कि तू ऐसे आवारा-आदमी को छोड़कर अपने घर क्यों नहीं आती? मैं समझ लूँगा कि तू विधवा है। पर मैं इन्हें छोड़ कर नहीं जा सकती। बुरे दिन में ही पत्नी की परीक्षा होती है। कुछ भी हो भैया आखिर यह हैं तो मेरे पति? इन बच्चों के सामने आज तक किसी की नहीं चली है? यह कोई सुखी थोड़े ही हैं? कभी बिलखिलाते बच्चों को देखकर रो पड़ते हैं पर चुप्पा छोड़ नहीं सकते।"

मदारी आ गया था। उसके साथ मिन्नी। मुझे देखते ही वह लिपट

कहा, "तुम्हें मैंने मना किया था फिर भी तुमने अपने मन की पूरी की। तुम्हारी यह प्रवृत्ति मुझ से सहन नहीं हो सकती।"

मैं उठ खड़ा हुआ और बोला, "भगवान मुझे यहाँ तक खींच लाया। जिसने सौहार्द और बन्धुत्व ने विवश कर दिया। प्रह्लाद! जुआ खेलना छोड़ दो।" मेरा स्वर अन्त में भारी हो गया।

"नहीं छूटता बन्धु, नहीं छूटता। तुम समझते हो कि मैंने चेष्टा नहीं की। बहुत की पर हर रात हिस्टीरिया के रोगी की तरह मेरा मन जुए के अड्डे पर जाने के लिए छटपटाने लगता है। बीवी का अनुरोध बच्चों की दयनीयता और घर की तबाही सभी कुछ रह जाते हैं पीछे पीछे रह जाते हैं और मैं ...।" वह एक दम रुक गया, "तुम यह नहीं जानते कि मैं सिन्नी को कितना चाहता हूँ। इस बहन को मैंने फूलों की डाली की तरह अपने इन हाथों से पाला पोसा है। इसके एक-एक आँसू को सुखाने के लिए मैंने ढेरों-सी मुस्कान बिखेरी है। किन्तु क्या करूँ? इसी बहन के जीवन को मैंने जहर बना दिया है। मैं इसके दर्द को खूब जानता हूँ पर मेरी दुर्बलता सबसे अधिक शक्तिशाली और क्रूर है।"

वह पश्चात्ताप की आग में जल रहा था। कमरे में सन्नाटा छा गया। सिन्नी की आँखें भरी-भरी सी हो गईं। विषम-विचार चारों ओर व्याप्त सा हो गया।

मैंने आत्मविश्वास के साथ कहा, "मनुष्य तत्पर हो तो प्रत्येक दुर्गुण छोड़ा जा सकता है। संसार में असम्भव कुछ भी नहीं है।"

वह नरम भरी हँसी हँस पड़ा, "सूक्तियाँ बोलने में बड़ी सहज होती हैं पर व्यवहार में उतनी ही दुष्कर हैं। खैर, जब तुम सभी लोग ऐसा ही समझते हो तो समझते रहो। मैं जुआ मरने पर ही छोड़ूँगा। अब तुम जा सकते हो।"

मैंने जाते हुए उससे यह कहा, "तुम्हारे साथ कोई मजबूरी नहीं है। तुम खुदगर्जी पर उतर आये हो और जो व्यक्ति स्वार्थपरता पर उतर आता है उसे कोई भी सही रास्ते पर नहीं ला सकता।" मैं हवा

तरह चला आया।

लगभग चार साल बाद मैं एक सम्मेलन में भाग लेने के लिए कलकत्ता पुनः आया। सम्मेलन से निवृत्त होने के बाद एक दिन हम लोग चौरंगी पर घूम रहे थे कि एकाएक मुझे प्रह्लाद की सूरत से कुछ मिलता-जुलता कोई व्यक्ति दिखाई पड़ा। उसे देखते ही मुझे प्रह्लाद याद हो आया। दूसरे दिन मैं उसी छोटी सी बाड़ी में पहुँचा। वहाँ न मालूम हुआ कि प्रह्लाद यहाँ से चला गया है। मैंने सोचा कि शायद किराया न चुकाने की वजह से मकान-मालिक ने उनका सामान नीलाम करा दिया होगा। मैं उनके बाद भी बाड़ी गया।

द्वार पर बूढ़ा-सूखा सा एक इन्सान मुझे दीखा। उसकी दाढ़ी बढ़ी हुई थी और उसने मैली-सी धोती पहन रखी थी। उसकी आँखें भीतर धँसी हुई थीं और वह बूढ़ा-सा लग रहा था। मैं उसके सामने खड़ा हो गया। वह फीकी मुस्कान के साथ बड़े ही धीमे स्वर में बोला "आओ चन्दू कब आए भैया? बाबू जी ऊपर हैं। मैं थोड़ी देर में आता हूँ।

मैं उसकी गम्भीरता से उससे कुछ भी प्रश्न नहीं कर पाया। चुपचाप ऊपर चला गया। एक अजीब-सी उदासी वहाँ के वातावरण को घेरे हुए थी घुटन और तड़प! बाबू जी हिसाब-किताब में तल्लीन थे। मैंने उनका ध्यान भंग किया। वह मुस्कराते हुए बोले "आओ बेटा आओ कब आए?

"कुछ दिन हो गए।"

और आए ही अब?"

"फुर्सत नहीं मिली।"

'बैठो चाय तो पीओगे न? अरे मैं भी क्या हूँ इसके बिना तुम्हें पूछ रहा हूँ। प्रह्लाद की माँ! चाय तो बना ला। और वह थोड़ी देर तक स्तब्ध से बैठे रहे। मुझे निहारते रहे। मेरे देखते-देखते उनकी आँखें भर आई। मैंने चकित होकर पूछा 'क्या बात है बाबू जी?

बाबू जी ने थूक निगलते हुए बड़ी कठिनाई से कहा पिछली बार

तुम्हें मिली मैं चाय पिलाई थी और आज मिली ।

"क्यों मिली को क्या हुआ ?" मैंने व्यग्रता से पूछा ।

"मिली हमें सदा के लिए छोड़कर चली गई ।

मैं पत्थर हो गया । बाबू जी मेरे सामने आठ-आठ आँसू बहा रहे थे । माँ भी आकर रोने लगी थी । कितने क्षण बीते मैं नहीं जानता परन्तु जैसे ही मैं होश में आया मैंने अनुभव किया कि मैं रो रहा हूँ । मैंने रुँधे स्वर में कहा "क्या हुआ मिली को ?"

"मैं बताऊँ ?" रंगमंच के अभिनेता की तरह प्रकाश ने कमरे में प्रवेश किया । मेरी प्रश्नभरी आँख उसकी ओर उठ गई । वह खड़ा खड़ा हँसते स्वर में बोला "मैंने उसे मार दिया । मैंने उसकी हत्या कर दी । मेरे जुआरी ने उस कली के सारे सपनों को मिटा कर रख दिया । चन्द्र । अब मैं जुआरी नहीं हूँ । मैंने जुआ खेलना बन्द कर दिया । अब मैं नौकरी करता हूँ पर वे दो आँखें ? नहीं नहीं मैं उन्हें नहीं भूल सकता । मिन्नी की आँखें नहीं भूली जा सकती । और वह अबोध बालक की तरह रोता हुआ भीतर चला गया ।

चाय के प्याले ठंडे हो गए ।

मैं उन्मन-सा उठा भाभी के पास गया । भाभी बेचारी सूख सूखकर पिंजर हो गई थी । चेहरा उभरी हुई हड्डियों की वजह से कुरूप लगने लगा था । मैंने कृत्रिम हँसी के साथ अनिच्छा से परिहास किया "अब क्यों दुबली हो रही हो ?"

भाभी कुछ देर मेरी ओर देखती रही और बाद में खिड़की की राह अनन्त पर दृष्टि फैला कर बोली "पता नहीं क्यों आपके भैया के इस रूप का मुझे उस रूप से अधिक भय लगता है ? यह प्रशान्त शान्ति यह असह्य मौन यह एकरसता और यह उदासीनता सच मैं उनके इस अमूल परिवर्तन से हर घड़ी चिन्तित रहती हूँ । हर घड़ी आशंका बनी रहती है कि कोई अघट होने वाला है कोई आँधी आने वाली है । चन्द्र भैया अब वह सहज नहीं है ।

"यह सहन भी हो जाएगे। बहन का आधार है न ?"

"हाँ मिन्नी ने आत्महत्या की ।"

"आत्महत्या ?"

"हाँ।" उसने टूटे स्वर में कहा "उस रात ज़ोर का तूफान आया था भयानक तूफान ! तूफान के साथ बादलों की भयावह गर्जना मूसलाधार वर्षा। तब मिन्नी बाई इस कमरे में अकेली सोती थी पता नहीं कब वह बाहर गई और कब उसने छत से कूद कर प्राण दिए, वह सब अचानक रात को कोई भी नहीं जान सका। बाबू जी को सुबह ही पता चला। हंगामा मच गया। हमें उस बाड़ी में बुलाया गया। सुनते ही वह बेहोश हो गए। बड़ी मुश्किल से यहाँ लाए। हाय ! कितना वीभत्स दृश्य था ? मैं उन्हें नहीं देख सकी। और वह पागलों की तरह हाहाकार करने लगे। उन्होंने अपना सिर फोड़ लिया मूर्छित हो गए। मिन्नी बाई ने मरने के पूर्व एक पत्र लिखा था अपने भैया के नाम।" भाभी उठी और वह पत्र निकाल कर ले आई। तोतरकर पढ़ने लगी—भैया ! मैं सदा के लिए जा रही हूँ। बहन एक ओस चिरैया होती है एक न एक दिन उसे दूसरे की बगिया में जाना ही पड़ता है। हँसती गाती उड़ती महकती सभी का अटूट अनुराग लिए हुए वह दूसरे की गृहलक्ष्मी बन जाती है। बाप का लाड़ माँ की ममता और भैया का दुलार सभी कुछ उसके अनुराग की विदाई के समय उसके अन्तस में केन्द्रीभूत हो जाते हैं। और मेरी इस अनन्त यात्रा की बेला में सभी का प्यार मेरे साथ है किन्तु तुम्हारा नहीं। क्योंकि तुम शैतान के हुक्म से चलते हो तुम्हारे भीतर का इन्सान मर चुका है। तुम से प्रार्थना है कि मेरी अर्थी को अपने दिल में उस शैतान को बसाए हुए मत छूना। शैतान का स्पर्श मेरे परलोक को भी इहलोक की तरह बिगाड़ देगा। अगर छूओ तो अपने भीतर नए इन्सान को जन्म देकर जो मुझ जैसी अभागी बहन का जीवन न ले बल्कि उसे युगों-युगों तक खुशियाँ लौटाता रहे। जिसके स्पर्श से अलौकिक आनन्द मिले" "भैया ! मरने

में पहले मेरे मन में किसी का दुख है तो तुम्हारा ! तुम मुझे बचपन में मिन्नी कहते थे। जानते हो मिन्नी (बिल्ली) की आँख कितनी तेज होती है, अँधेरे में भी चमकती है, उस मिन्नी की बड़ी-बड़ी आँखों को चूमकर उसे आकाश में उछाल दिया करते थे और मैं धम से तुम्हारे हाथों में गिर जाती थी। खिलखिलाकर हँस पड़ती थी और तुम्हारा चेहरा मेरी खिलखिलाहट को देखकर फूल-सा खिल जाता था। उस मिन्नी के जीवन को तुमने कितना नीरस और निदय बना दिया। उसका हर क्षण मुझे उत्पीड़ित करता रहा। वेदना पहुँचाता रहा।

क्या करूँ भैया शायद तुम्हें मेरी पीर का अहसास नहीं है किन्तु मुझे तुम्हारी दुर्दशा और निर्लज्जता ने विवश और उद्विग्न बना दिया है। मेरे लिये वह असह्य है तीमपहीन है। कुछ दिन पूर्व मेरी एक सहेली ने स्नेहसिक्त स्वर में कहा "अरी मिन्नी क्या तू आजन्म कुँवारी रहेगी ?"

मैंने कहा "क्यों ?"

"कुमारी की बहन किसी चोर की बहू ही बन सकती है। भला आदमी उसे अपने घर में पाँव नहीं रखने देगा।" और मैं इधर देख रही हूँ कि उसका कथन सत्य हो रहा है। मुझे कोई भी अपनाने को तैयार नहीं। तुम्हारा साया हर जगह खड़ा रहता है। और तुम्हारी लाडली बहन किसी चोर की बहू बने यह तुम सह सकते हो पर मैं नहीं। इसलिए मैं सदा-सदा के लिए जा रही हूँ। बाहर भीषण तूफान है। बादलों की गर्जना से लग रहा है कि आज वे पृथ्वी पर बड़ा भारी कहर ढाने वाले हैं। सुनती आई हूँ—जब देवता अप्रसन्न हों तब ऐसी प्रलयकारी घड़ी होती है। कुछ भी हो मेरे लिए दोनों ही लाभदायक है। अच्छा भैया अन्तिम बार प्रणाम ! सुनो तुम मेरा नाम को मत डुबाना। माँ को तो तुमने पहले ही मार-सा दिया है उसके नैनों की ज्योति छीन ली है। ओह ! तुम कितने हृदयहीन हो गए हो। —

अन्तिम बार तुम्हें ही प्रणाम ! क्यों हृदय तुम्हें बार बार प्रणाम करता

कहना तो दूर रहा बल्कि मुहल्ले वालों के हृदय में यह धारणा थी कि यदि सोमली को कुछ कह दिया तो जाईन बाबू उन सारों पर कहर ढायेगा। इसलिए वे सभी दिल से सोमली की इज्जत करते थे जितनी एक सच्चरित्रा की। वैसे सोमली मुहल्ले के दुःख-दर्द में काम आती थी। हरएक के संकट में भागकर जाती थी।

बापू विधुर था। उसकी बीवी जीवन-यात्रा की दो मंजिलें तय कर अचानक छूट गयी थी। विवाह के दो वर्ष बाद उसे हल्का-सा बुखार आया। रात को बापू ने उसे दूध पिलाकर सुलाया और सुबह उसकी नींद अमर नींद बन गयी। बापू को उसके लिए पश्चात्ताप था पर उसकी आँखों में आँसू नहीं आये थे क्योंकि उसे अपनी बीबी पसन्द नहीं थी। उसके मन प्राण में अपने मुताबिक की अजीब बहू सोमली का रूप बस गया था। वह गुमसुम हुआ छत पर बैठा रहता था। उसे महसूस होता था कि सोमली छत पर अपने बाल सुखा रही है। उसके बाल इतने लम्बे हैं कि वे कमर के नीचे तक चले आये हैं। उसके बालों को देखकर उसे उन कहानियों पर विश्वास होने लगा कि एक राजकुमारी हर रात खिड़की से अपने बाल लटका देती थी और उसका प्रेमी उसके महल में केश पकड़कर चला जाता था। कभी-कभी उसे भ्रम-सा होता था कि हवा में उसके बालों के गुच्छ की खुशबू बसकर उसे मदहोश कर रही है और वह प्रतिमा-सा निश्चल बैठा रहता था।

मंगला दुबला-पतला और हरामखोर था। वह बिना मेहनत के जीवन गुजारना चाहता था। इतना ही नहीं बुरी लत के कारण अफीम भी खाता था। अफीम की पिनक में वह निर्जीव-सा पड़ा रहता था और सोमली की सेज के फूल बिना छुए ही मुरझा जाते थे। वह मंगले को कुछ नहीं कहती थी। घूँघट में लिपटी वह कोल्हू के बैल की तरह काम करती रहती थी। सुबह वह उठकर कुएँ से पानी के मटके लाती थी। बाजार से सौदा लाती थी। चक्की पीसती थी। गोबर थापती थी और बाद में वह उन उपलों को बेचने चली जाती थी। घूँघट वह कभी

नहीं उठाती थी। जिनकी उसे नज़ोकी कहती थी और कम के कारखाने का मालिक सेठ मनोहर सदा उस पर गिद्ध-दृष्टि लगाये बैठा रहता था। किन्तु सोमसी ने उसे कभी भी अवसर नहीं दिया। सोमसी अपने काम से काम रखती थी। उसे मजदूरी से वास्ता था। हाँ वह बापू से अक्सर परेशान थी। बापू उसे मन से प्यार करता था। रास्ते में घेरकर प्यार की प्रार्थना करता था। तब वह भयभीत हिरनी-सी खड़ी रहती थी। वह उसकी किसी बात का उत्तर नहीं देती थी। बापू उसके मौन से परेशान हो जाता था।

अपनी पत्नी की मृत्यु के दो माह बाद बापू की दशा एक उन्माद ग्रस्त प्राणी-सी हो गयी। उसे लगने लगा कि वह पागल हो जायेगा। उसका सिर बिना सोमसी के फट जायेगा। उसे उठते-बैठते सोमसी का मुखड़ा लहरों के बीच झिलमिलाते चाँद की तरह लगने लगा। आखिर एक दिन सोमसी का हाथ पकड़ ही लिया।

ऐसी ही एक दोपहर थी। जलता आकाश और तपती पृथ्वी के कारण पशु-पक्षी भी नहीं दिख रहे थे। उस समय सोमसी लाल ओढ़नी में अपना सौन्दर्य झलकाती बाजार जा रही थी। बापू ने उसको पकड़ अपने घर में खींच लिया। वह कुछ बोले इससे पहले ही उसने उसके मुँह पर हाथ रख दिया। जैसे सोमसी उसकी मुखरता से आशंकित थी हो।

सोमसी ने पहली बार अपना मौन तोड़ा। वह नागिन-सी एक कोने में खड़ी हो गयी। उसके गोरे ललाट पर पसीने की बूँदें चमक उठीं। उसकी झील-सी गहरी प्यारी आँखों में असीम दुख झलक आया। वह अविचल-स्वर में बोली "पराई स्त्री के साथ जबरदस्ती (बलात्कार) करना धर्म नहीं है।"

बापू ने अपने हाथों को बुरी तरह पटकाकर कहा "मैं तुम्हें चाहता हूँ मैं तुम्हारे बिना जिन्दा नहीं रह सकता। रात-दिन तुम्हारा मुखड़ा सोमसी!" और वह आगे बढ़ा। उसकी बाहों ने सोमसी के रेशमी

शरीर को लपेटना शुरू कर दिया। सोमनी ने बड़ी दीनता से कहा "भगवान ने तुम्हें ताकतवर इसलिए नहीं बनाया कि तुम दूसरों की इज्जत को धूल में मिलाओ और आदमियों की पगड़ियाँ उछालो। यह अन्याय है बाबू! दिल को प्यार से जीता जाता है तलवार से नहीं। अगर तुमने मेरे संग जबरदस्ती की तो मैं अपने शरीर को आग लगाकर मर-मिट जाऊँगी।" सोमनी की आँखों में आँसू उमड़ आये। वह प्यार से सिसक पड़ी। सिसककर उसने बाबू की ओर देखा। बाबू को लगा संसार की सारी व्यथा सोमनी की आँखों में है। धीरे-धीरे वह शिथिल होने लगा। उसकी आत्मा उसे धिक्कारने लगी। उसकी वासना की चिनगारियाँ बुझने लगीं। वह हवा की तरह सोमनी के सामने से हट गया।

सोमनी को मंगने से शिकायत थी कि वह बाबू को डांटे कि वह उसकी बीवी को आगे जाने न छेड़ा करे। मंगना गया भी बाबू के पास। पर बीवी की शिकायत न करके वह उससे दो रुपए उधार मांग लाया। उन दो रुपयों की उसने खूब शराब पी। उस शराब के नशे में उसने बाबू की बड़ी प्रशंसा की और बोला "वह एक शरीफ आदमी है। आज उसने मुझे पिलाया।" मंगने के चेहरे पर निलज्जता नाच उठी।

सोमनी का मन अपने पति के प्रति घृणा से भर आया। उसे लगा कि यह कैसा मर्द है! इसमें जरा भी गैरत नहीं। कायर और पौरुषहीन!

धीरे धीरे मंगने में परिवर्तन आने लगा। आजकल उसके पास पर्याप्त पैसा दिखता था। जब कभी भी सोमनी पूछती तो वह कहता था "आजकल मैं सेठ मनोहर के यहाँ काम करता हूँ।" सोमनी ने मजदूरी पर जाना बन्द कर दिया। जब उसका पति कमाता है तो वह औरों के यहाँ मजदूरी करने क्यों जाय?

इधर उसने बाबू के जीवन में बड़ा परिवर्तन देखा। आजकल वह [illegible]

घटना के बाद गोमती के हृदय में एक कोमल भावना जाग गयी थी—बापू के सद्व्यवहार और उपेक्षा से और सजीव व मुखर हो गयी। कभी-कभी गोमती के मन में यह प्रश्न जाग जाता था "आजकल बापू छत पर क्यों नहीं आता उसकी ओर क्यों नहीं देखता ?" वह तब घंटों छत पर बैठी रहती थी। किन्तु बापू छत पर नहीं आता था। आता भी था तो उसकी ओर नहीं देखता था। इससे गोमती के मन में अपमानजनित पीड़ा की लहर उठ जाती थी। वह आवेश में उन्मत्त-सी हो जाती थी। उसकी इच्छा होती थी कि वह बापू का हाथ पकड़कर डाँटे कि वह उसकी ओर क्यों नहीं देखता ?

अन्त तो उसने हद कर दी। वह स्नान करके छत पर चढ़ी। बापू छत पर झाड़ू लगा रहा था। गोमती सदा की तरह नहीं लजायी। वह कुछ क्षण तक झाड़ू लगाने में तन्मय बापू को देखती रही। देखते देखते उसका मन करुणा से भर आया। वह भावनाभिभूत हो उठी। उसने जोर से खंखारा। बापू ने उसकी ओर एक उड़ती नजर फेंकी और वह अपने काम में तन्मय हो गया।

गोमती कस गयी। घुटन में भर उठी। साथ ही एक विचित्र कारुणिक भावना से उसका अन्तर भर आया। वह साड़ी सुधारकर नीचे आ गयी।

दोपहर।

आज बापू जल्दी आ गया था। वह तांगा खोलकर घोड़े की मालिश करने लगा।

गली में सन्नाटा था। शून्यता थी। वह मालिश करके घोड़े को कुएँ के पास ले गया पानी पिलाने। तभी उसने देखा—गोमती सिर पर मटका रखे आ रही है। उसने अपनी दृष्टि सूने आकाश की ओर की। गोमती आयी। उसने हौज में मटका भरा। बापू के मन में द्वन्द्व मच गया। उसकी इच्छा हुई वह तपस्वी मुनि की तरह एक दृष्टिघूँट में गोमती के सौन्दर्य-सागर को पी ले पर उसके अपने मन के गुलाम

को रोक लिया । वह सब कुछ हारे हुए जुआरी की तरह चला ।

दो कदम भी नहीं गया था कि सोमली ने पुकारा "मिजाज बहुत बढ़ गया है ! आँख उठाकर देखते ही नहीं !"

बापू के पाँव रुक गये ।

"मटकी तो ऊँची कर दो ।"

बापू उसके पास आया । मटकी को उठाया तत्क्षण में उसकी दृष्टि उसके गौर से मुख पर गयी । सोमली के होठों पर शैतानी भरी मुस्कान थिरक उठी ।

"तुम मुझ से नाराज हो ?"

"नहीं ।"

"फिर आजकल इतने बदल क्यों गये हो ?"

"तुम्हें पाने के लिए ।" कहकर बापू जल्दी से नीचे उतर गया ।

सोमली ठगी-सी खड़ी रही । फिर वह चली बहुत धीरे मानो उसके मन ने बापू के प्यार को स्वीकार कर लिया हो ।

अंधेरा अजगर की तरह कच्चे-छोटे मकानों को अपने लील गया था । बापू बारह बजे वाला सिनेमा खत्म करके आया था । वह घोड़े के शरीर पर हाथ फेर रहा था । हाथ फेरकर घर के भीतर गया । ढिबरी जलायी ।

तभी उसे कदमों की आहट सुनायी पड़ी ।

"कौन ?"

"मैं ।

"सोमली !

"हाँ ।

"इतनी रात गये ?"

"मन नहीं माना । बापू तुमने मुझे प्रेम से जीत लिया । मैं हार गयी । मैं हार गयी । वह रुआँसी होकर उसके चरणों में बैठ गयी । उसके चेहरे की भावनामिश्रित उत्तेजना और कालिमा ढिबरी केहर के

प्रकाश में स्पष्ट लक्षित हो रही थी।

"गोमती! तुम शादीशुदा हो।"

"प्यार के बीच शादी दीवार नहीं बन सकती।"

"तो मुझे बहुत चाहती हो?"

"न चाहती तो इस तरह तुम्हारे पाँव पड़ती?

"किन्तु!"

"मुझे अधिक मत सताओ। मैं सचमुच हार गयी।"

"फिर तुम मेरे पास सदा के लिए चली आओ। छोड़ दो अपने पति को।" बापू ने दीवार की ओर मुँह करके कहा।

गोमती की वासना एकदम गायब हो गयी। वह झट से खड़ी होकर बोली "क्यों?"

"मैं चाहता हूँ तुम सदा मेरे साथ रहो।

"नहीं-नहीं-नहीं।" वह एकदम चीख-सी पड़ी।

"पड़ोसी भी रहते हैं।" उसने गोमती को सावधान किया।

"ओह! तुम कुत्ते के कुत्ते ही हो। तुम्हारा दिल पत्थर का टुकड़ा है।" और गोमती चली आयी।

बापू की वही गति थी। वही मौन और वही अन्तर्मुखता। अपने काम से काम। पर गोमती ने अपने हृदय की आवाज़ के विरुद्ध बगावत कर दी। उसने भी वही रवैया अख्तियार कर लिया। वह भी बापू से नहीं बोलेगी। वह गुण्डा है। उसमें कोई भी परिवर्तन नहीं आया। वह उसे भरे बाजार में बदनाम करना चाहता है। नहीं वह ऐसा नहीं करेगी।

किन्तु एक घटना और घटी।

बापू किसी बरात में बाहर चला गया था। मंगला उस रात अफीम की पिनक में होते हुए भी जाग रहा था। लगभग बारह बजे किसी ने दरवाजा खटखटाया। मंगला उठा। उसने किवाड़ खोले।

"आ गये मनोहर बाबू?"

"हाँ।"

मैं लोगों से हर मंगल आने का बहाना बना रहा हूँ। आप   ।

रही   ।"

"आप चिन्ता न करें यह कुछ भी नहीं कहेगी। मैंने सारी बात कर रखी है।"

"मैं तुम्हारा सारा कर्ज माफ कर दूँगा।"

"और पचास रुपए की बात ?"

"वह भी दूँगा।"

मंगला चला गया।

चाँदनी के धुँधले प्रकाश में सोयी हुई सोमली का चेहरा साफ दिखता था। मनोहर उसके पास बैठ गया। सोमली ने आँखें खोल दीं। देखा तो झटके के साथ खड़ी हो गयी।

"तुम कौन हो ?"

"अरे मुझे नहीं पहचाना। क्या तुम्हें मंगले ने नहीं बताया कि आज मैं यहाँ आने वाला हूँ ?"

वह मंगल की ओर झपटी।

"वह बाहर चला गया है।" सेठ मनोहर ने हँसकर कहा "आज से मैं तुम्हें शहर के बाहर वाली कोठी में रखूँगा। यहाँ मुझे बापू का बड़ा डर लगता है।" कहकर उसने सोमली का हाथ पकड़ लिया।

सोमली के तन-बदन में आग लग गयी। उसने कड़ककर कहा "भला चाहते हो तो इसी समय वापस जाइये।"

"और मेरे रुपये ?"

"मैं कहती हूँ, चले जाइये। वर्ना मैं शोर कर दूँगी। आदमियों को इकट्ठा करके आपको जलील करा दूँगी।"

"खूब! खसम बुलाता है और बीबी धमकी देती है। सोमली मैं सेठ हूँ। बापू के साथ रहने से तुम दुखों के सिवाय कुछ नहीं पाओगी। मेरे संग चलो आनन्द ही आनन्द मिलेगा और तुम्हारा पति भी यही

चाहता है।

"आप चले जाइये।" उसने भड़ककर कहा।

सेठ बरसाती के भय से चला गया। उसके जाते ही वह फूट-फूटकर रोने लगी। गंगला आकर चुपचाप सो गया। उस रात सोमली को नींद नहीं आयी। रोते-रोते उसकी आँखें सूज गयीं। सुबह गंगले ने बेहयायी से कहा "चाय?"

सोमली ने उसकी ओर जलती दृष्टि से देखा और चाय बनाने लगी।

बापू लौट आया। उसने कई बार सोमली से मिलने की चेष्टा की पर वह नहीं मिल सका। आखिर बात क्या है? उसका हृदय धड़कने लगा। वह सोमली को चाँदी की तश्तरी देना चाहता था जो उसे बरात में मिली थी। वह तश्तरी बहुत सुन्दर थी।

आखिर रात हो गयी। रात भी ढल गयी। दूसरी सुबह आयी। वह अपने मन को नहीं रोक सका। जैसे ही गंगला जंगल गया वैसे ही वह सोमली के पास जा पहुँचा। वह 'सोमला-सोमला' पुकारता हुआ घर में घुस आया। सामने ही सोमली बैठी थी—मुरझाये फूल-सी। वह उसे देखकर हतप्रभ हो गया।

"क्या तुम बीमार हो?" उसने दर्दभरी दृष्टि से देखकर पूछा।

वह चुप रही। उसने अपनी दृष्टि दीवार पर जमा दी और पाँव के अँगूठे से जमीन कुरेदने लगी।

"चुप क्यों हो? बोलो न, तुम्हें मेरी कसम।"

सोमली फूट-फूटकर रो पड़ी। उसकी सिसकियाँ हृदयविदारक थीं। बापू ने उसे अपने सीने से लगाकर दुलारा।

"क्या बात है सोमली?"

सोमली ने रोते रोते सारी बातें सुनायीं। बापू का मन क्रोध से भर गया। तश्तरी को जमीन पर फेंकता हुआ वह बोला "मैं उसकी जान निकाल दूँगा। उसके टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा।

"मैं उसकी आँखें निकाल लूँगा। तू चिन्ता न कर, मैं तेरा बदला लूँगा।" कहकर बापू बाहर चला गया।

सोमती विमूढ़-सी खड़ी रही-की-रही। जब बापू उसकी आँखों से ओझल हो गया तब उसे होश आया। वह बाहर की ओर भागी किन्तु बापू चला गया था। वह क्या करे? वह किस तरह बापू को रोके? वह भँवर में पड़ी नाव की तरह घूमती रही। फिर वह सेठ के उस कारखाने की ओर भागी।

वह जैसे ही वहाँ पहुँची उसने देखा—वहाँ भीड़ जमा थी। बापू को कई आदमी पकड़े हुए थे। सेठ के सिर से खून बह रहा था। बापू के हाथ के चाकू से भी खून की धारा बह रही थी और बापू कह रहा था, "आगे से उस रास्ते से गुजरा तो सेठ जिन्दा नहीं छोड़ूँगा। शेर की तरह तेरा खून पी जाऊँगा। सोमती को बेसहारा मत समझना।" और वह शेर की तरह दहाड़ता हुआ लौट आया। सोमती भी वहाँ से तुरन्त अदृश्य हो गयी थी।

जब उसने घर में कदम रखा तब सोमती को उसने वहाँ बैठे पाया। वह उसे प्यार भरी नजर से देखता रहा, देखता रहा। खून की बूँदें अब भी चू-चूकर उसकी बनियान पर पड़ रही थीं। सोमती का हृदय प्यार से भर आया। आँखें आँसुओं से भर आयीं। वह बापू से लिपटकर बोली "मैं सदा के लिए तुम्हारे पास आ गयी हूँ। मैंने पिछले सारे नाते रिश्ते तोड़ दिए हैं। अब मैं तुम्हारी हूँ केवल तुम्हारी। मैं तुम्हारी ही पत्नी बनने के काबिल हूँ। इस तन की रक्षा तुम्हीं कर सकते हो।"

और वे उस दिन से एक हो गये। बंगला दूसरे मुहल्ले में चला गया। झुग्गी बन्द हो गया। पर किसी ने सोमती से यह नहीं पूछा कि आखिर उसने अपने पति को क्यों छोड़ा? हाँ यह सब अभी जमाने से कहते हैं कि वह निहायत गिरी हुई किस्म की स्त्री है जिसने अपने भोले-भाले गरीब पति को छोड़ दिया है।

———

मिस प्रभु और उनका फोड़ा

●

वह फिर अकेली घूमने आयी थी।

सांझ के डूबते सूरज के समय जब क्षितिज का रंग रक्ताभ हो जाता था और नीले स्वर्ण रूपी आकाश में दो-चार श्वेत बगुलों की तरह उड़ते थे तब मिस प्रभु अपनी सहेलियों के साथ घूमने आया करती थी। वह कभी भी उदास नहीं लगती थी और उसके कहकहों से सारी पर्वतीय घाटी गूंज जाती थी। वह बहुत बातूनी थी और उसके चेहरे पर सदा मुस्कानों के बादल तैरा करते थे। हास-परिहास उसकी साधारण बातचीत में सदा रहता था।

रंग गोरा चेहरा कुछ अधिक चौड़ा इसलिए कम आकर्षक। स्वास्थ्य अच्छा। वस्त्र अत्यन्त आधुनिक ढंग के। उम्र यही तीस-पैंतीस। एकांत से घबराने वाली। यही कारण था कि उसने अपने मकान में अपनी दो सहेलियों को और रख छोड़ा था। वे दोनों सहेलियां कुंआरी थीं और छुट्टियों में अपने घर चली जाती थीं। तब मिस प्रभु उस सन्नाटे से एक-दो दिन तो खूब घबरायी रहती थी मन उखड़ा-उखड़ा सा रहता था और वह कोशिश करती थी कि उसकी ड्यूटी रात की रहे। रात को भी वह अपने घर में अकेली नहीं सोती थी। पलंग के पास अपनी नौकरानी को सुलाती थी और उससे और फिर अंतिम झपकी तक हास-परिहास-युक्त वार्तालाप

करती थी।

रात को कभी-कभी उसकी नींद उचट जाती थी। अंधेरे में मन व्याकुल हो जाता था। शून्य उसके रोम को रौंदने लगती थी और कमरे की परतें धीरे धीरे उसके मन पर जमने लगती थी। तब वह घबरा जाती थी और कमरे में तुरन्त उजाला कर बैठी थी। पगली बौराती रामी को जगाती—"रामी! ओ रामी!"

रामी हड़बड़ा कर उठ जाती। अपनी आँखों को मलती हुई पूछती "क्या बात है मालकिन?"

"बात यह है कि तू सोते-सोते हँस क्यों रही थी?

"हँस रही थी?" वह विस्मय से पूछती।

"हाँ हँस रही थी। इस तरह हँस रही थी कि मैं घबरा गयी। मुझे लगा कि तुझे कोई भूतनी लग गयी हो! बता सच्ची बात क्या है?"

"कुछ नहीं।"

"मुझ से छिपाती है?"

"नहीं तो!"

"क्या तूने अपने पति को सपने में देखा था?

"नहीं तो!"

"जरूर देखा" वह अपने शब्दों पर जोर देकर कहती। "तेरी आँखों में चोरनी लज्जा बता रही है।" वह इसी तरह निरर्थक और बिना सिर-पैर की बातें किया करती थी।

रामी कुछ उत्तर न देती। धीरे-धीरे प्रभु की बड़ी-बड़ी आँखों में नींद घुसने लगती। बात का सिलसिला वहीं खत्म हो जाता। प्रभु नींद में खुर्राटे भरने लगती और रामी उसे कोसने लगती। उसकी नींद उचट जाती। दृगों से दूर, बहुत दूर भाग जाती। जल्दी वापस नहीं आती। वह बेचारी करवटें बदलते-बदलते परेशान हो जाती।

इस तरह मिस प्रभु का जीवन गुम-गुमाती हुई लहरों की तरह बल

रहा था । वह बदनाम-गुमनाम दोनों थी । उसकी सभी सहेलियाँ कहती थीं "यह न हो तो जीवन में उदासी ही उदासी छा जाय ।"

इतना सब कुछ होते हुए भी मिस प्रभु की पुरुषों की सोसाइटी नहीं के बराबर थी । उसे वह जहाँ तक हो सकता किनारा ही करती थी हालाँकि वह खुद डाक्टर थी उसका काम अनेक डाक्टरों से पड़ता था पर वह उनसे उतना ही सम्पर्क रखती थी जितना आवश्यक होता था ।

प्रायः वह रात की ड्यूटी लेती थी—अपनी ही नहीं अपनी साथी डाक्टरनियों की भी । जब कभी वे इससे अनुरोध करती यह सहर्ष स्वीकार कर लेती । विवाहिता से कहती "भारत की भूमि अत्यन्त उर्वरा है । सभी पावन-श्रेष्ठ नदियाँ यहीं पर बहती हैं । पंडित नेहरू के अनुरोध का ध्यान रखना ।" और कुमारियों से कहती "तुम पर मैं दया भी करना नहीं चाहती और तुम लोगों की उदासी भी नहीं सह सकती । मेरी एक बात को मानना—हर कदम देखभाल कर उठाना । खाली समय में औरत का दिमाग सही ढंग से बहुत कम सोचता है । वह एकांत से घबरा जाती है और घबराहट में अत्यन्त गलत निर्णय कर लेती है ।"

ये बातें वह प्रायः ही दोहराया करती थी । दोहराते समय वह गम्भीर नहीं लगती थी । उसके होंठों पर वही निश्छल व्यंगभरी मुस्कान थिरकती थी । उसकी सहेलियाँ भी उसका कुछ बुरा नहीं मानती थीं । वे सब उसको खूब समझ गयी थीं ।

मिस प्रभु अपने मरीजों में बहुत लोकप्रिय थी । वह उनके लिए ममता की साक्षात प्रतिमा थी । रात के सन्नाटे में जब हड्डियों को ठिठुराने वाली सर्दी पड़ती बर्तनों में रखा पानी बरफ की तरह जम जाता धमनियों के रक्त का प्रवाह रुका-रुका सा लगता बाहर चंचल सी नीरवता छायी रहती तब मिस प्रभु अपने ड्यूटी रूम से निकलती । खुली खिड़कियों को बन्द करती रोगिणियों को लिहाफ ओढ़ाती,

उसकी छाती पर हाथों को हटाती ताकि वे अचानक और छुपे अपने न देखें। वह तड़पती हुई रोमिली को सान्त्वना देती। उसे ढाढ़स और धैर्य बंधाती तब उसकी आकृति पर वही अलौकिक वात्सल्य दीप्त हो जाता। तब उसे कोई नहीं कह सकता था कि यह वही बातूनी प्रभु है जो चक-चक और अनर्गल प्रलाप किया करती है। उस समय उसके चेहरे पर प्रौढ़ महिला जैसी गम्भीरता होती थी।

सुबह वह अपने घर चली जाती। रामी से एक दो उपहास की बातें करती बाद में दैनिक कार्य से निवृत्त होकर सो जाती है। ग्यारह बारह बजे उठती और फिर वही उल्लासमय गतिमान जीवन में व्यस्त हो जाती है।

किन्तु उस दिन मिस प्रभु अत्यन्त व्यग्र दिखायी दी। चिंता की रेखाएँ उसके मुख पर दौड़ रही थी और वह आकुल-व्याकुल सी थी। उसने पुकारा "रामी !"

'क्या है ?

"वे दोनों मास्टरनियाँ कहाँ गयीं ?"

"दस दिन के लिए बाहर चली गयी हैं।"

"कहाँ ?"

"कैम्प में।"

"क्यों ?"

"मैं क्या जानूं ? उसने भोलेपन से कहा।

मिस प्रभु और भी बेचैन हो उठी। वह टूटकर पलंग पर पड़ गयी और बड़ी देर तक अपने विचारों में तन्मय रही। बाद में धीरे-धीरे उसने अपनी साड़ी को ऊँचा किया। उसकी नंगी पिंडलियाँ चमक उठी और साड़ी जांघ के अर्ध भाग तक आकर रुक गयी !

उसने आतंकित दृष्टि से देखा—फोड़ा ! रोम-टूटा फोड़ा ! वह अबोध बालक की तरह उसे देखती रही। अनार के अप्रत्याशित दाने की तरह उभरा फोड़ा उसकी गोरी जांघ पर चमक रहा था। उसने उस पर

हाथ फेरा। उसे मीठी-मीठी गुदगुदी हुई। उसे दर्द मीठा-मीठा लगा। वह बड़ी देर तक उस पर हाथ फेरती रही। सुखद अनुभूति ने उसे विभोर कर दिया। चिड़िया की तरह चहकने वाली प्रभु की आँखें भर आयीं।

रामी ने बिना पूर्व सूचना के कमरे में प्रवेश किया। वह अपनी मालकिन को रोते हुए देखकर भौंचक्की-सी रह गयी। व्याकुल स्वर में बोली "क्या बात है मालकिन ?"

मिस प्रभु ने अपनी अश्रुभरी दृष्टि से उसे देखा। वह कुछ बोली नहीं। विषाद की छाया ने उसके मुख को बहुत ही करुण बना दिया था जिससे रामी का मन भी उदास हो गया।

क्षण भर तक निस्तब्धता छायी रही।

"क्या बात है ? रामी ने फिर मौन तोड़ा।

"फोड़ा"

"कहाँ ?"

मिस प्रभु ने कांख की ओर संकेत कर दिया। वह अपने आँचल से अश्रु पोंछने लगी।

रामी खिलखिला कर हँस पड़ी। उसकी हँसी से सारा कमरा गूँज उठा। मिस प्रभु विमूढ़ हो गयी। वह इतने जोर से क्यों हँसी यह नहीं समझ सकी। जब प्रभु के समक्ष किसी कारण का उद्घाटन नहीं हुआ तब वह अबोध बालक की तरह सहज स्वर में बोली 'तू हँसी क्यों ?"

"मैं इसलिए हँसी कि आप डाक्टरनी होकर भी एक जरा-सा फोड़ा होने पर रोती हैं ?

मिस प्रभु गम्भीर हो गयी। उसकी दृष्टि में प्रश्न चमका जिसे उसने अपनी मुस्कान में विलीन करना चाहा पर रामी सहम गयी। जिस तेजी से मिस प्रभु के चेहरे पर विचारों के परिवर्तन हुए उन्होंने रामी को आतंकित कर दिया। वह निश्चय भी नहीं मिस प्रभु के चेहरे का अवलोकन करती रही।

"रामी ! मिस प्रभु ने उसे आश्वस्त करने के लिये कहा—"मैं एक

फोड़े से घबरा जाती हूँ। एक बार पहले भी मेरी दूसरी ओर में ऐसा ही फोड़ा हुआ था जिससे मैं घबरा गई थी। पूरे एक माह के बाद भरा था। देखो यह रहा उसका दाग।" कहकर उसने अपनी दूसरी कोख भी नंगी कर दी। उसमें एक गहरा निशान दाग था।

"बहुत अजीब दाग है!" रामी ने पुतलियों को नचाकर कहा।

"तभी तो मैं घबरा गयी थी!"

"फिर आप डाक्टर से इलाज क्यों नहीं करती?"

"भाड़ ती!"

किन्तु मिस प्रभु ने चार रोज तक कुछ भी दवा नहीं की। उसने अस्पताल से छुट्टी ले ली पर उस फोड़े के इलाज को कुछ ही रखा और रामी को भी मना कर दिया कि वह उस फोड़े का जिक्र किसी से भी न करे। इन चार दिनों में उसने उस फोड़े का जो दुर्वह दुःख सहन किया उसे या तो रामी जानती थी या स्वयं वह।

चौथी रात फोड़ा अपने पूरे जोर पर था। पीब भर गयी थी और सारी कोख तवे की तरह लाल हो गयी थी। मिस प्रभु उसे सहलाती रहती थी और जब पीड़ा अधिक होती तो वह नशे की गोलियाँ ले लेती थी। रामी को कुछ समझ में नहीं आ रहा था। "दर्द की वासना भी कोई चीज होता है! फिर आखिर तो दर्द के नाम से डरती भी है।" किन्तु उसमें इतना भी साहस नहीं था कि वह जरा दबाव देकर पूछे कि आखिर इस तरह तड़पने में क्या मजा मिलता है?

आधी रात हो गयी।

मिस प्रभु के पास लैम्प की हरी रोशनी सीमित वृत्त में फैली हुई थी। उसका हल्का प्रकाश मिस प्रभु के मुख पर पड़ रहा था और वह अपनी कोमल हथेली से फोड़े को सहला रही थी। रामी स्पष्ट होकर सो गयी थी। पहले उसने अपनी मार्मिकसे अत्यन्त आग्रह किया था कि वह क्यों नहीं बताती कि आखिर इस कोख के फोड़े को पालने में उसका कौन [illegible]

धीरे सीत्कारती रही थी। उसके अधरों पर दर्द चमक-सा रहा था प
दृष्टि में दर्दभरी कई चिनगारियाँ उठ-उठकर बुझी जा रही थीं।

गहरी चुप्पी से उकता कर रानी ने अन्त में कहा था 'आखि
आप नहीं बताती हैं तो मैं कहूँगी कि आपका माथा नहीं है।" और
सो गयी थी। सोते ही उसे गहरी नींद आ गयी जैसे वह घोड़े बेच
सोयी हो।

मिस प्रभु के सम्मुख मदन का चित्र दृश्य की तरह म
पड़ा—

'कल यह फोड़ा फूट कर ही रहेगा। खून और पीब की धार मेरी सारी बाँह को लहूलुहान कर देगी। इसके सौन्दर्य और मैन दात-सी सुकोमलता को विकृत कर देगी। इसे कुरूप बना देगी। दिनों के लिए शायद ।"

"लेकिन-लेकिन मैं नहीं जानता मैं कल तुम्हारा आपरेशन कर ही।" प्रभु के प्रेमी मदन ने कहा था।

"आखिर क्यों?"

"क्यों-क्या? कहीं विषैला हो गया तो?"

"मुझे विषैला नहीं हो सकता।

"इसलिए नहीं हो सकता कि तुम डाक्टर हो! क्या डाक्टर बीमारियाँ नहीं होतीं?"

"तुम समझते क्यों नहीं मदन, फोड़ा है, अपने आप ठीक जायेगा।"

"डार्लिंग, रोग उपचार से ही ठीक होता है। मैं कल इसका आ परेशन कल ही, चाहे तुम लाख चिल्लाना। भागोगी तो बेहोश कर दूँगा। आखिर मैं तुम से सीनियर हूँ।

"अच्छा बाबा, अच्छा।" मिस प्रभु ने उसे देवता की तरह हाथ जोड़े। मदन ने उन बँधे हुए हाथों को अपनी कोमल हथेलियों बीच ले लिया। प्यार से उन्हें पकड़े रहा। मिस प्रभु अपने जोड़े

पीड़ा दर्द क्षण भर के लिए भूल गयी।

"क्या सोच रहे हो ?" प्रभु ने पूछा।

"सोच रहा हूँ इन हाथों को जीवन पर्यन्त न छोड़ूँ ?"

लजा गयी थी प्रभु। नैन झुक गये और गालों पर लालिमा झलक उठी। वह कुछ बोली नहीं देखती रही तृष्णा भरी दृष्टि से। पता नहीं कब मदन ने उसके होंठों को रसीला कर दिया था। वह विमुग्धता में जान भी न सकी।

मदन और प्रभु के बीच पारस्परिक वार्तालाप में आते ही परिचय हो गया था। धीरे धीरे सम्पर्क बढ़ा और प्यार ने अँगड़ाई ली। मदन उत्तर प्रदेश का निवासी था और प्रभु राजस्थान की। प्रभु के माँ-बाप नहीं थे। नाना ने उसे डाक्टर बना दिया था। शादी करने के बारे में वह स्वतन्त्र थी। उस पर किसी तरह का जातीय प्रतिबन्ध नहीं था। मदन सुन्दर था—डाक्टर था। दोनों की जोड़ी खूब फबेगी। किन्तु दोनों में एक दूसरे से स्पष्ट दिल खोलकर नहीं कहा। ऐसी परिस्थिति भी नहीं आई।

और, एक दिन यह अवसर आ ही गया।

मिस प्रभु की कोख में फोड़ा हुआ। मालूम पड़ते ही मदन आया और उपचार करने लगा। मिस प्रभु ने साफ कह दिया कि वह न तो आपरेशन करायेगी और न ही दवा लेगी।

"क्यों ?" मदन ने पूछा।

"इसलिए कि मैं इसे ठीक नहीं समझती।"

मदन उसके हठ के समक्ष कुछ बोला नहीं। वैसे जब-जब समय मिलता तब-तब भागा उसके पास आता था और उसके फोड़े को देखता था। प्रभु को यह अच्छा लगता था। मदन की अँगुलियों का स्पर्श उसके मन में सरगम का संगीत भर देता था। पीड़ा मीठी-मीठी और भी प्यारी हो जाती थी। धीरे धीरे फोड़ा बिगड़ गया। पर मिस प्रभु की एक भी न चली। मदन ने उसका जबरदस्ती आपरेशन कर दिया। प्रभु को जरा

भी कष्ट न हुआ। वह इन्जेक्शन भी लेने लगी।

पट्टी बाँधते हुए मदन ने पूछा "इतने दिन तक तुमने आपरेशन क्यों न करने दिया? व्यर्थ ही कष्ट भोगा। अब यह घाव भरेगा भी बहुत देर से।"

"मुझे तड़पने में आनन्द आता है" उसने आकुलता से कहा।

"अच्छा!"

मिस प्रभु ने गर्दन हिला दी जैसे कह रही हो कि "हाँ"। वस्तुतः मिस प्रभु ने इस फोड़े का बहुत ही शुक्रिया अदा किया क्योंकि इससे उसके और मदन के बीच की झिझक-झेंप मिट गयी। वे अत्यन्त समीप आ गये। उनके अरमानों के फूल खिल उठे। उल्लास के स्रोत फूट निकले।

प्रभु ने एक दिन उसे अपनी बाँहों का सहारा देते हुए कहा था "कब शादी करोगे?

"जल्दी ही। मदन ने कहा।

"पिताजी को लिखा?"

"लिख दिया।"

"क्या उत्तर आया?"

"उन्होंने मुझे बुलाया है।"

"कब जा रहे हो?"

"अगले सप्ताह।"

पर अगले सप्ताह ही मदन की दूसरे शहर में बदली हो गयी। मिस प्रभु को यह अच्छा नहीं लगा। उसने मदन से अनुरोध किया कि वह अपनी बदली का आर्डर कैंसिल करा दे। चाहे उसके लिए कुछ रुपये खर्च हो जायें तो भी कोई परवाह नहीं। मदन ने उसे आश्वासन दिया कि वह प्रयास करेगा।

पर मदन की बदली होकर ही रही।

मिस प्रभु ने उसे आँसू भरी विदाई दी और कहा कि तुम्हें जल्द

बे-अस्त विवाह करने का प्रयास करना चाहिए। मैं अब इस बारे में बहुत थक चुकी हूँ। मेरा मन अधिक असमंजस में नहीं रह सकता।"

मदन ने इसकी इजाजत दी। वहीं से वह छुट्टी लेकर चल गया। एक बार वह नहीं लौटा। क्या करे बिना प्रभु? उसके पास उसके घर का पता भी नहीं था। हर पत्र में लिखता था कि मैं दो चार दिन में आ रहा हूँ। इससे प्रभु ने पता लगाने की अधिक चेष्टा भी नहीं की थी।

प्रभु की दशा विक्षिप्त जैसी थी। आखिर मदन लौट आया। उससे मिला। दो-तीन दिन आमोद प्रमोद में बिताकर वह वापस नौकरी पर चला गया।

"शीघ्र ही हम मधुर बन्धन में बंधेंगे।" मदन ने जाते समय उससे कहा था।

दो वर्षों के बाद मदन का कोई पत्र नहीं आया। इसने कई पत्र डाले। आखिर वह घबरा उठी। कहीं मेरा मदन बीमार तो नहीं हो गया? वह दुश्चिन्ताओं से अधीर होती गयी। उसे हर घड़ी अहित का आभास होता था। अनायास असमय की आशंकाओं में वह डूबी सी रहती।

एक दिन वह चुपचाप रवाना हो गयी अपने मदन के पास।

दूसरे दिन मदन के शहर में पहुँची। मदन नहीं था उस दिन। रात ड्यूटी करके गया था अभी-अभी। उसने घर का पता लिया। बस चढ़ी उसी में। उसके दिल में उल्लसित सपने तैर रहे थे। वह उसकी मादकता में विभोर हो गयी। आँखों के आगे आँसुओं के बादल छा गये।

"कहाँ चलूँ बीबी जी?" ताँगेवाले ने उसका ध्यान भंग किया।

"बड़े चौराहे की दूसरी गली में।"

ताँगा दूसरी गली में घुस पड़ा।

उसने एक आदमी से पूछा "क्वार्टर नम्बर ५१५ कहाँ पर है?"

आदमी ने अपनी गोल-गोल आँखें मिचमिचाईं जैसे वह सोच रहा हो फिर कर्कश स्वर में बोला— "उस बड़े वृक्ष के आगे।" ताँगा

चूम लिया ।

"मैं जानती हूँ" वह अभी सोया हुआ होगा । उसका बलिष्ठ शरीर रेशमी बिस्तरे पर इस तरह लेटा हुआ होगा जैसे कोई संगमर्मर सजीव होकर निद्रा में निमग्न हो । मुझे देखकर वह चौंक उठेगा और अपनी विशाल बाहों में भर लेगा । मैं उसे नहीं रोकूँगी । आखिर वह मेरा होने वाला पति ही तो है !" वह सोचती जा रही थी ।

तांगा रुक गया ।

"ठहरना भैया" कहकर वह उस द्वार की ओर बढ़ी । उसने कुंडी खटखटाई । द्वार खुला । एक सुन्दर-सुघड़-सलोनी युवती उसके समक्ष खड़ी थी । उस युवती ने प्रणाम करके पूछा— "आप किसको चाहती हैं ?

"डाक्टर मदन को ।"

"आइये वे आप ही रहे हैं" कह कर युवती ने बड़े आदर भाव से उसे चलने का संकेत किया ।

प्रभु के मस्तिष्क में उस युवती ने अनेक प्रश्न उत्पन्न कर दिये । पर हालात ऐसे थे कि वह कुछ पूछ न सकी ।

"डाक्टर साहब !" युवती ने पुकारा ।

मदन ने गर्दन उठायी । विस्मित-सा हो गया । हठात् मुँह से निकला "तुम ?"

"हाँ मैं" उसने कठोर स्वर में कहा जैसे वह पौरुष तूफान के रुख को पहचान गई हो ।

"प्रमिला यह मेरे साथ काम करती थीं नाम है मिस प्रभु" "और ये हैं मेरी पत्नी प्रमिला ।"

"नमस्ते" प्रमिला ने कहा ।

"कैसे आना हुआ तुम्हारा ?"

"काम है ।"

"इनका सामान तांगे में है जाकर लाते क्यों नहीं ?" प्रमिला

से कहा।

"नहीं बहन जी मैं अपनी सहेली के यहाँ ठहरूँगी। वह यहीं पास में रहती है। मुझे जाने की इजाज़त दीजिये।"

"पर क्यों ?"

"बस यूँ !" वह हवा की तरह घर से बाहर चली आयी। वह उसी समय वापस चली आयी। उसका हृदय चीत्कार कर उठा। उसे लगा कि वह जंगल में जाकर ज़ोर-ज़ोर से चीख अपना सिर फोड़े बालों को नोचे। कहीं वह पागल तो नहीं हो जाएगी ?

मिस प्रभु कई दिन तक गुमसुम बनी रही। बाद में सहज हो गई। उसने प्रण कर लिया कि वह कभी भी विवाह नहीं करेगी। तब से वह धीरे-धीरे बातूनी बन गयी। उस एकान्त और नीरवता को अपने पास फटकने नहीं दिया जो उसे दुर्दिनों का स्मरण करा देती थी।

किन्तु यह दूसरी चोट का फोड़ा ! नाटक समाप्त हो गया।

रात बहुत ढल गई थी। रंगीन चलचित्र की तरह कुछ देर के लिए साकार होकर बाहर अँधेरे में लोप हो गया था। हरी बत्ती का प्रकाश सागर की सतह जैसा अब भी फैला हुआ था। मिस प्रभु अपनी चोट के फोड़े को सहला रही थी। दर्द आज फिर तीव्र हो उठा था। आज वह फिर इस फोड़े को क्यों पनपने दे रही है ? वह इस मर्म से अज्ञात है। सोचने का प्रयास करती है पर मृग-मरीचिका की तरह उसे शून्य ही मिलता है। वह क्यों यह पीड़ा भोग रही है ? मदन की स्मृति फिर उसे कुरेदने लगी। वह भावना में बह गई। उसे लगा कि वह फोड़े को इसलिए जीवित रख रही है कि उसके अचेतन मन में एक दुराशा है कि कभी मदन आयेगा और कहेगा "मैं इसका आपरेशन करूँगा।"

प्रभु घबरा गयी। प्रीति के वे मधुर क्षण उसकी आँखों के समक्ष नाचने लगे। उसने हारे हुए सैनानी की तरह अपने मन-कपाट बन्द कर लिए। उसने कमरे में अन्धेरा कर दिया।

पीड़ा बढ़ रही थी। स्मृतियाँ पीछा नहीं छोड़ रही थीं।

अँधेरे में लगा कि मदन उसके पास खड़ा है। कह रहा है— "क्यों पीड़ा भोग रही हो? मैं आज आपरेशन करूँगा। इसका मवाद निकालूँगा।"

"हूँ!" उसका अन्तर्मन भड़क उठा।

"मैं ठीक कहता हूँ।"

"तुम मुझे स्पर्श कर लोगे तो मैं अपनी जान दे दूँगी। दुष्ट नीच! आखिर तुमने यह ढोंग क्यों रचा? मेरे जीवन में कभी न खतम होने वाली वीरानियाँ और तनहाइयाँ क्यों भर दीं? मैं कहती हूँ मरने दो मुझे! मेरे फोड़े को हाथ मत लगाना मदन मदन! मैं तुम्हारा स्पर्श भी अब सहन नहीं कर सकती। जाओ ! और उसने अपनी पीप को पेट में समेटने की चेष्टा की। दर्द तीव्रतम होकर तड़पाने लगा। फिर एकाएक कम होने लगा। भावनायें टूटकर बिखर गईं। वस्तु-जगत प्रकट हो गया। उसने लपककर बड़-स्विच दबाया। कमरे में फिर हरा प्रकाश फैल गया। उसने देखा—फोड़ा फूट गया है मवाद बह रहा है उसके शरीर से। वह क्षण भर देखती रही। फिर जोर से चीखी—"रामी! रामी जल्दी से उठ। रामी आ रामी!"

रामी हड़बड़ा कर उठी। उजाला और भी तेज किया।

"क्या है मालकिन?"

"मेरा फोड़ा फूट गया मेरा फोड़ा फूट गया।" उसके चेहरे पर ऐसी अपूर्व खुशी थी जैसे उसे नया जीवन मिल गया हो—जैसे इस फोड़े के मवाद के साथ उसके मन की वे कुंठायें भी निकल रही हों जिन्होंने उसे आवश्यकता से अधिक अन्तर्मुख बना दिया था।

"फूट गया?" रामी ने चौंककर पूछा—उसके चेहरे पर भी अपूर्व खुशी थी।

"हाँ देख न!"

रामी दौड़कर रुई डिटोल और गर्म पानी ले आयी। वह घाव को हल्के-हल्के हाथ से साफ करते हुए पूछ रही थी "आपने इतने दिनों तक

दर्द को क्यों मन ?"

मिस प्रभु मुस्कराती हुई बोली — "तू नहीं जानती मैं अकेली नहीं रह सकती। इसीलिए इस दर्द को साथी बना लिया। तू तो जानती ही है मेरी ये दोनों मास्टरनियाँ दस दिन के बाद आयगी!"

"एक बात कहूँ आप बुरा तो नहीं मानेंगी?"

"नहीं।" उसने पुचकार कर कहा।

"जीवन में सदा साथ देने वाला तो योग्य का अपना वर ही होता है। आप विवाह क्यों नहीं कर लेती? मेरी बात मानिये और झट मँगनी पट ब्याह कर लीजिये।"

मिस प्रभु की आँख मानो खोल पड़ी "मैं अब जरूर करूँगी" पर वह मन में बोली— "दुर पगली मेरा" यह बढ़ कर पीछे गिर रहा है और मुझे विवाह की बातें सूझ रही हैं? उह री दर्द!

रानी धीरे धीरे फोड़े के आस-पास की जगह दबाने लगी। मिस प्रभु के मानस-पट में नया ही चित्र बन गया। मानो साँप को दबाने वाली वे अँगुलियाँ उसके अपने पति की हैं और वह एक बार फिर अपने दर्द को भूल गयी।



गेस्ट हाउस

O

दोपहर में जिस तरह समुद्र का किनारा खाली रहता है उसी तरह सड़कें खाली थीं। इक्की-दुक्की मज़दूर की तरह बसें और दूसरे परिवहन आ जा रहे थे। इतनी बड़ी और व्यस्त नगरी का यह खालीपन मुझे दिलचस्प नहीं लगा। पर यह खालीपन ही इस नगरी की और यहाँ के लोगों की वास्तविकता है। ऊपर से भरा भरा और भीतर से खाली जमीन में एक बहुत बड़े निरर्थक ढोल की तरह खाली।

मैं सफ़ेदपोशी पोशाक पहने हुए घूम रहा हूँ। कहीं भी मन का ठहराव नहीं। रेस्तां सिनेमा घरों और चमक दुकानों के शो-केसों में जाता हूँ थोड़ी देर बैठता हूँ। मन अच्छी चीज़ों सुन्दर औरतों और हरल-मेवा के खाके में क्षण भर के लिए खोता है। फिर उचट-सा जाता है और मैं भटकने लगता हूँ। अचानक जामुन के पेड़ के नीचे खड़ा होता हूँ। लपलपे पत्ते और पत्तों से भूषण जामुन पके हैं। पता नहीं क्यों मैं उनको गिनने लगता हूँ—एक-दो-तीन-चार-पाँच-छः मोरे मोर दिखायी पड़ते हैं। ध्यान इस तरह उन ओर खींचता है जैसे वे मोरे मोर नहीं कुमकुम हैं। दृष्टि ऊपर उठती है। सिनेमा वाले का पोस्टर खामोशन रहस्य बार हो जाता है। फ़ॅसी कम्पनियों की कम्पनियन कार्ड की बनायी हुई सुन्दरियों का स्मरण हो आता है। अजन्ता की चीत

दर्द को क्यों गला ?"

मिस प्रभु मुस्कराती हुई बोली, "तू नहीं जानती। मैं अकेली नहीं रह सकती। इसीलिए इस दर्द को साथी बना लिया। तू तो जानती ही है, तेरी ये दोनों मास्टरनियाँ इस दिन के बाद जायगी!"

"तब बात यही? आप कुछ ता नहीं मानती?"

"नहीं।" उसने मुस्करा कर कहा।

"जीवन में अगर आप इसे मानती तो जीवन का अपना अर्थ ही होता है। आप विवाह क्यों नहीं कर लेतीं? मेरी बात मानिये और यह मेंगनी पर ब्याह कर लीजिए।"

मिस प्रभु की आँखें मानो जाग पड़ीं। मैं अब अन्दर कहूँगी, पर वह प्रकट में बोली— "तू पगली! अगर बात यह कर सोचे फिर रहा है और तुझे विवाह की बातें सूझ रही हैं?" उठती बार।

उसकी धीरे धीरे कोठे के आस-पास की जगह दबाने लगी। मिस प्रभु का भाव-लोक में मना ही चित्र बन गया। मानो आँख को दबाने वाली वे अंगुलियाँ उसके अपने मन की हैं और वह एक बार फिर अपने दर्द को भूल गयी।

— —

मेड हाउस



दोपहर में जिस तरह समुद्र का किनारा खाली रहता है उसी तरह सड़कें खाली थीं। इक्की-दुक्की शहर की तरह बसें और दूसरे परिवहन आ जा रहे थे। पहली बार और ज्यादा यह खामोशी मुझे रुचिकर नहीं लगी। पर यह खामोशी ही इस नगरी की और यहाँ के लोगों की वास्तविकता है। ऊपर से भरा-भरा और भीतर से खाली जमीन के एक बहुत बड़े निरर्थक ढोल की तरह खाली।

मैं देवदासिनुमा पोशाक पहने हुए घूम रहा हूँ। कहीं भी मन का ठहराव नहीं। रेस्त्रां, सिनेमा घरों और अनेक दुकानों के शो-केसों के पास हूँ। थोड़ी देर बैठता हूँ। मन अपनी चीजों, सुन्दर चीजों और तरकीबों के आसपास में थोड़ा भर के लिए खोता है। फिर उचट-उचट जाता है और मैं भटकने लगता हूँ। दरअसल जामुन के पेड़ के नीचे खड़ा होता हूँ। अचानक पके और पीलों के ढेर जामुन पड़े हैं। पता नहीं क्यों मैं उनको गिनने लगता हूँ—एक-दो-तीन-चार-पाँच-छह गोरे पाँव दिखायी पड़ते हैं। ध्यान इस तरह उस ओर खींचता है जैसे वे गोरे पाँव भी जामुन हैं। दृष्टि ऊपर उठती है। किशोरी भाव का [illegible] खामोश खड़ा [illegible] जाता है। [illegible] हुई सुन्दरियों का [illegible] है। [illegible]

र्द को क्यों सहा ?

मिस प्रभु मुस्कराती हुई बोली — 'तू नहीं जानती मैं पढ़ती नहीं पर सकती। इसीलिए इस दर्द को साथी बना लिया। तू तो जानती ही है मेरी ये नेत्रों मास्टरनियाँ इस दिन के बाद आयेंगी !"

"एक बात कहूँ आप बुरा तो नहीं मानेंगी ?"

"नहीं।" उसने मुस्करा कर कहा।

"जीवन में सदा साथ देने वाला तो जीवन का अपना मर्द ही होता है। आप विवाह क्यों नहीं कर लेती ? मेरी बात मानिये और झट किसी से ब्याह कर लीजिए।

मिस प्रभु की आँख मानो बोल पड़ी "मैं अब ज़रूर करूँगी" पर वह प्रकट में बोली — 'दुर् पगली ज्यादा बढ़ चढ़ कर बोले फिर रहा है और तुझे विवाह की बातें सूझ रही हैं ? चल जी कर !

रामी धीरे धीरे फोड़े के आस-पास की जगह दबाने लगी। मिस प्रभु का वातावरण में सदा ही प्रिय बन गया। मानो जीवन को दबाने वाली उंगलियाँ उसके अपने पति की हैं और वह एक बार फिर अपने दर्द को भूल गयी।

— —

हाउस बना दिया है, जहाँ व अपनी अन्तरात्मा व मन और विकृतियों को खुले आम प्रकट कर सकते हैं। यानी "इस नये ढंग के पागलखाने और नये तरह के पागलों के बीच वर्ग जिन्हें घंटे-दो घंटे के लिए छोड़े पड़ते हैं।

हम दोनों चले। सब सड़कें ज्वार भाटे समुद्र की भाँति विभिन्न गाड़ियों से भर गयी थी। सतरंगे बादल उड़ रहे थे और वहीं ऊपर समुद्र की तरह भीड़ को चीरती हुई लग रही थी।

जब हम दोनों मैड हाउस के पास पहुँचे तब बाहर कुछ लोग इस तरह खड़े थे जैसे उन्हें किसी ने लूट लिया है। उनकी उदास-उदास बुझी-बुझी आकृतियाँ सूनी सी लग रही थीं। हम भी उनके पास खड़े हो गये। मैंने अपने दोस्त से कहा "भीतर क्यों नहीं चलते?"

उसने मैड हाउस के दरवाजे की ओर देखा। देखकर उसने लम्बी साँस खींची और बोला "थोड़ी देर यहीं पर ठहरो बाद में चलेंगे।"

मैंने सोचा कि उसने दरवाजे की ओर देखकर यह क्यों कहा? शायद इस मैड हाउस का दरवाजा किन्हीं अदृश्य किवाड़ों से बन्द होगा। मैं चुपचाप वहीं खड़ा रहा। फिर वही क्षण और खामोशी। अचानक मेरे दोस्त ने कहा "चलो।" और वह मेरी बिना प्रतीक्षा किये ही मैड हाउस में घुस गया और पीछे छाया की तरह मैं भी।

"हीं ही ही ही ऽऽ

कहा हा हा हा ऽऽऽ"

तीव्र मिश्रित और घुटा अट्टहास।

दो तरह के अट्टहासों के मिश्रण से अट्टहास का एक नया सन्नाटा पैदा हो गया। मैं एकदम सहम गया। मगर यह मैड हाउस है। मैंने अपनी अनुभूतियों के सहारे अपनी दृष्टि को दौड़ाया—दो जने कोने में अजीब तरह से मेज पर हाथ मिलाते हुए, यह अट्टहास बराबर छोड़ रहे थे। एक साथ मिलाते हुए अपना अपमान और बिना चीज का

जाती थी" कि सहसा मेरा एक मित्र बरबस ध्यान भंग करता है—"अरे तुम भाई कब आये ?

"कल" ।"

"सूचना भी नहीं दी।"

"सूचना देकर मैं तुम्हें परेशान करना नहीं चाहता था। तुम तो जानते ही हो कि मैं कार्यक्रम के अनुसार घर से रवाना कभी नहीं हो सकता।"

"चलो।"

"घर नहीं।"

"बस आ जाओ कहाँ नहीं मत पूछो।"

मेरा मित्र मुझे तीन घंटों तक विभिन्न दफ्तरों में अपने निजी काम से घुमाता रहा। उसके दफ्तरों और वेटिंग रूमों में उसकी प्रतीक्षा करते करते मैं बिलकुल बोर हो गया। इतना बोर कि अन्त में मैंने उसे गुस्सा कर कहा "तुम लोग अजीब हो और अजीब है तुम लोगों की मेहमान नवाजी।

"अरे तुम यार बुरा मान गये। इस दिल्ली की आदत ही ऐसी है। एकदम बैठे बिठाए उलझन मिली। फिर काम न किया जाय तो जीना मुश्किल हो जाता है। आओ तुम्हें ठंडा पानी पिलाऊँ।" मैंने अनिच्छा से पानी पिया।

पानी का गिलास खत्म करते ही उसने अपने आपको कुछ आश्वस्त समझा और कहा "शाम हो गयी है यार! चलो तुम्हें यहाँ का मैड हाउस दिखला लाऊँ।"

"दिल्ली का मैड हाउस ?" मेरी आँखों में प्रश्न नाच उठा।

"हाँ हिन्दुस्तान में अपने ढंग का अनूठा प्रयोग। जिस तरह कैदियों के जीवन को सफलतर बनाने के लिए सरकार ने सुधारवादी दृष्टिकोण अपनाया है और सुधार जेलों का निर्माण किया है उसी तरह संस्कृत और बुद्धिजीवियों के लिए यहाँ के एक पूँजीपति ने एक मैड

बनकर आया तब मैंने उसकी आगवानी में आँखें बिछा दी थी और मैं भगवान श्रीकृष्ण की तरह नंगे पाँव उनके स्वागत हेतु भागता था। लेकिन उसने मुझे ज्योंही देखा त्योंही एक अजीब अजनबी सा भाव बनाया। सचमुच उस तेज दृष्टि को देखते ही मैं सहम गया और मेरी अपनी नजर से पल भर में सारे मैस हाउस की दीवारों का नाप मैं भर लिया।

वह आत्मीय एक अजनबी सा बोला "आप कब आये? कहिए? अत्यन्त फार्मेलिटी। मैं बैठ गया। आस-पास देखा" कई बुद्धिजीवी। लेखक नाटककार, पत्रकार, कलाकार चित्रकार बैठे थे।

"अरे मैंने सुना बम्बई गये थे?" मेरे आत्मीय ने मौन भंग किया। "कुछ काम-धाम बना "यार! अब तुम्हें लिखने के अलावा कुरसी भी पकड़नी चाहिए बिना अच्छे स्वास्थ्य के स्वस्थ साहित्य नहीं लिखा जाता।"

मैं हैरान। कैसी मनःस्थिति है मेरे इस आत्मीय की। फिर उसने उस प्रसंग को छोड़कर मेरा अन्य दोस्तों से परिचय कराया। एक काले डिमन धवल का लेखक बोल पड़ा "मैं आपको पहले से ही जानता हूँ। आप से मिल भी चुका हूँ।"

"मुझे याद नहीं पड़ता।"

"कलकत्ता में अरे उस बार मैं आपके साथ एक बंगाली लड़की थी आप उन दिनों बंगाली जीवन पर एक उपन्यास लिख रहे थे।"

"मुझे याद नहीं।" मैंने निरपेक्षता से कहा।

मेरे आत्मीय को दौरा पड़ गया "ओह! बंगाली लड़की हाय हाय!" उसने मेज पर जोर से थाप मारी। मैंने उसे निहायत बेहूदगी समझा पर वहाँ भी उपस्थिति पर इतनी जोर की थाप का कोई प्रभाव नहीं हुआ। सभी थे अपने अपने में तन्मय और व्यस्त।

बात का तारतम्य वहाँ जरूरी नहीं। बातनों की बात में दिल मिला? नहीं थी। तभी पत्रकार महोदय गम्भीरता से बोले "मैंने

हुए था। मेरे मित्र ने बताया — दोनों एम ए हैं। शायरी करते हैं। आओ तुम्हें मिलाऊँ ?"

मैंने एक बार पूरे मैंच हाउस की ओर देखा। आलीशान फर्नीचर अत्यन्त मोडर्न बनावट। [illegible] पानी। मैं गरमा-गरमा सा आगे बढ़ा। मेरा दोस्त मुझे उनके पास ले गया। हम दोनों मेज के पास खड़े हो गये। हमें देखते ही सिरवाली वाले सज्जन ने कहा "प्यारे मियाँ बरकत आज तुमने मजनूँ जैसी शक्ल क्यों बना रखी है। यार मुहब्बत के मारे हम हैं और परेशान तुम हो रहे हो ?"

मेरा दोस्त बरकत गूँगा हो गया। उसने मेरी ओर साभिप्राय दृष्टि से देखा जैसे वह मुझे कह रहा है—क्यों ? है न इनमें पागलपन ?

तभी सिरवाली फिर बोला "बैठ न यार।" जैसे उसे कोई भूली बात याद हो आयी हो इस तरह वह बोला "आपकी तारीफ ?"

"ये मेरे दोस्त हैं नरेश ?"

"यहाँ कभी देखा नहीं। क्यों जनाब इस जगह से डरते तो नहीं हो ? यह हम इन्टेलेक्चुअल लोगों का मैंच हाउस है। बैठिए न !"

हम दोनों बैठ गये। बैठते ही किसर वाला दुबला युवक मोतीचंद "अमन" चौंककर बोला "यार क्या शेर बना है

या रब इस पल की उम्र हो कयामत तक
जो आये हैं आज एक पल के लिए

एकदम चीख कर बोला "ओमी यार न शेर शायरी को। हाँ मियाँ बरकत उस लौंडिया का क्या हाल-चाल है ?" उसने आँख मारी। बरकत का हाथ जोर से दाबा। अमन यार सीमार को थमाकर अपनी शायरी की दुनिया में खो गया। मैं प्रश्न भरी दृष्टि से दोनों को देखता रहा। वे दोनों अत्यन्त अश्लील बातें करते रहे।

एकाएक किसी ने बरकत को पुकारा। हम दोनों उठे। दूसरी मेज पर गये। वहाँ एक मेरा भी परिचित था ऐसा परिचित जिसे मैं अपनी

बनकर आया तब मैंने उसकी आगवानी में आँखें बिछा दी थी और मैं भगवान श्रीकृष्ण की तरह नंगे पाँव उनके स्वागत हेतु भागता था। लेकिन उसने मुझे ज्योंही देखा त्योंही एक अजीब अजनबी सा भाव बनाया। सचमुच उस तीव्र दृष्टि को देखते ही मैं सहम गया और मेरी अपनी नजर ने पल भर में सारे मेड हाउस की दीवारों को अपने में भर लिया।

वह आत्मीय एक अजनबी सा बोला "आप कब आये? बैठिए? अत्यन्त फार्मेलिटी। मैं बैठ गया। आस-पास देखा कई बुद्धिजीवी। लेखक नाटककार पत्रकार कलाकार चित्रकार बैठे थे।

"अरे मैंने सुना बम्बई गये थे? मेरे आत्मीय ने मौन भंग किया। "कुछ काम-वाम बना" 'यार! अब तुम्हें लिखने के अलावा कुछ भी करनी चाहिए बिना अच्छे स्वास्थ्य के स्वस्थ साहित्य नहीं लिखा जाता।

मैं हैरान। कैसी मनःस्थिति है मेरे इस आत्मीय की। फिर उसने उस प्रसंग को छोड़कर मेरा अन्य लोगों से परिचय कराया। एक सामने विराज रहे का लेखक बोल पड़ा मैं आपको पहले से ही जानता हूँ। आप से मिल भी चुका हूँ।"

"मुझे याद नहीं पड़ता।"

"अन्तरंगता में अब उस बार मैं आपके साथ एक बंगाली लड़की थी, आप उन दिनों बंगाली जीवन पर एक उपन्यास लिख रहे थे।

"मुझे याद नहीं।" मैंने निश्छलता से कहा।

मेरे आत्मीय को दौरा पड़ गया "ओह! बंगाली लड़की हाय हाय।" उसने मेज पर जोर से हाथ मारा। मैंने उसे निहायत बेहूदगी समझा पर वहाँ की उपस्थिति पर इसकी ओर भी आप का कोई प्रभाव नहीं हुआ। सभी थे अपने अपने में तन्मय और व्यस्त।

बात का तारतम्य यहाँ थमी नहीं। आदमी की जान में छिन मिला? नहीं जी। तभी पत्रकार महोदय गम्भीरता से बोले "कैसे

अपने पर्चे में एक स्टोरी छापी है—ठूंठ पेड़ पर हरी पत्तियां। भाई, लेखक अवस्थ ने आज की ज्वालामुखी जीवन की बहुत ही सही तस्वीर खींची है।"

लेखक मनपसन्द शहमा उठाकर बोले "क्यों न सही लगता होगा आखिर अवस्थ गुरु भी ज्वालामुखी परम्परा का है। जो कारिन्दी भी स्टोरी एकदम कुत्ता इण्डिया घूमनेवाला।"

"सुना है सन् ६० में उसने एक छोकरी को मैलिका बनाने के चक्कर में बरबाद कर दिया था।

"बरबाद? जानते हो वह लड़की इतनी कंटाक्स्ड हो गयी है कि उसका जीवन के प्रति दृष्टिकोण ही बदल गया। ध्वंसात्मक दृष्टि। लगता है कभी न कभी वह अपनी अन्धारमस्ती के चक्कर में आत्महत्या करेगी।"

"क्या आत्महत्या की रट लगा रखी है।" मेरा आत्मीय जोर से चीखा और मेरी ओर उन्मुख होकर बोला बताओ यार बम्बई में कोई एक्स्ट्रा की ।"

मैं गुस्से में भर गया। झल्लाहट में बोला 'छोकरी-छोकरी छोकरी! "आओ सड़क पर छोकरियों की कतार मिल जायगी।" फिर मैं कुछ रुककर बोला 'काम-धाम की बातें करो। यह पूछो कि तुम कैसे ही नार्मलिज्म करके जी रहे हो?

बेवकूफ आलोचक ने बीच में अवरोध उत्पन्न किया "ए बेरा ठंडा पानी पिलाओ।

"लाया साहब!"

मैंने पूछा "केवल ठंडा पानी ही पियोगे या कुछ और ।"

सबके चेहरे क्षण भर में एक अनजानेपन की लटरपता से घिर गये। दृष्टियाँ इधर-उधर दौड़ने लगीं। अखिल चमकार ने चार मिनार सुलगा घुमाकर कहा "यह हमारा अपना होटल है। इसके मालिक ने अपने सभी नौकरों को कह रखा है कि इन्हें कुछ मत कहना, ये सभी हमारे खास हैं

गौरव चिह्न है।' उसने ज़ोर का कश लिया।

ठंडा पानी आ गया। पीकर कुछ ठंडे हुए।

मेरा आत्मीय मुरझाया सा बैठा रहा। तभी तालियों की गड़गड़ाहट हुई। दूसरी मेज़ के पास कुछ ही उछल रहे थे। जनाब मुहम्मद अली कह रहे थे "हिन्दी एक बकवास लैंग्वेज है। नेशनल लैंग्वेज न बन सकती है और न बनेगी।"

एक अंग्रेज़ी दाँ अपने बालहीन बालों में उँगलियाँ डालकर बोला "हम मरते दम तक भी अंग्रेज़ी को सपोर्ट करना नहीं छोड़ेंगे।

तभी आ गये एक व्यंग्य लेखक। वे अंग्रेज़ी दाँ के पास गये। तपाक से बोले "आप शायद भूत बनने के बाद भी हिन्दी का विरोध नहीं छोड़ेंगे। आपकी आत्मा अखबारों के दफ़्तरों, पार्लियामेंट और मिनिस्टरों के डिप्लोमैट में घूमती रहेगी। आपको इसका भी हार्दिक दुख है कि आप ब्रिटेन में क्यों नहीं पैदा हुए? और आपका बाप एक अंग्रेज़ क्यों नहीं हुआ?"

सन्नाटा।

"शट अप।" उन्होंने गुस्से में अपने हाथ चला दिये।

"मैं आपको यह बता देना चाहता हूँ कि हिन्दी राष्ट्र भाषा बन गयी है। अंग्रेज़ी के मोह ने नेहरू की प्रतिष्ठा को हिला दिया। समाजी लोहिया और कृपलानी की चोट नेहरू सरकार के प्रति अविश्वास की अभिव्यक्ति नहीं?"

"लेकिन अंग्रेज़ी...।"

"पर आप अंग्रेज़ लोगों की मानसिकता भी देखिए। वे आपकी तरह अपने देश, अपनी भाषा और अपने मान के प्रति गद्दारी नहीं करते। समझे।"

ज़ोर की हँसी। वाह-वाह माटील जी। क्या मिसाल पेश की है आपने? और माटील जी बस नायिका की तरह चलते हमारे दल में शामिल हो गये और आते ही बोले "तुमने... ये सभी अंग्रेज़ी वाले। अब

ज्योफ' हाल की   नामों प्रयोग के नाम पर कचरा भर रहे हैं साहित्य में। फिर उसने मेरी ओर देखा और हाथ बढ़ाते हुए कहा "तुम सब माने मिस्टर। न मुझसा और न मगर।" हम दोनों ने हाथ मिलाये। शरीर से पर न मन हमें पूछो उस माले पेशन के प्रति क्या नहीं किया हमने ? पर वह माला हमें ही दगा दे गया। मैं कहता हूँ कि ऐसे ए मेंम वह प्यारा ही भी है।

"भाई साहित्यकार के व्यक्तिगत जीवन से हम क्या करें ?"

माडीव चिल्ला पड़ा "क्यों न करें। एक मिल मालिक किसी नौकरी के साथ बलात्कार कर लेता है तो वह गुनाहगार कहलाता है। यदि वह मजदूरों के प्रति विश्वासघात और शोषण करता है तो हम आन्दोलन द्वारा उसकी नैतिकता को चुनौती देते हैं और हम साहित्यकार कहलाने वाले प्राणी चाहे कितने ही अनैतिक अनुचित काम करें शान्त हैं। यह कोई न्याय नहीं।"

"भई मैं तुमसे सहमत नहीं।" मेरा आत्मीय बोला।

"तुम क्यों सहमत होओगे। तुम भी तो वैसे ही हो। बेचारी मिस सम्ना को ? तुमने औरत के पीछे अपनी बीवी के संग अमानवीय व्यवहार करने वाले मानवीय संवेदना और पीड़ा और न्याय को क्यों स्वीकार करोगे ?"

बात झगड़ा के बारे में बढ़ती गयी।

मुझे विश्वास हो गया कि झगड़े का आरंभ होगा तो मैंने बात बदली "रहने दो इन बातों को। सुनो माडीव बम्बई में जीवन बहुत अच्छा रहा। सचमुच हर लेखक को वहाँ जाकर अवश्य रहना चाहिए।"

मेरा आत्मीय मेरी बात को बिना सुने ही बोला "माडीव तुम हरामजादे को कभी मैं जान से मार दूँगा।" और उसने हाथ का ऐसा ऐसा किया जैसे उसके हाथ में छुरा होता तो वह उसे तुरन्त भोंक देता।

मैंने तुरन्त कहा "बम्बई में मुझे एक अत्यन्त हसीन लड़की मिली।"

एटेनशन !

सब चुप और उनकी दृष्टि मुझ पर। लड़की ! "मैंने देखा लड़की शब्द ने सबको सकते में ला दिया है और सचमुच मुझ पर भी पागलपन छा गया। मैं अपनी अन्तरात्मा के सत्य को इस तरह उगलने लगा जिस तरह कै होती है— "हाँ गांडीव मुझे एक लड़की मिली। डांसर थी। यंग थी। मैं और मेरा एक एक्टर दोस्त उसके पास गये। मेरे दोस्त ने उस लड़की को मेरे परिचय में यह कहा कि मैं एक प्रोड्यूसर हूँ और फिल्म बनाने आया हूँ। मारवाड़ी हूँ। मारवाड़ी इस मामले में बड़ा ही प्रभावशाली सिद्ध रहता है। वह लड़की हमारे चक्कर में आ गयी। एक दिन हम उसे कार में बैठा कर ले गये। समुद्र के किनारे की प्रेम नगरी में।—मुझे मंटो की कहानी 'ठंडा गोश्त' याद आ गयी। उस लड़की की वही स्थिति थी लेकिन हम पर उस सरदार की वाली प्रतिक्रिया नहीं हुई। मुझे महसूस हुआ कि हम उस सरदार से भी गये बीते हैं जो उस अमानवीय कृत्य से जिंदा लाश बन गया था और हम" !

"जियो मेरे राजा।" मेरा आत्मीय बोला "मुझे बम्बई ले चलो।" उसका सारा शरीर हिलने लगा।

और मेरे मन को धक्का सा लगा जैसे सचमुच में मैं असामान्य हो गया हूँ। इस मैड हाउस के वातावरण से प्रभावित होकर मैं भी पागल सा प्रलाप करने लगा हूँ। यह प्रलाप ही हमारे अन्दर का सत्य है। मैं त्रस्त और म्लान हूँ इस भय से बाहर चला आया। मेरे साथ गांडीव आत्मीय और पत्रकार थे। बाहर अन्धेरा कम हो गया था। हम बस की धूप में खड़े हो गये। थोड़ी देर में गांडीव बोला "ओह ! व्यर्थ ही देर कर दी। मुझे कल सुबह जल्दी ऑफिस जाना है।"

मेरा आत्मीय बोला "लानत है इस मैड हाउस पर, मेरी बेटी ने अपनी किताबें मँगवाई थी खरीदना ही भूल गया" "पाप करके यहाँ बैठा हूँ।" और वह पश्चाताप में डूब गया।

और पत्रकार अपनी बाँयी हथेली पर समेटे हुए अखबार को बेचैनी से पीट रहा था।

और मुझे महसूस हुआ कि अब हम सभी सामान्य प्राणी हैं। और जो आधारभूत सत्य है वह है—बीवी के लिए साड़ियाँ लाना, अपनी आफिस जाना और किसी विशेष कार्य के प्रति गैर जिम्मेदारी करने के बाद बेचैनी से अखबार को मोड़कर हथेली पर पीटना…

तस्वीर का दूसरा पहलू

०

जिस क्षण मेरे मन में यह विचार आया था उस क्षण बाहर जोर की बारिश के साथ-साथ सनसनाती हवा चल रही थी। सभी खिड़कियों पर पानी की बूँदें गिर गिर कर बह रही थीं जो भी अनेक रूपों में जिससे मेरे मन में विचित्र उलझी हुई कुछ अनुभूतियाँ उत्पन्न हो रही थीं। ये अनुभूतियाँ मुझे अपने केन्द्र बिन्दु से अलग कर देती थीं और थोड़ी देर के लिए मैं विमूढ़ सी अपलक उन खिड़कियों की ओर देखती रह जाती थी। न जाने कितनी देर तक मैं बैठी रही तब बारिश थमी। तब खिड़की के शीशे साफ हुए और तब एकदम बायीं खिड़की के कोने में दुबका हुआ पखेरू उड़ा मैं न जान सकी। जब नौकरानी ने खिड़कियाँ पोंछना शुरू किया तब मुझे उस पखेरू का अचानक ध्यान आया। मैंने पूछा "फिजाँ! वह चिड़िया कहाँ गयी?" फिजाँ ने मेरी ओर प्रश्न भरी दृष्टि से देखा और अपने होठों पर स्मित रेखा बिखेरती हुई बोली "उड़ गयी बीबी जी फुर्र!" उसने अपने हाथ से बड़ा नाटकीय संकेत किया जिससे मुझे बरबस हँसी आ गयी और वह भी मेरी पलक झपकते फुर्र फुर्र हो गयी।

एक सन्नाटा सहसा सन्नाटा छा गया। मैं उसे प्रश्न भरी दृष्टि से देखती रही देखती रही लेकिन सहसा मेरे

कानों में सिपाही के शब्द फिर। गूंजे 'उड़ गयी बीबी जी मुर्ई!

उड़ गयी, उड़ गयी! मैंने सोचा चिड़िया की तरह मुझे भी उड़ जाना चाहिए। यह सोने का पिंजरा व्यर्थ है, यह लोकलिप्सा व्यर्थ है। जीवन में सबसे पहला गुण आत्मा का गुण है। वह नहीं तो यह सब आडम्बर है व्यर्थ है।

प्रेमा के मानस पटल पर अतीत तैर गया—

वह एक प्रसिद्ध नर्तकी है। उसके रूप-सौन्दर्य और गुण की सर्वत्र चर्चा है। लोग उसका नृत्य देखने इस तरह चले आते हैं जिस तरह शहद के छत्ते पर मधु-मक्खियाँ। उससे मिलने के लिए बड़े बड़े तरसते हैं। लक्ष्मी उसके चरणों में है। फिर भी दिल में कुण्ठा और व्याकुलता क्यों? क्यों लगता है कि यह सब व्यर्थ है व्यर्थ! उसके सामने चित्र' का चेहरा घूम गया। चित्र एक तरुण-युवक! उसे दिल से चाहता था। उसने उससे मिलने की कितनी बार कोशिश की थी! पर उसकी जालिम बुढ़िया माँ ने उसे घर में घुसने नहीं दिया था।

'बीबी जी यह चित्रकार आपसे भेंट करना चाहता है'—एक सुबह उसकी नौकरानी सिपाही ने एक तैल-चित्र उसके सामने रखा। वह चित्र ढँका हुआ था। उसने उत्सुकता से उसे उघाड़ा। वह हैरान रह गयी। घूँघट के अवगुंठन में उसका चित्र! उसने उस चित्रकार को बुलाया बिठाया चाय पिलायी और पूछा 'आपने मेरा यह चित्र बनाया है?"

'जी!"

"मुझसे बिलकुल विपरीत!"

"जी नारी का चरम सत्य तो यह है कि वह दुल्हन बनकर ससुराल जाए, माँ बनकर अपने जीवन की सार्थकता प्राप्त करे और अपने गृहसंसार को आलोकित करे। आप नर्तकी बनकर अपने अनुपम रूप से केवल धन इकट्ठा कर रही हैं। शील ममता और सौम्यता को भुलाकर आप केवल वाह-वाह लूट रही हैं। यौवन और रूप जीवन के स्थिर सत्य नहीं हैं। स्थिर सत्य है प्रेम और परिवार।" उसने प्रेमा की ओर

नहीं देखा। नीची गर्दन किए हुए कहता ही रहा "पिछले महीने से आपका नृत्य देख रहा हूँ। आपके यहाँ नये नवीन चित्र देखता हूँ तो मन कई सवालों से उद्विग्न हो जाता है। कई बार मिलने की चेष्टा की पर सफल नहीं हुआ। आपके नौकर और आपकी माँ ने मुझे दुत्कार दिया जैसे मैं कोई घुसपैठिया हुआ कुत्ता हूँ। आपको मालूम नहीं कि मैं एक लखपती बाप का बेटा हूँ। माँ-बाप बचपन में ही मर गये। चाचा का आज्ञाकारी बेटा रमेश मेरी देख-रेख करता है। वह नितान्त अध्यात्म वादी और कठोर ब्रह्मचर्य का पक्षपाती है। आपके पोस्टर उसी ने जला डाले थे। मुझे भी उसने सख्त हिदायत दे रखी है कि मैं आप जैसी निर्लज्ज-बेशर्म और चरित्रहीन नर्तकी के पास भी न फटकूं। पर अपने को न रुक सका। आपका व्यक्तित्व और सौन्दर्य बस मेरे मन पर छाता ही गया और मैं आपसे मिलने के लिए बेचैन हो उठा।"

"आप चाहते क्या हैं ?" प्रेमा ने पूछा।

"सच-सच कहूँ ?"

"हाँ"

उसने एक पल प्रेमा की ओर देखा फिर शर्म से सिर झुका लिये। फर्श की ओर देखता हुआ बोला "मैं आपसे शादी करना चाहता हूँ।"

जैसे एक बहुत बड़ा बम गिर पड़ा हो प्रेमा के दिल में जोर का धमाका हुआ। वह अवाक् सी उसे देखती रही। कुछ भी कहते नहीं बना। लेकिन वह नीची गर्दन झुकाए हुए कह रहा था "मैं आपसे शादी करना चाहता हूँ। अब मैं आपके बिना नहीं रह सकता। हर घड़ी हर पल मुझे आप ही का ख्याल आता है। मैं आपको कोई भी तकलीफ नहीं दूँगा। मेरे पास सब कुछ है।"

युवक की स्पष्ट बात ने प्रेमा के हृदय में मन्थन पैदा कर दिया। वह कुछ देर तक विचारती रही। उसने एक बार पारखी की तरह पैनी दृष्टि से चित्र को सिर से पाँव तक देखा और बोली "मेरा अभी ऐसा कोई इरादा नहीं। [illegible] इस पर कभी सोचा नहीं है।"

“सोच लीजिए। यह तो सत्य ही है कि आपकी ज़िन्दगी सदा ऐसी नहीं रहेगी। आपका यह रूप, यह चंचलता और यह चुलबुली सदा एक सी नहीं रहेगी। एक न एक दिन यह सब ख़त्म हो जायगा। मेरा प्यार तब भी जीवित रहेगा—इसी गहराई के साथ।”

“आप अभी जा सकते हैं”—उसने बड़ी सहजता से कहा। ‘मुझे आपसे पूरी हमदर्दी है। ऐसे प्रस्ताव लेकर मेरे पास बहुत से आते हैं। वे भी आपकी तरह सुन्दर और पैसे वाले होते हैं। एक करोड़पति भी मुझसे विवाह करने को तैयार है पर मेरा अभी ऐसी कोई इरादा नहीं।”

मित्र टूटा सा चला आया।

प्रेमा के बंगले के आगे उसकी परिचित बुढ़िया बैठी थी। उसने उसे एक सिक्का दिया और आगे बढ़ गई।

उसके जाने के बाद प्रेमा के मन में उथल-पुथल मच गयी। ऐसा निडर निर्भीक व्यक्ति उसने पहले कभी नहीं देखा था। उसने उसकी बनायी तस्वीर को देखा लगन्म गर्वी-अलबेली सुन्दर। उसे लगा-जैसा बना डाला है उसने? धीरे धीरे उसके मन में मित्र की तस्वीर गहरी और गहरी होती गई।

उसकी माँ ने आकर उसके ध्यान को भंग किया। वह चौंक पड़ी। माँ ने कहा— ‘सेठ सम्पतलाल आए हैं। सुनो ज़रा तरकीब से उनसे पाँच हजार रुपये माँगना समझी!”

लेकिन वह सेठजी से एक पैसा भी नहीं माँग सकी। उसके मन पर तो मित्र छा रहा था! लग रहा था मित्र की बातों की गूँज धीरे-धीरे उसके मन पर पर्तों की तरह जम रही है। वह अनमनी सी रही। सेठजी ने क्या कहा उसे ज़रा भी मालूम नहीं। वह उनकी हाँ में हाँ मिलाती रही। बीच-बीच में सेठजी झुँझला भी जाते थे ‘क्या बात है प्रेमा? आज तुम खोयी-खोयी क्यों हो? तब उसने हँसकर उनके प्रश्न को टाल दिया था। माँ से शिकायत की थी। माँ ने गुस्सा होकर पूछा—
“आज तुझे क्या हो गया छोकरी?”

"कुछ नहीं।"

"रुपये चाहिए ?"

"नहीं।"

"क्यों ?"

"मेरे पास बहुत है।

"जितना रुपया है उससे भी बड़ी जिम्मेदारी है। ए छोकरी! मेरे कान सवाल-जवाब सुनने के आदी नहीं हैं। मैं अपने हुक्म की तामील चाहती हूँ। कान खोलकर सुन ले। बस मैं ऐसी कोई शिकायत नहीं होगी।"

प्रेमा ने कोई उत्तर नहीं दिया। न जाने क्यों आज उसकी आँखें भीगी हो गयी! उसकी इच्छा हुई कि वह फफक-फफक कर रोये। अपने आपको धोखा दे चुप लगाए। वह चिढ़कर बोली "मेरी तबीयत खराब है। मैं हेल्थी को नहीं सिखा सकती।" माँ स्तब्ध सी उसे निहारती रही। उसने मन ही मन कहा "क्या हो गया है इस छोकरी को? वह उस समय शान्त रही। जब प्रेमा भीतर जाने लगी तब उसने बोली "यह जवानी जाने के बाद फिर नहीं आएगी समझी!"

प्रेमा अपने बिस्तरे पर निढाल पड़ गयी। उसने सोचा—'जवानी बार-बार नहीं आती! तब विश्व"   "हाँ विश्व ने ही तो मेरे अन्तर में हलचल मचा दी है।' उसे फिर विश्व याद आने लगा। उसने उसका बनाया हुआ चित्र देखा। नीचे लिखा था—'दुल्हन'। वह उसे देखती रही। फिर उठी और थियेटर जाने की तैयारी करने लगी।

बाहर निकलते ही उसे बुढ़िया की खिलखिलाहट सुनायी दी। वह चौंक पड़ी। बुढ़िया ने टेढ़ी आँखें करके अपना आँचल उसके माथे फैला दिया। उसने एक चवन्नी डाल दी। बुढ़िया सदा की तरह मनहूस हँसी हँसती हुई झोंपड़े में चली गयी। उसके निर्वाह का साधन भाग्यवान प्रेमा के परिजन ही थे। प्रेमा ने माँ से पूछा "माँ यह बुढ़िया कौन है? यह मुझे इस तरह घूर-घूर कर क्यों देखती है? मुझे इससे कभी-कभी डर

"सोच लीजिए। यह तो सत्य ही है कि आपकी ज़िन्दगी सदा ऐसी नहीं रहेगी। आपका यह रूप, यह चंचलता और यह फुर्ती सदा एक सी नहीं रहेगी। एक न एक दिन यह सब खत्म हो जाएगा। मेरा प्यार तब भी जीवित रहेगा—इसी शिद्दत के साथ।"

"आप अभी जा सकते हैं"—उसने बड़ी सहजता से कहा। "मुझे आपसे पूरी हमदर्दी है। ऐसे प्रस्ताव लेकर मेरे पास बहुत से आते हैं। वे भी आपकी तरह सुन्दर और ऐसे वाक्य बोलते हैं। एक करोड़पति भी मुझसे विवाह करने को तैयार है पर मेरा अभी ऐसी कोई इरादा नहीं।"

विप्र टूटा सा चला आया।

प्रेमा के बंगले के आगे उसकी परिचित बुढ़िया बैठी थी। उसने उसे एक सिक्का दिया और आगे बढ़ गई।

उसके जाने के बाद प्रेमा के मन में उथल-पुथल मच गयी। ऐसा निडर निर्भीक व्यक्ति उसने पहले कभी नहीं देखा था। उसने उसकी बनायी तस्वीर को देखा। एकदम सजी-सजायी दुल्हन। उसे क्या-क्या बना डाला है उसने? धीरे धीरे उसके मन में विप्र की तस्वीर गहरी और गहरी होती गई।

उसकी माँ ने आकर उसके ध्यान को भंग किया। वह चौंक पड़ी। माँ ने कहा—"सेठ सम्पतलाल आए हैं। तुम्हें बड़ी तरकीब से उनसे पाँच हजार रुपये माँगना समझी!"

लेकिन वह सेठजी से एक पैसा भी नहीं माँग सकी। उसके मन पर तो विप्र छा रहा था। लग रहा था विप्र की बातों की धूप धीरे-धीरे उसके मन पर पर्तों की तरह जम रही है। वह अनमनी सी रही। सेठजी ने क्या कहा उसे जरा भी मालूम नहीं। वह उनकी हाँ में हाँ मिलाती रही। बीच-बीच में सेठजी झुंझला भी जाते थे "क्या बात है प्रेमा? आज तुम खोयी-खोयी क्यों हो?" तब उसने हँसकर उनके प्रश्न को टाल दिया था। माँ ने शिकायत की थी। माँ ने गुस्सा होकर पूछा—"आज तुझे क्या हो गया छोकरी?"

"तुम नहीं ।"

"रुपये मिले ?"

"नहीं ।"

"क्यों ?

"मेरे पास बहुत है ।"

"जितना रुपया है, उससे भी बहुत [illegible]

[illegible] सवाल-जवाब सुनने की आदी नहीं है [illegible]

चाहती हूँ । कान खोलकर सुन ले । [illegible]

नहीं होगी ।"

प्रेमा ने कोई उत्तर नहीं दिया । [illegible]

धीमी हो गयी । उसकी इच्छा हुई कि [illegible]

आपको पीड़ा है सुख मनाए । वह [illegible]

बचत है । मैं [illegible] को नहीं दिया [illegible]

रही रही । उसने मन ही मन कहा [illegible]

वह उस समय शान्त रही । जब प्रेमा [illegible]

"यह बकानी बात के बाद फिर नहीं [illegible]

प्रभा अपने बिस्तरे पर निढाल [illegible]

बार-बार नहीं मानी । तब फिर [illegible]

इतना मचा दी है !" उसे फिर [illegible]

[illegible] हुआ चित्र देखा । मीठे [illegible]

उठी । फिर उसी ओर लिपटकर [illegible]

[illegible] निकलते ही उसे पुलि[illegible]

कर गई । पुलिस के टेढ़ी पीले [illegible]

[illegible] । उसे उस [illegible] बात [illegible]

[illegible] हुई आँखों से चली गयी । [illegible]

के [illegible] है वे । प्रभा के [illegible]

[illegible] इस तरह चूर-चूर कर [illegible]

समता है ।"

"पगली है । मिजाजिन है । बेकार मत डरो ।"

लेकिन उसे मज़ा की तरह बुढ़िया की हँसी परेशान करती रही । विम ने कितनी सहजता से कहा था—मैं आपसे शादी करना चाहता हूँ ।

उस रात वह गहरी नींद न ले पायी । सुबह फिर विम आया । उसने अपने प्रश्न का उत्तर चाहा "आपने क्या सोचा ।

किस पर ?

"शादी के लिए ।"

वह हँसी—"फुर्सत ही नहीं मिली !"

"यह झूठ क्यों बोलती है ?" उसने तपाक से कहा । "आपने जरूर मेरे बारे में सोचा है । न सोचा होगा तो मुझे आपकी नौकरानी सम्मान से भीतर न आने देती ।

प्रेमा के गालों पर लज्जा की रेखाएँ दौड़ गयीं । वह सिर्फ़ इधर उधर देखने लगी ।

"आज आपकी नौकरानी के होठों पर भी अजीब मुस्कान थी । मैं भाँप गया । वह बड़ी चंचल है ।" फिर विम उनकी कला की प्रशंसा करता रहा । बोला "मैं इंजीनियर नहीं बनना चाहता था परन्तु पिताजी की अन्तिम इच्छा यही थी इसलिए कर रहा हूँ । मैंने चित्रकारी अपना प्रिय शौक बना लिया है । शायद तुम्हारे सम्पर्क से मैं अपनी कला को सुरक्षित कर सकूँ !"

"आप जरूरत से ज्यादा सोच रहे हैं । मुझे "नरमसत" और वह एकाएक चुप हो गयी । विम उठने लगा । प्रेमा ने कहा "आप मुझे आज शाम को जरूर मिलें ।"

शाम को वे दोनों घूमने गये । पहली बार प्रेमा की माँ का माथा ठनका । वह ठेठ सम्पन्नता के होते हुए किसी को भी अपने घर में नहीं आने देती । वह उस समय ज़हर का घूँट पीकर रह गयी । वे दोनों

सागर के किनारे एकान्त में बड़ी देर तक बातें करते रहे। एकाएक प्रेमा ने पूछा "विद्र यह बुढ़िया कौन है?

"वह भी एक दिन तुम्हारी तरह रूपसी थी। शायद इसी बंधन में उसकी अपनी जवानी चली गयी शक्ति समाप्त हो गयी। पीछे कोई नहीं रहा। रूप-यौवन के लोभी भागे। शेष रह गये—ये दुर्दिन दुत्कारें और पीड़ाएं। उस समय उसने भी नहीं सोचा था कि कभी मरा सब कुछ चला जाएगा। प्रेमा जीवन दो चरम बिन्दुओं पर टिका है—दो विपरीत चरम बिन्दु। एक सुख का एक दुख का।"

प्रेमा बहुत उदास हो गयी। वह बोली ही नहीं। उसके कानों में बार-बार बुढ़िया की वह भेदभरी हँसी गूँज उठती थी। प्रेमा के सम्मुख मानों उस भेदभरी हँसी का रहस्य खुल गया—दर्पण की तरह साफ और स्पष्ट।

माँ ने पूछा "खाना खाएगी?"

"नहीं"—कहकर वह सो गयी। उसने निश्चय किया कि वह विद्र से ही शादी करेगी।

"तू शादी करेगी? छिनाल कहीं की! मारते मारते देख दम निकाल दूँगी!" माँ ने नागिन की तरह फुफकार कहा।

"निकाल दे दम! मारना है तो अभी मार दे! मैं विद्र से शादी करूँगी और जरूर करूँगी।"

"चुप रह!" माँ ने उसके गाल पर चाँटा मारा फिर अर्धविक्षिप्त सी वह प्रेमा पर झपट पड़ी और उस पाम्प वृक्ष की तरह झौंका। प्रेमा उसी दशा में बोली—"मैं उससे शादी करूँगी जरूर करूँगी। तू मुझे रोकेगी तो मैं पुलिस की मदद लूँगी। तू मुझे शादी से नहीं रोक सकती कभी नहीं रोक सकती।"

फिर तू भी के से शादी कर ले। तेरी तमन्ना पूरी हो जाएगी और वह दया भी नहीं करेगा। बदला इसका है तक इसानी ही करेगा!"

ऐसा नहीं हो सकता।"

सागर के किनारे एकान्त में बड़ी देर तक बातें करते रहे। एकाएक प्रमा ने पूछा "मिश्र वह बुढ़िया कौन है ?

"वह भी एक दिन तुम्हारी तरह अभिमानी थी। शायद इसी भ्रम में उसकी अपनी जवानी चली गयी शक्ति समाप्त हो गयी। पीछे कोई नहीं रहा। रूप-यौवन के लोभी चले। शेष रह गये—ये दुर्दिन दुत्कारें और पीड़ाएँ। उस समय उसने भी नहीं सोचा था कि कभी मेरा सब कुछ चला जाएगा। प्रेमा जीवन दो चरम बिन्दुओं पर टिका है—दो विपरीत चरम बिन्दु। एक सुख का एक दुख का।"

प्रमा बहुत उदास हो गयी। वह बोली ही नहीं। उसके कानों में बार-बार बुढ़िया की वह दर्दभरी हँसी गूँज उठती थी। प्रेमा के सम्मुख मानों उस भेदभरी हँसी का रहस्य खुल गया—दर्पण की तरह साफ और स्पष्ट।

माँ ने पूछा "खाना खाएगी ?"

"नहीं"—कहकर वह सो गयी। उसने निश्चय किया कि वह मिश्र से ही शादी करेगी।

"तू शादी करेगी ? जिनाल कहीं की ! मारते मारते तेरा दम निकाल दूँगी !" माँ ने बाघन की तरह गुर्राकर कहा।

"निकाल दे दम ! मारना है तो अभी मार दे ! मैं मिश्र से शादी करूँगी और जरूर करूँगी।"

"चुप रह !" माँ ने उसके गाल पर चाँटा मारा फिर मर्मविक्षिप्त सी वह प्रमा पर झपट पड़ी और उस पागल कुत्ते की तरह नोंचा। प्रेमा उसी दशा में बोली—"मैं उससे शादी करूँगी जरूर करूँगी। तू मुझे रोकेगी तो मैं पुलिस की मदद लूँगी। तू मुझे शादी से नहीं रोक सकती कभी नहीं रोक सकती।"

फिर तू शौक से शादी कर ले। तेरी तमन्ना पूरी हो जाएगी और वह तुझसे भी नहीं करेगा। उसका इरादा है, बस तू हमारी ही करेगा !"

"ऐसा नहीं हो सकता।"

"नहीं वह लाखों का मालिक है। कलाकार तो इस धरती पर बहुत हैं। तुमने किसी गरीब कलाकार को क्यों नहीं चुना ?"

"प्यार जिसने छुआ उसी को चुन लिया रमेश बाबू ! मैं आपके पाँव पड़ती हूँ। मुझे इस चकाचौंध से निकलने दीजिए। मुझे किसी की बहू किसी के घर की लाज और लक्ष्मी बनने दीजिए।" प्रभा ने सच मुच रमेश के पाँव पकड़ लिए। उसकी आँखें भर आयी थीं।

"तुम नर्तकी वेश्या और बाजारू औरतें कभी किसी के घर की लाज नहीं बन सकती। तुम्हारा काम है—घर उजाड़ना और तबाह करना। यही तुम करोगी। तुम जिस के जीवन में नहीं उसके बाप के चरणों के मैल रही हो उसके भाई व मरमानों में मैल रही हो। आज मैं उसका सगा भाई नहीं फिर भी उसके जीवन के लिए बड़े से बड़ा बलिदान दे सकता हूँ। यदि तुम चाहती हो कि हमारे आपस में किसी तरह की लाई न पड़े तो जिन का ध्यान छोड़ दो। मुझे तुम जैसी औरतों से सख्त नफरत है नफरत !"

"लेकिन"

"वचन दो कि तुम आज से उससे नहीं मिलोगी। तुममें त्याग की कितनी क्षमता है मैं देखना चाहता हूँ। प्रेम त्याग से ही महान् बनता है समझी ?

"मैं आपको वचन देती हूँ कि मैं आज से जिन से नहीं मिलूँगी पर आपको भी मुझे एक वचन देना पड़ेगा कि आप मुझसे बराबर मिलते रहेंगे।"

"लेकिन मैं ।

सोच लीजिए।"

"अच्छा मिलता रहूँगा।

वह चला आया। प्रभा बिस्तरे पर औंधी पड़कर फूट-फूटकर रो पड़ी। बहुत देर तक रोती रही। उसे जब गहरी नींद आ गयी तो पल भी नींद उसके होंठों पर कुटिल मुस्कान खिलती हुई बड़ी देर तक नहीं

कोई हमें भारतीय जीवन से निकालने की भी चेष्टा करता है तो ये बड़ी बड़ी दीवारें खड़ी कर देते हैं। कहते हैं मेरी जैसी औरतें प्यार को केवल एक नाटक समझती हैं क्यों रमेशजी क्या मैं झूठ कहती हूँ? मैंने सच्चे हृदय से रमणजी के भाई को प्यार किया था। मैं उनकी दुल्हन बनकर गृहस्थी बसाना चाहती थी। मैंने उनके साथ जीवन की स्वाभाविकता के कई सुनहरे सपने देखे थे। इन्होंने उन सब पर तुषारपात कर दिया। तब मैंने भी निश्चय किया था कि इन्हें ऐसा सबक दूंगी कि ये तो क्या इनके जैसे हजारों सुधारकों की आँखें खुल जाएँगी। मैंने इनसे केवल प्यार का नाटक खेला था। इन्हें जिस तरह चाहा उँगलियों पर नचाया। इन्होंने मेरे पीछे किसी को कुछ नहीं समझा। इनकी सारी जायदाद भी धीरे-धीरे मेरे नाम करते गये। मेरी साधों को भी मेरे इस नाटक ने पूरा की। आखिर जीत मेरी ही हुई। मैं इनसे पूछती हूँ कि जिस व्यक्ति से मैंने सच्चा प्यार किया उसकी हालत क्या हो सकती है? रमणजी से मैंने केवल प्रेम का ढोंग किया है। और मैंने एक पल-पल कितनी मर्मान्तक वेदनाएँ सही हैं। फिर मेरे प्यार में पागल से हो गये हैं। यह मेरे नाम पर मरता है। मैंने सब कुछ सहा।" यह कहकर वह रो पड़ी। उसने आँसुओं को पोंछते हुए रमेश से कहा "लीजिए, अपनी जायदाद के सारे कागजात और बच्चे पाइए। मुझे केवल आपके ढोंग को मिटाना था ताकि आप यह जान लें कि प्रकृति के सहज व व्यवस्थित जीवन जीने का सभी इन्सान को बराबर का हक है।"

रमेश पत्थर हो गया। फिर भी पसीना आ गया। उसने दुबारा मेज पर हाथ नहीं रखा। वह संभलता प्रमा के सम्मुख चला गया। प्रमा ने उसे देखा और उसने प्रमा को। दोनों की आँखों में आँसू समाये नहीं। किसी ने पीछे से आवाज लगायी फिर की शादी प्रेमा से कर दी जाए!

मेज-मंच सूँघने लगे। रमेश का कहीं पता नहीं था।

था हुआ जिस दुल्हन रूप मिला था। उसकी इच्छा थी कि वह ठीक वैसे ही गहने पहनेगी वैसा ही मेक-अप करेगी। सब कुछ कर चुकने पर वह मंडप की ओर चली। रमेश अपनी पोशाक में बहुत जँच रहा था। रवि धीरे धीरे आगे बढ़ा। उसने मन-ही-मन दोहराया 'जीवन और कमीनापन सदा भी कामयाब होता है। उसने अपनी जेब पर हाथ रखा।

लोग प्रेमा के अद्वितीय रूप को देखने में मग्न थे। रवि की आँखें भी बुरी तरह उस सुन्दरता को देखने के लिये ठहर गयीं। मन का आक्रोश मिट गया एक क्षण के लिए। फिर वह सावधान हुआ और आगे बढ़ा।

प्रेमा वेदी के समीप पहुँच गयी थी। रमेश ने उसकी ओर मुस्करा कर देखा। एक धीमी सी आवाज आयी—कुछ भी हो आगे प्रतिज्ञा को धूल में मिलाकर भी रमेश ने बड़ा कीमती हीरा पाया है।

रवि ने सोचा 'मैं खेल खत्म कर दूँगा।' वह भीड़ को चीरता हुआ बढ़ रहा था। सागर की तरह अनेक लहरें उसके मस्तिष्क को मथ रही थीं। तभी अकस्मात् प्रेमा ने घोषणा की "यह शादी नहीं होगी।"

"क्या कहती हो प्रेमा ? तुम्हारा दिमाग ठीक है ?" रमेश ने काँपते स्वर में पूछा।

बिल्कुल"—प्रेमा ने प्रभु के भक्त की तरह अपने दोनों हाथ उठा कर कहा। 'मैं यह शादी नहीं करूँगी बरातियो ! यह सब नाटक था एक खेल था। यह रमेशजी जो आज से एक साल पहले ब्रह्मचर्य आदर्श और सात्विक जीवन के हामी थे और हम जैसी लड़कियों को वासना कहकर उनसे दूर तक रहने के नारे लगाते थे आज खुद उस कीचड़ के लिए अपना सर्वस्व विसर्जन कर चुके हैं। मैं इनसे पूछती हूँ कि अब मेरे खानदान और कुल में कौन सा अन्तर आ गया है ? मैं वही हूँ जो आज से एक साल पहले थी। मैं इनसे पूछती हूँ कि जो औरत कभी भी किसी के घर की लाज नहीं बन सकती वह आज इनकी दुल्हन पत्नी और धर्मांगिनी कैसे बन सकती है ? ये समाज के ठेकेदार और सुधारक हम जैसी विवश नारियों के जीवन के उद्धार की कभी नहीं सोचते। संयोगवश

कोई हमें भारतीय जीवन से निकालने की भी चेष्टा करता है तो ये बड़ी कोई दीवारें खड़ी कर देते हैं। कहते हैं तेरी जैसी औरतें प्यार को केवल बड़ी नाटक समझती हैं क्यों रमेशजी क्या मैं झूठ कहती हूं? मैंने सच्चे हृदय से रमेशजी के भाई को प्यार किया था। मैं उनकी दुल्हन बनकर गृहस्थी बसाना चाहती थी। मैंने उनके साथ जीवन की स्वाभाविकता के कई सुनहरे सपने देखे थे। इन्होंने उन सब पर तुषारपात कर दिया। तब मैंने भी निश्चय किया था कि इन्हें ऐसा सबक दूंगी कि ये तो क्या इनके जैसे हजारों सुधारकों की आंखें खुल जाएंगी। मैंने इनसे केवल प्यार का नाटक खेला था। इन्हें जिस तरह चाहा उंगलियों पर नचाया। इन्होंने मेरे पीछे किसी को कुछ नहीं समझा। अपनी सारी जायदाद भी धीरे-धीरे मेरे नाम करते गए। मेरी सासजी भी मेरे इस नाटक से खुश थीं। आखिर जीत मेरी ही हुई। मैं इनसे पूछती हूं कि जिस व्यक्ति से मैंने सच्चा प्यार किया उसकी हालत क्या हो सकती है? रमेशजी से मैंने केवल प्रेम का ढोंग किया है। ओह, मैंने एक वर्ष-भर कितनी मर्मान्तक वेदनाएं सही हैं। किंतु मेरे प्यार में पागल से हो गये हैं। वह मेरे नाम पर मरता है। मैंने सब कुछ सहा।" यह कहकर वह रो पड़ी। उसने आंसुओं को पोंछते हुए रमेश से कहा "लीजिए, अपनी जायदाद के सारे कागजात और चले जाइए। मुझे केवल आपके ढोंग को मिटाना था ताकि आप यह जान लें कि प्रकृति के सहज व स्वाभाविक जीवन जीने का सभी इन्सान को बराबर का हक है।"

रमेश पत्थर हो गया। फिर भी पसीना आ गया। उसने दुबारा देव पर हाथ नहीं रखा। वह मंत्रवत प्रेमा के सम्मुख चला गया। प्रेमा ने उसे देखा और उसने प्रेमा को। दोनों की आंखों में आंसू समाये नहीं। किसी ने पीछे से आवाज लगायी फिर भी शादी प्रेमा से कर दी जाए।

फेरे मंत्र गूंजने लगे। रमेश का कहीं पता नहीं था।

एक मुस्कान एक ज़िन्दगी

तिजारत

मैं तिजारत हूँ। आदि काल से लोग मेरा प्रयोग कर रहे हैं। व्यापार व्यवहार के रूप में, चीज़ों और वस्तुओं के रूप में अनेक तरीकों से और रूप से। मेरा कोई धर्म नहीं, कोई नैतिकता नहीं और कोई मान मर्यादा नहीं। इंसान ने मुझे अपनी सुख-सुविधा के लिए हर रूप में ढाला। लेकिन आज मैं दुखी हूँ। इस बार मेरे द्वारा एक बच्ची का तिजारत किया जा रहा है। वह बारह साल की अबोध और अलौकिक कन्या जिसके चेहरे पर खुशियों का समन्दर लहरा रहा है। जिसकी बड़ी-बड़ी आँखों में यौवन की लाज के अंकुर फूटने लगे हैं। जिसकी नर्म-नर्म बाँहों में अनागत उन्माद की खुशबू है। इस कन्या को उसकी माँ और उसके बाप मिलकर बेचना चाहते हैं यानी तिजारत करना चाहते हैं। कितनी बड़ी बेहयाई है कितना बड़ा गुनाह है, पर हमारे देश में ऐसे जोर-जुल्म ज्यादतियाँ सरेआम चलती आयी हैं।

यह आपका नया मेहमान है। यह बारह साल की कन्या को अपनी अर्धांगिनी बनायेगा। इसकी उम्र ४५ के लगभग है। इसकी आँखों की चमकती हुई वासना के सारे डोरे खिंच गये हैं। यह एक गिद्ध-सा लगता है। इसके होंठों की नमी सूख गयी है। इसका यौवन इससे अलग होकर इसकी मृतक पत्नी की जवान संतान में चला गया है।

यह इस कन्या को वरेगा।

तिजारत शुरू। मेरी आँखें भर आती हैं। तीन हजार में एक कन्या का तिजारत हो जाता है। मैं जोर से चीखती हूँ चिल्लाती हूँ कि मेरा ऐसा दुरुपयोग मत करो ऐ समाज और धर्म के ठेकेदारो! देखो इस तिजारत को देखो यह मासूम फूल किस जल्लाद को सौंपा जा रहा है। जरे देखो न इसके पंखुरियों से गुलाबी होंठों को जो अपनी मासूमियत की वजह से तुम लोगों से याचना भी नहीं कर सकते हैं। उसका प्राण कानून के दरवाजे भी नहीं खटखटा सकता क्योंकि यह एक माटी की सबसे पवित्र और खामोश तस्वीर है। हम बहरे और अन्धे हैं।

हवन की अग्नि

मन्त्रों पावन ऋचाओं से दिग्दिगन्त गुञ्जित हैं आहुतियाँ दी जा रही हैं। मेरे समक्ष बुढ़ापा और बचपन दूल्हा-दुल्हिन बने बैठे हैं। औरतें रंग-रंगीले चटकदार और दमकते लहंगे लाल और सस्ते सितारों वाले ओढ़ने ओढ़े मंगल-गीत गा रही हैं। मेरी इच्छा हो रही है कि मैं धधककर इन सबको भस्म कर दूँ जो बूढ़े बाप एक किशोरी को सौंप रहे हैं। लेकिन ये धर्म-भीरु लोग मुझे बड़ी युगों से मर्यादा में रख रहे हैं। मैं हवन की पवित्र अग्नि आज पाप को जलाने में असमर्थ हूँ। सीता को अपने अग्नि-दाहन में लेकर उसकी मर्यादा की रक्षा कर आज मैं इतनी शक्तिहीन हो गयी हूँ कि इस अबोध बालिका को नहीं बचा सकती। जो फेरे भी पड़ गये। जानती हूँ कुमकुम पराधी हो गयी। कोई गा रहा है—बाबुल छोड़ चली तेरा देश । अब यह छोड़ चली। अपना अंगना अपनी सखियाँ और अपना बचपन!

सीमा के फूल

यह बूढ़ा उस किशोरी की ओर जा रहा है। किशोरी उसे विस्मित सी देखती है। इस फूल सुहाग रात के मादक और खुशबू बिखेरने वाले फूल आज बिना स्पर्श के ही मुर्झा गये हैं। अपनी सुगन्ध को इस ▬

करके उन्हें पका कर देता हूँ।

किशोरी का सारा शरीर मुझ में ?? गया था। जब वह बूढ़ा खाँसने भी लगा था और जब किशोरी आकाश में चाँदनी इठलाकर उसे मिलो देती तब वह मादक संभावनाओं के साथ न जाने क्या सोचती कि उसके नयन अश्रुओं से भर आते और वह बूढ़े की ओर निरख की चेष्टा करती। बूढ़ा खाँसियों में खोई हुई साँसों से टकराती उसी खाँसी करने लगता और वह तड़पकर कहता "मन नहीं लगती बेशर्मी की हद है पति बीमार है और तुझे अठखेलियाँ सूझ रही हैं।"

वह संसार की अप्सरा की तरह मादक स्वर में बोली "देखो आकाश में चन्द्र मुस्करा रहा है उसकी चाँदनी मेरे मन प्राण में मस्ति भर रही है। हवा भी मस्त-मस्त में प्यार बरसा रही है।"

"ऐसी बात है तो खिड़की में बैठ जा। पर दुल्हनी की औरतें जोबन को लेकर इस तरह हाय-हाय नहीं मचाती। उनकी सबकी बाती है बहुत के पति भी बूढ़े होते हैं पर तेरा नखरा तो 'प्यासा' सहरा से ही अलग है।"

उसका सारा प्यार दुख के छोटे से अध्याय में सिमट कर रह गया। वासना और उत्तेजना बर्फ की तरह ठण्डी पड़ जाती। वह मदन कामना की कोमनी हुई सी जाती।

पर मैं उन्माद हूँ।

मैं जिस पर सवार हो गया और उसने मुझे शान्ति नहीं दिलाई तो वह भटक जायेगी। वह रात भर सो नहीं पाती दिन को चैन नहीं पड़ता। उसका हृदय रात-दिन तीव्र वेदना करता रहता है और उसकी आँखों से उसके घर का वातावरण पागलपन रहता है। उसे बार-बार भ्रम होता है कि इस घर में आग लगने वाली है। उसका और उसके पति का झगड़ा छोटी-छोटी बात पर हो जाता था।

मैं उन्माद हूँ एक तरह का पागलपन!

छिनाल का प्रवेश

मैं छिनाल हूँ जैसे मेरे कई पर्यायवाची शब्द हैं। मैं सभी किसी औरत के लिए तब सुशोभित होती हूँ जब वह अपने पति के होते हुए दूसरे से प्यार करे।

प्यार !

श्री गालिब के शब्दों में यह वह आग है कि जो न लगाये न लगे और न बुझाये न बुझे। यह आग तेज लहरों की तरह इसकी रग-रग में दौड़ने लगी है। इसके वश में होने के बाद प्रेमी और प्रेमिका बुलबुली बन जाते हैं। निडर, निर्भीक बन जाते हैं स्वतन्त्र हो जाते हैं। शायद आप जानते होंगे पंजाब की सोनी नदी पार करके जाती थी और राजस्थान की कमला आधी रात को 'राजू' का द्वार खटखटाती थी और यह किशोरी।

"यह दवा लो।" एक नीली आँखों वाले युवक पड़ोसी ने बड़ी विनम्रता से किशोरी के हाथ में शीशी दे दी।

"कुछ फल भी लाने हैं।

"दोपहर को ला दूँगा।" युवक चला गया।

किशोरी का पति कुछ अधिक बीमार है। वरना कन्हैया पास वाले मोहल्ले में पान की दुकान करता है बीड़ी बेचता है। कन्हैया रंग है पर मानों जैसे सृष्टि का सारा प्यार धूप व सामोद होकर उसकी आँखों में सो गया है। बूढ़े को कन्हैया जरा भी पसन्द नहीं है पर वह अभी विवश है। दवा और पथ्य नहीं आये तो वह मर सकता है और उसकी बूढ़ी तमन्नाएँ मृत्यु का बड़ा भय खाती हैं। वह मरना नहीं चाहता। उसकी सिसकती हुई साँस हर घड़ी जीने की कामना और प्रभु से चिरायु की प्रार्थना करता है।

दोपहर हो गयी।

कन्हैया फल लेकर आ गया। उसने फल देने के लिए हाथ बढ़ाया। दोनों के हाथ छू गये। रोमांच हो गया—किशोरी के सारे बदन में।

उसने भरपूर दृष्टि से कन्हैया की ओर देखा। नजरें टकरायीं।

"माफ करना।

"क्यों?

"आपके हाथ को मेरे हाथ ने छू लिया न?"

"कोई बात नहीं।"

बूढ़ा भीतर से बड़बड़ा उठा। उसका बड़बड़ाना कम और खाँसी तेज थी। उसने क्या कहा वे दोनों नहीं सुन सके। कन्हैया ने भयभीत स्वर में कहा, "वे नाराज हो रहे हैं। शायद उन्हें मेरा यहाँ आना अच्छा नहीं लगता है।

"न लगता है तो न लगे, मुझे अच्छा लगता है। आप शाम को जरूर आना। मैं आपको खीर बनाकर खिलाऊँगी। आज मेरे विवाह की सातवीं वर्षगाँठ है।"

"जरूर आऊँगा।

मैं उसमें प्रवेश कर गयी। बूढ़ा भीतर से चीखा, "किससे इश्क लड़ा रही है छिनाल?"

मैं हँस पड़ी।

किशोरी कन्हैया को विदा करके भीतर गयी। जोर से पाँव पटक कर कहा, "क्यों शोर मचा रखा है। मेरा जी तो चूहे की तरह कुतर कुतर कर खा गये। क्या अब इस उम्र को भी लजाओगे।

"अब की बार मुझे अच्छा होने दे। उस कन्हैया के बच्चे को जिन्दा चबा जाऊँगा।"

किशोरी ने घृणा से बूढ़े को देखा और वह बाहर चली गयी।

विद्रोह

मैं विद्रोह हूँ। जब शोषण अपनी चरमसीमा पर पहुँच जाता है तब मेरा आविर्भाव होता है।

किशोरी में मेरा आविर्भाव हो गया। वह अब चुपचाप अपने प्रेमी कन्हैया को अपने घर बुलाती है और वह रात के सूने पहरों में उसके

भावुकतापूर्ण बातें करती है। उसका पति उसे डाँटता है, पीटने की धमकी देता है, पड़ोसी लोगों को उकसाता है पर वह किसी की परवाह नहीं करती। उसने साफ़-साफ़ कह दिया, "आपका कहना ठीक है कि आप भूखे दो सूखी रोटियाँ खा लिया कर। आपको मेरी कोई चोरी नहीं करने से पाप पता न लगे, जो किस का ठाट बना देंगे।"

बूढ़ा उसकी बात को नहीं सुनता है। वह दोहराता रहता है। किशोरी तब बाहर कहती है, "मैं कन्हैया को नहीं छोड़ सकती। वह मेरा सम्पूर्ण जीवन है। और आप भी इतना समझ लीजिए कि पानी सिर तक न आने पाये। यदि आ गया तो मैं यहाँ से सदा के लिए चली जाऊँगी।"

"चली जायेगी? मैं तेरा गला दबाकर ख़तम नहीं कर दूँगा।"

वह स्थिर स्वर में जवाब देती है, "आप में इतनी ताक़त या आती तो मुझे यह सब क्यों करना पड़ता। क्यों मैं आपसे समझौता करती आती हूँ। अब नहीं सहा जाता। यदि ऐसा ही जीवन है तो ऐसे जीवन को तुरन्त छोड़ देना चाहिए। लेकिन मुझे आपके बुढ़ापे पर तरस आता है। मैं आपसे प्रार्थना करती हूँ कि आप मुझे सुख से जीने दीजिए और अपने को भी। कम-से-कम मैं आपकी सेवा तो करती हूँ।"

"सेवा नहीं करेगी तो जायेगी कहाँ? सत्तर कलदार दिए हैं।"

"मुझे नहीं, मेरे बाप को।"

इसी तरह चर्चा-चर्ची।

एक रात

"तू उस लड़के को छोड़ेगी या नहीं।"

"नहीं।"

"अच्छी तरह सोच लिया।"

"सोच लिया।" किशोरी के स्वर में दृढ़ता।

"मैं तेरी जान ले लूँगा।"

"ले लीजिए मगर इतना कम हो तो ?" उसने लापरवाही से कहा और अपने काम में लग गयी ।

बूढ़ा ठीक हो गया । सचमुच एक दिन उसने किशोरी के सिर पर लकड़ी का प्रहार कर दिया ।

मैंने किशोरी की हृदय के समस्त शक्तियों को ललकारा । उसने मुझे उठा लिया । आँखों से आँसू भरकर वह दबे स्वर में बोली "तुमने मुझे पीटा मेरी सेवाओं का यह बदला दिया । अब कल मैं तुम्हें छोड़कर उसके साथ चली जाऊँगी तुम्हें जो करना है सो कर लो ।"

छुरी ने साथ न दिया

मैं छुरी हूँ । दोपहर की धूप में मेरी लपलपाती जीभ बहुत ही भयानक लगती है । मैं बूढ़े के हाथ में हूँ और बूढ़ा अपने कंपित हाथों से किसी का खून करने के लिए उतावला हो रहा है ।

किशोरी घर से गायब है । कन्हैया भी नहीं है । एकाएक एक आदमी यह खबर लाकर बूढ़े को देता है कि किशोरी और कन्हैया बाजार से जा रहे हैं । बूढ़ा वहाँ से तूफान की गति से भागता है । उसके सिर पर खून सवार है । उसके हाथ में मैं लपी हूँ । लोग विमूढ़ से भागते हुए बूढ़े को देख रहे हैं । वह बड़बड़ा रहा है । "मैं दिलास की जान ले लूँगा मैंने समझकर लिए हैं मैं नहीं ।"

वह उन दोनों के पास गया । किशोरी कन्हैया से लिपट गयी । बूढ़े ने मुझे संभाला । मैंने अपनी आँखें बन्द कर लीं । उस मासूम पर चलने की मेरी इच्छा नहीं हुई ।

बूढ़े ने घृणा से होंठ काटते हुए कहा "मैं तेरा खून पी जाऊँगा रंडी ।"

अचानक किशोरी संभली । उसने बूढ़े को चेतावनी दी "होश की बात करो ।"

पर उसने प्रहार किया । किशोरी ने गुस्से में एक धक्का दिया । बूढ़ा तुरन्त मुड़ गया । मैं उसके पेट में इस तरह घुस गयी जिस तरह

समझ या नारी हूँ"। उसने उन्हें हाथ जोड़े। दीप जलाया। प्रार्थना के स्वर में बोली "हे प्रभु मेरे लाल की नौकरी जल्दी लगा देना। मैं तीन माह तक तेरा व्रत रखूँगी।" वह भावाभिभूत हो गयी। उसके हाथ कांपने लगे। आँखें नम हो गयीं। वह पुनः पूर्ववत् चबूतरे पर आकर खड़ी हो गयी ... बेटे की प्रतीक्षा में।

आखिर वह आया दयाल। आकर बिछी हुई खाट पर बैठ गयी। तभी उसे लल्ला की आहट सुनायी पड़ी। वह मुस्करा उठी। उसके निराश चेहरे पर आशा की चमक आ उठी। होठों पर मुस्कान। उसने देखा उसका बालक का रूप है। उसका सारा चेहरा पसीने की बूँदों से सिंचित सा हुआ है। कपड़े धूलों से तर हो गये हैं। चेहरा गर्मी से लाल और आँखें धसी-धसी-सी हैं।

माँ को देखते ही दिल में नयी स्फूर्ति आ गयी। वह चलकर आया और माँ का चरण-स्पर्श करते बोला "माँ-माँ मेरी नौकरी लग गई है।"

"लग गयी।" माँ चौंक-सी पड़ी और उसने अपने बेटे को आलिंगन में भर लिया। वह विचलित स्वर में बोली "आज मेरा मनोरथ और जीवन दोनों सफल हो गये। बेटे! मैंने इस दिन के लिए मनौतियाँ मानी थी। रात में जगी और साग पर जगी। क्या-क्या कष्ट नहीं उठाये? पर आज सब ठीक हो गया। सब दुख मिट गया। अब तो मैं तेरा ब्याह रचाऊँगी। एक गोरी-गोरी बहू लाऊँगी। दो रिश्ते आये भी हैं।

"अब देखो ब्याह-ब्याह-ब्याह! अरी माँ बहू तो बाद में ले आना पहले पेट-पूजा तो करा दे।"

"तू हाथ-मुँह धो मैं अभी खाना परोसती हूँ।

किशन खाना खाने लगा। दूसरा कौर लेने के साथ ही उसने कहा "माँ वाह रे तेरा सपना। भूख तो बड़ी लगी थी पर सुख से ऐसा कभी नहीं हुआ।"

"क्यों?"

"इसलिए कि तू एक-एक पैसा बड़ी मेहनत-मजदूरी से कमाती है। माँ आज तेरे सब दुःख दूर हो गये। आज से मैं तुझे कुछ भी करने नहीं दूँगा। पर ....।" वह कहता-कहता चुप हो गया।

"पर क्या? तू चुप क्यों हो गया?"

"पर माँ मेरी नौकरी यहाँ नहीं लगी है। हमें बीकानेर से जयपुर चलना पड़ेगा।"

"जयपुर! नहीं बेटा, नहीं। हम इस शहर को छोड़कर कहीं नहीं जायेंगे। यह अपना शहर है। यहाँ हमारे दुःख-दर्द को लोग अपनों की तरह बाँट लेते हैं। वहाँ पराये लोग होंगे। पराये हमारी पीर को नहीं जान पायेंगे। सब दुबारा बसाना पड़ेगा।"

"जब नौकरी करनी है तब यह सब करना ही पड़ेगा।"

रूपली एकदम उदास हो गयी। वह इस शहर को कैसे छोड़ सकती है? इस शहर से उसका आत्मिक बन्धन है। अटूट मोह है। नहीं-नहीं वह इस शहर को नहीं छोड़ सकती। वह किसन को समझाती हुई बोली "हम इस शहर को नहीं छोड़ सकते बेटे! इस शहर के बच्चे और सब लोगों ने तेरी माँ को तब आश्रय दिया था जब तेरी माँ एकदम असहाय थी। उसका कोई नहीं था। कम-से-कम मैं तो इस शहर को नहीं छोड़ सकती।"

"खैर, अभी इस बात को छोड़।" उसने बन्द कर दिया। कपड़े से हाथ पोंछता हुआ वह बोला "माँ धूप के कारण मेरे सिर में दर्द होने लगा है इसलिए मैं सोता हूँ।"

देखते-देखते किसन खर्राटे भरने लगा। लेकिन रूपली को एक भी झपकी नहीं आयी। इस शहर को छोड़ने की चिन्ता उसे हजारों बिच्छुओं के दंशन की पीड़ा देने लगी।

तभी रूपली को गली में फिर कदमों की आहट सुनाई पड़ी।

आहट के साथ आती थी ठक-ठक।

"कौन आया होगा इस धूप में ।" उसने अपने आप से पूछा ।

बाहर और नजदीक आ गयी चाप में लाठी की भी टक-टक ।

वह उठी । बाहर और पास आ गयी । उसने बाहर झाँककर देखा ।

अप्रत्याशित कोई दीवार भड़भड़ाहट के साथ गिर पड़ी हो ऐसा आभास हुआ रूपसी के मन में । उसने एक बार उन दोनों आगन्तुकों को फिर से देखा और तमक करके उसने झटाक के साथ दरवाजा बन्द कर लिया । उसकी साँस तेज हो गयी और हृदय में तूफान-सा मच गया ।

बाहर से टूटी-फूटी आवाज आयी "किवाड़ खोलो बहू किवाड़ खोलो ।"

रूपसी को महसूस हुआ कि उसका खून बहुत तेज चलने लगा है । यदि वह कुछ देर और खड़ी रही तो गिर पड़ेगी । बेचैन हो जायेगी ।

खट्-खट्-खट् छड़ी की आवाज ।

रूपसी मन्द वेग-सी भीतर चली गयी । बाहर वह इस तरह बैठी मानो वह कोई चोर हो और उसे पकड़ने के लिए पुलिस आ गयी हो । क्षण भर का सन्नाटा बहुत दुःसह हो गया और इस बीच रूपसी ने यही सोचा "ये दोनों यहाँ कैसे पहुँच गये ?"

"बहू दरवाजा खोलो ।" पहले वाली आवाज और वही छड़ी की खट्-खट् । खट्-खट् बढ़ती गयी । गहरी नींद में मस्त किशन अचकचा कर उठा । वह पसीने से भीग गया था । उसकी आँखें लाल थीं और बाल अस्त-व्यस्त । वह लपककर दरवाजा खोलने लगा । तभी रूपसी भागती हुई आयी "दरवाजा मत खोलो दरवाजा मत खोलो ।" और उसने किशन के "[illegible]" खोलते हुए हाथों पर अपने हाथ रख दिये । वह बहुत घबराई हुई थी और एक अजीब भय उसके चेहरे पर, उसकी फैलती आँखों में छा गया था ।

"क्यों" — किशन ने विस्मय से पूछा ।

"बस तुम फाटक मत खोलो ।"

"लेकिन क्यों" उसने नाराजी के साथ अपने शब्दों पर जोर दिया ।

रश्मी निरुत्तर हो गई। कुछ नहीं बोली वह। जड़ हो गयी।

"बोलती क्यों नहीं। मैं क्यों नहीं दरवाजा खोलूँ? क्या तूने कोई चोरी की या किसी का गला काटा है?"

रश्मी यंत्रवत वहाँ से हट गयी। किशन ने किवाड़ खोल दिये। दो अपरिचित व्यक्ति खड़े थे। एक लाठी के सहारे खड़ा बूढ़ा और दूसरा प्रौढ़ जिसके सारे बाल सन की तरह सफेद थे। उसकी गहरी झुर्रियाँ जो अभी बहुत ही गहरी हो गयी थी। वह बूढ़ा उस समय ही बोला "बेटा क्या हम भीतर आ सकते हैं? बाहर बड़ी धूप है। उफ। आकाश आग बरसा रहा है।"

"आइए।" वह दरवाजे से हटा गया। उसने लपक कर दो कुर्सियाँ अलग अलग बिछायीं। उन्हें बैठने का अनुरोध किया। कपड़े से घिसाई की हुई चमकदार वो कुर्सियाँ थी जो तार की बनी हुई थी। वे दोनों मुस्काने लगे।

"यह मकान किसका है?" बूढ़े ने बड़े मंथर स्वर में पूछा। उसकी बूढ़ी अनुभवी आँखें किशन पर जमी हुई थीं।

किशन ने तुरन्त सोचा कि हो न हो ये दोनों कोई लड़की वाले हैं। ऐसे लड़की वाले जिनकी लड़की माँ को शायद पसंद नहीं है वर्ना ऐसे प्रश्न वे लोग नहीं पूछते।

उसने सहज भाव ही कहा "सेठ रामस्वरूप जी का।"

बूढ़ा फिर धीरे खाँसने लगा। प्रौढ़ व्यक्ति बिल्कुल खामोश था। जैसे पत्थर की प्रतिमा। कभी कभी वह अँखियों से उसे देख लेता था। उसके देखने की भंगिमा से स्पष्ट जान पड़ रहा था कि हो न हो यह लड़की का बाप है और यह बूढ़ा शायद उसका दादा। पर माँ इन दोनों को देखकर इतना घबरा क्यों गयी थी? उसने इन अतिथियों का द्वार बंद करके अपमान क्यों किया? प्रश्न पर प्रश्न उसके मस्तिष्क में उठते गये। कुछ क्षण विचारों की उलझन में गुजर गये।

"पानी पिलाओगे?" बूढ़े ने फिर मौन भंग किया।

"अन्दर आकर।" संकोच से धीमी आँख करके किशन लोटे से पानी भरने लगा। दो गिलास पानी पीने के बाद बूढ़ा बहुत आश्वस्त दिखाई पड़ा। बोला "तेरी माँ कहाँ है ?"

"भीतर।"

"उसे बाहर बुला दो तो।"

किशन माँ के पास गया। वापस आ कर बोला "माँ आपसे कोई बात करना नहीं चाहती। वह कहती है कि आप लोग मुझ पर दया करके यहाँ से चले जायें। पुराने वाले रिश्तों को भूल जाइए। अब बूढ़ा सभी का नाम ले चुका था।

बूढ़ा एकदम हाथ हिलाकर बोला "बहू ने अभी कुछ भी खत्म नहीं हुआ। कुछ भी नहीं टूटा। सब टूट सकते हैं पर खून का रिश्ता नहीं टूट सकता। यह सदा बरकरार रहता है। थोड़ी दूर थोड़ी रहता है।"

माँ स्वयं उनके पास आ गयी। किशन उसे देखकर सोचता रह गया। इस बार वह बहुत उदासीन लग रही थी। बोली "किशन इन्हें कह दे कि हमारा यहाँ से कोई रिश्ता नहीं है।"

"बहू!" बूढ़ा तड़प सा गया।

अब भारी शाम सर्द हवाकर पूरे घर बिल्कुल सामने थी। बूढ़ा उसे देखकर गिड़गिड़ा उठा "ऐसा न कहो बहू। क्या तू हमें माफ नहीं कर सकती। हमसे बड़ी भूल हो गयी थी।"

"भूल! भूल नहीं आपकी इच्छा थी। लोभ था। आप चाहते थे कि इस बहू को छोड़कर हम एक और बहू ले आयेंगे और उसकी बार तय की हुई दहेज की सारी रकम पहले ले लेंगे। और आपका यह भाग सा सीधा सादा बेटा जो आज एक मामूली इन्सान सा लगता है उस दिन कितना स्वार्थी और नीच बन गया था जिस दिन उसने आपके सामने मुझ पर यह आरोप लगाया था कि वह निःसंतान है। वह चरित्रहीन है।"

किशन सारी स्थिति तुरन्त समझ गया। ये दोनों आगन्तुक कौन

बार इस तरह घूर कर देखा मानों वे दोनों बेटे-बहू बदल गए हों।

बूढ़े ने किशन को सम्बोधित करके कहा "मैं तेरा दादा हूँ बेटा और यह तेरा बाप है ? क्या एक गलती को भी सुधारा न जाय ?

किशन विमूढ़ हो गया। उसे लगा कि उसके अन्तस की उमड़ती हुई भावनाओं ने उसका गला पकड़ लिया है। वह कुछ कहना चाहता है पर कह नहीं सकता। क्या सचमुच यह उसका दादा और यह उसका बाप है ? प्रश्न पर प्रश्न उसके मन को झकझोरने लगे।

रूपली बीच में ही बोल पड़ी "यह भावुकता आपकी इतनी भारी बात का उत्तर नहीं दे सकता। मैं उत्तर देती हूँ कि कुछ भूलें ऐसी होती हैं। जो पक्षम होती हैं। आपकी इस पक्षम भूल का कोई प्रायश्चित नहीं। यह भूल जिसने मेरे पिछले बीस बरसों को बेदर्दी से निगला है। जिसने मेरे सोने के तन और उमंगों भरे मन को दीमक की तरह खाकर मोम की तरह गलाया है उस भूल को मैं किस आधार पर माफ कर सकती हूँ। अब मैं भूल को एक ही शर्त पर सुधार सकती हूँ अगर आप मेरे पिछले बीस बरस मुझे वापस लौटा दें। क्या लौटा सकते हैं आप ?

रूपली की आँखें छलछला कर भर आयीं।

बूढ़ा गूँगा हो गया। प्रौढ़ व्यक्ति अपराधी की तरह सिर झुकाए निरुत्तर बैठा रहा। किशन के मन में केवल प्रश्न घुमड़ रहे थे।

रूपली ने अपना मुँह आँचल के पल्ले में छुपा लिया। असीम कठोर वेदना से उसकी छाती फट गयी। वह रोती रही। सिसकती रही।

रुकी हुई मौन हवा अब रूपली की सिसकियों पर तैरने लगी थी।

गूँगे पर ऐसा हुआ घमण्ड और पाप हिला।

बूढ़े ने विनीत किन्तु दृढ़ स्वर में कहा "तुम बड़ा पाया है। पर जो सभी को निराश कर हमने कभी भी अच्छा गुण नहीं पाया। ऐसा कोई न कोई विपत्ति हम पर मंडराती रही। और आज हमारे पास क्या नहीं है ? सभी कुछ है। पर इस हरे भरे घर में एक पुत्र नहीं है। पुत्र बिना घर सब निष्फल होता है। उसके बिना आदमी का लोक-परलोक दोनों बिगड़

जाते हैं। किसन की माँ! साधू का दूसरी बहू लम्बी बीमारी के बाद एक बरस पहले चल बसी है। यह घर अब हम तेरे पाँव पड़ते हैं। तू जो हमें दण्ड देगी हम उसे भोगेंगे।"

मैं आपके साथ नहीं चलूँगी। मेरा और आपका सम्बन्ध उसी दिन खत्म हो गया जब आप एक हजार रुपयों के लोभ मेरे गुलाब से गाल सजाकर चले आये थे और बाद में आपने [illegible] से मेरी कोख को कलंकित बता कर तीन सम्बन्धों को भी खत्म कर दिया था।"

"जो हो गया उसके लिए तू हमें जो चाहे दण्ड दे ले पर अब तुझे घर चलना ही पड़ेगा।" और बूढ़ा पश्चाताप से गर्दन हिलाकर बोला "होनहार सबसे बड़ी होती है। होनी के आगे किसी की नहीं चलती। मनुष्य उसके सामने निर्बल-निरुपाय है। वह कुछ नहीं कर सकता। होनी राजा राम को वनवासी और सत्यवादी हरिश्चन्द्र को चाण्डाल बनाया

थोड़ी देर कोई नहीं बोला।

एक असहज मौन छाया रहा।

रूपली अपने आपको पूर्ण स्वस्थ करने की चेष्टा कर रही थी। किसन भी कुछ कहने के लिए अपने आपको प्रस्तुत कर रहा था लेकिन वह कुछ कह नहीं पाया। वह सोच रहा था कि माँ ने उन बातों को यह सब नहीं बताया। वह सदा यह बताती आयी है कि उसका पति कहीं परदेस चला गया था और वहाँ से वह आज तक कभी नहीं लौटा। उसने यह भी बतलाया था कि उसका ससुराल में कोई भी नहीं है। यह सब माँ ने क्यों छुपाया? आज उसके सामने वो एक भूत बनकर खड़ी है। उसने माँ की ओर देखा। माँ का मुख दुख की कल्पनाओं से घिरा था। ऐसी बदनसीब माँ को वह कुछ भी नहीं कह पायेगा।

पहली बार रूपली के पति साधू ने अपना मौन भंग किया। उसने कनखी से एक बार रूपली को देखा और बाद में वह नजर घुमाए [illegible] [illegible] बोला "मैं भी तुमसे क्षमा माँगता हूँ। [illegible] [illegible] [illegible]

करो। धर्म धुध पर चलो। मेरे बाल के बुढ़ापे पर दया करो। यह तुम्हारे द्वारे आया है।

कपली के मानस-पटल पर अतीत तैर गया।

उसे याद आया—

लगभग बीस बरस पहले।

वह दुल्हिन बनी है। उसके हाथ सुहाग की मेंहदी से रचे हैं। वह अपने दूल्हे को जिज्ञासा भरी नजर से झुक-झुक कर देख रही है। वह सोचती है—'मेरा दूल्हा साक्षात 'ईसर' है। गवर (गणगौर) माँ के भरतार (पति) ईसर जैसा।' वह बहुत प्रसन्न है। उसके पाँव खुशी के मारे जमीन पर नहीं पड़ रहे हैं। उसे बार-बार महसूस होता है जैसे उसके पंख लग गये हैं और वह नीले-नीले आकाश में सोन-चिरैया की तरह फुदक-फुदक कर उड़ रही है। रात में भाँवरे पड़ते हैं। इकसेले का लाल सुरख निशान दुल्हन के मन को मोहने लगता है। दुल्हन जवान है अतः मुकलावा (गौना) भी साथ होने का निश्चय हो गया है। टीके की रात—शुभ बरात। पूरा चाँद आकाश के बीचों-बीच अपनी सम्पूर्ण आभा में चमक रहा था। वह लहंगे ओढ़ने और काँचली में गठरी बनी बैठी है। उसका सगीना पिया जानू आता है। जितनी चाव उस दिन उसके दिल में एक आग जागती है और जब जानू इधर उधर की बातों के बाद उसे छूता है वह पत्थर की बन जाती है।

सुबह ही रंग बदरंग हो जाता है।

उसके ससुर और बाप में 'टीके' के दायजे (दहेज) की रकम को लेकर झगड़ा हो जाता है।

ससुर गणेशाराम कहता है "कपली की आपको एक हजार रुपये देने ही पड़ेंगे। अब आप अपने वायदे से मुकर रहे हैं।"

"मैंने आपसे कोई वायदा नहीं किया।" उसका बाप जितना मुकर जाता है।

"इतना सफेद झूठ?"

जाते हैं। शिवम की माँ ! साधु की दूसरी बहू जाकी बीमारी से चार एक बरस पहले चल बसी है। वह ... पर अब हम तेरे पाँव पड़ते हैं। तू जो हमें दण्ड देगी हम उसे भोगेंगे।"

मैं आपके साथ नहीं चलूँगी। मेरा और आपका सम्बन्ध उसी दिन खत्म हो गया जब आप एक हजार रुपयों के पीछे मेरे गुनाह में साथ लगाकर चले आये थे और बाद में आपके बेटे ने मेरी कोख को कलंकित बता कर रहे सम्बन्धों को भी खत्म कर दिया था।"

"जो हो गया उसके लिए मैं तुम को चाहे दंड दे दे पर अब मुझे घर चलना ही पड़ेगा। और बूढ़ा पश्चात्ताप से दयनीय दिखाकर बोला "होनहार सबसे बड़ी होती है। होनी के सामने बन्दे की नहीं चलती। बन्दा उसके सामने निर्बल-निस्सहाय है। वह कुछ नहीं कर सकता। होनी राजा राम को बनवास और सत्यवादी हरिश्चन्द्र को चाण्डाल बनाया

थोड़ी देर कोई नहीं बोला।

एक मर्मान्तक मौन छाया रहा।

रूपली अपने आपको पूर्ण स्वस्थ करने की चेष्टा कर रही थी। शिवम भी कुछ कहने के लिए अपने आपको प्रेरित कर रहा था लेकिन वह कुछ कह नहीं पाया। वह सोच रहा था कि माँ ने उसे कभी भी यह सब नहीं बताया। वह सदा यह बताती आयी है कि उसका पति कहीं परदेस चला गया था और वहाँ से वह वापस कभी नहीं लौटा। उसने यह भी बतलाया था कि उसका ससुराल में कोई भी नहीं है। यह सब माँ ने क्यों छुपाया ? आज उसके सामने भी एक झूठ बनकर खड़ी है। उसने माँ की ओर देखा। माँ का मुख दुख की घटनाओं से घिरा था। ऐसी दयनीय माँ को वह कुछ भी नहीं कह पायेगा।

पहली बार रूपली के पति साधु ने अपना मौन भंग किया। उसने रूपली को एक बार बापू को देखा और बाद में वह नजर झुकाए हुए संयत बोला मैं भी तुमसे क्षमा माँगता हूँ। कलंक मैंने तुम पर लगाया था इसलिए तुम दण्ड भी मुझे दो। पर मेरे बाप को निराश मत

करो। पर्व तुम पर चलो। मेरे बाप के बुढ़ापे पर दया करो। यह तुम्हारे द्वारे आया है।

रूपसी के मानस-पटल पर अतीत तैर गया।

उसे याद आया—

लगभग बीस बरस पहले।

वह दुल्हिन बनी है। उसके हाथ सुहाग की मेंहदी से रचे हैं। वह अपने दूल्हे को जिज्ञासा भरी नजर से चुप-चुप कर देख रही है। वह सोचती है—मेरा दूल्हा साक्षात ईश्वर है। गवर (गणगौर) सा है भरतार (पति) ईसर जैसा। वह बहुत प्रसन्न है। उसके पाँव खुशी के मारे जमीन पर नहीं पड़ रहे हैं। उसे बार-बार महसूस होता है कि उसके पंख लग गये हैं और वह नीले-नीले आकाश में राजहंसिनी की तरह फुदक-फुदक कर उड़ रही है। रात में भाँवरें पड़ते हैं। [illegible] लाल सुरंग निशान दुल्हन के मन को मोहन लगता है। [illegible] है अतः मुकलावा (गौना) भी साथ होने का निश्चय हो गया है। [illegible] की रात—शुभ नरात। पूरा चाँद आकाश के बीचोंबीच [illegible] आभा में चमक रहा था। वह लहँगे ओढ़ने और चोवनी [illegible] बैठी है। उसका [illegible] पिया [illegible] आता है। [illegible] उसके दिल में एक गाँठ पड़ती है और [illegible] बातों के बाद उसे पता है वह पत्थर की बन जाती है।

सुबह ही रंग बदरंग हो जाता है।

उसके ससुर और बाप में "टीके" के रुपए [illegible] लेकर झगड़ा हो जाता है।

ससुर मनीराम कहता है "[illegible] देने ही पड़ेंगे। अब बार अपने वायदे से मुकर [illegible]

"मैंने आपसे कोई वायदा नहीं किया?" [illegible] जाता है।

"इतना कठोर क्रूर ?

“उस पार खोजती है।”

वातावरण बेचैन सा उद्वेलित हो जाता है। शान्ति निकल जाती है—रोना भोर में। भयभीत हिरनी की तरह हो जाती है रूपसी। ईश्वर से प्रार्थना करती है। प्रकाश खोजती है मदन गुप्त से मिल।

उसका ससुर नागी जमीन पर जोर से ठोक कर कहता है “बारात बिना गाजे-बाजे ही लौट जायेगी।”

“वह इस तरह नहीं जा सकती।”

वह चक्कर-खाकर गिर पड़ती है। वह बहुत निराश्रयी है। सब कुछ खो गया। हृदय बड़ी जोर से धड़क रहा है। बारात बाजा बिना मुसकाया लिये लौट जाती है। हजार सपने मन में बसाए हुए रूपसी पागल चोरनी की तरह भागी हुई बारात की धूल को देखने लगती है। थोड़ी देर में वहाँ सौदामिनी छा जाती है। लाल लिपे रूढ़ियों के रूप जहाँ-तहाँ पड़े रहते हैं।

रूपसी भीतर के कमरे में जाकर रोती है। माँ उसे डाँटती है “निगोड़ी रोती है पूरी कामिन। जैसे तूने आग लेकर मेरे पेट में लगा दी है। तेरे कारण उनकी मूँछ का पानी चला गया। इज्जत धूल में मिल गयी।”

कुछ दिन बीत जाते हैं।

अचानक रूपसी चक्कर खाकर गिर जाती है। उसे प्रेम की आग खाने लगती है। एक नया आगन्तुक उसके गर्भ में आया जाता है।

घर में एक नयी हलचल उत्पन्न हो जाती है।

बाप मजबूर हो जाता है। उसकी ससुराल समाचार भेजता है। अपने समधी को जीवित करने की मनसा रखनेवाला उसका ससुर साफ इन्कार कर जाता है। बाप अपनी दुलारी बेटी को पीटता है। बेचारी बाप रूपसी कसाइयों के हाथों पड़ जाती है। गाँव उसकी हँसी उड़ाता है। ताने देता है। छिये छिये करता है। आखिर रूपसी तंग आ

पाती है। क्या करे? गाँव में न डाक घर और न वह पढ़ी लिखी। पति से मिलन का कोई साधन नहीं। तंग आ जाती है जिन्दगी से। मरने चल पड़ती है।

कुआँ! नीरव और शांत। एक नहीं बस दिनभर की कठोर मेहनत के बाद सोये पड़े हैं। वह उन्हें देखती है। इच्छा होती है—मर जाऊँ। मर जाऊँ? लेकिन सहसा वह मरने का विचार छोड़ देती है। वह नहीं मरेगी। वह पागल नहीं फिर वह क्यों डरे मरे? और वह निरुद्देश्य यात्री की तरह चल पड़ती है—अनजान रास्ते के अपरिचित सफर पर।

शहर आ जाती है। अपने नारीत्व-सतीत्व की रक्षा करती हुई वह उसी की जाति की एक बुढ़िया 'अम्मा' के पास परवरिश पाती है। उसे भी वह सही बात नहीं बताती है। केवल पिता की मौत बताती है। आज पता इस संसार में नहीं है पर अपनी उसकी बड़ी कसम है। उसे देवी की तरह मानती और पूजती है। शहर में वह आटा पीसती है। मिर्च-मसाला पीसती है। जूठे बर्तन मलती है। हवेलियों में झाड़-बुहारी करती है और इन सबके बावजूद वह सदा अपने प्रीतम के लिए रोती है। और एक दिन वह यह मनहूस खबर पाती है कि उसके प्राण-प्यारे ने दूसरा ब्याह कर लिया है।

मानो पंखहीन प्राण की तरह हो जाती है।

समय सूखे पत्तों की तरह उड़ता रहता है।

वह मिलन की कसम देती है। पालती-पोसती है। पढ़ाती है और आज वह सरकारी नौकरी में भी लग गया है।

इन बरसों में उसने न अपना पहना है और न अच्छा खाया है। परदेसी पिया की सोरठी (पत्नी) की तरह वह घुर घुर निढाल हो गई है। उसका मन विरह की आग से जल गया है।

और आज उसका ससुर और पति उसे लेने आये हैं।

ससुर ने क्षमायाचना करनी को लिखोड़ा —मेरे पुतरे की न

लोभी बहू ! बत्तीस बीघा जमीन है । मकान है । और किशन बहुत अच्छा अच्छा रिश्ते आ रहे हैं । एक आदमी बीस हजार रुपये देने तैयार है । बहू चलो अपने घर !" बूढ़े की आँखों में लोभ नाच र

"मैं नहीं चलूँगी ।"

इस बार बूढ़ा चुप गम्भीर ही रहा उसकी आँखें बुझती दि की तरह चमक उठीं । वह स्वर को नम्र करता हुआ बोला " जग हँसाई अच्छी नहीं होती । भूल का प्रायश्चित होता ही है ।" बूढ़ा बड़ी नाटकीयता से आँखों में आँसू लाकर बोला "बहू तेरे ता है । वह ही कुछ बोला था । यदि वह मुझे पहले ही बता देता आज इतनी समस्या ही खड़ी नहीं होती !"

रजनी अपने ससुर की चालबाजी समझ गई । अच्छी तरह मालूम था कि उसका ससुर यह सब नाटक खेल रहा अब जब उसने अपने बच्चे को रात-दिन मेहनत करके बड़ी मुसीबतें सहकर उसे बड़ा किया और पढ़ाया लिखाया तो यह अपना जताने लगा । कितना दुष्ट है । घृणा की लहरें उसके मस्तिष्क में वेग से छाने लगी और उसने स्पष्ट शब्दों में कहा मैंने कहा कि आपसे मेरा कोई रिश्ता नहीं है । आज बीस हजार रुपयों का आपको यहाँ तक खींच लाया है ।

"छि छि. रुपयों का लोभ ! बहू इतनी ओछी बात क्यों कर रही हो ?

"ओछी या अच्छी ? ससुरजी आपने सुना होगा कि किशन बड़ा हो गया है । बी० ए० पढ़ गया है । नौकरी भी अच्छी लगी है, कहते होंगे कि लड़का बड़ा होनहार, तभी आप यहाँ-वहाँ ऐसे नहीं हो सकता । मैं आपके साथ नहीं चलूँगी और न मेरा बेटा जायेगा ।"

बूढ़े ने बड़ी आशा से अपने पोते की ओर देखा । किशन से उस नजरें चार हुईं और उसने अपनी दृष्टि इस तरह झुका ली जिस प

उसकी समझ में कुछ भी न आ रहा हो। लेकिन उसे यह जरा भी अच्छा न लग रहा था कि ये लोग उसकी माँ पर दबाव दें। वह चुपचाप बैठा हुआ इन दोनों की बातचीत सुनता रहा। देखते देखते उसकी माँ मग्न हो गयी और उसका दादा भी धुंआ-धुंआ हो उठा। बात बहुत ही जहरीले वातावरण की सर्जना के साथ समाप्त हुई।

× × ×

शाम को ही रूपसी ने कहा" "किशन हम यह शहर छोड़ेंगे।"

'क्यों माँ ?"

"इसलिए कि तुम्हारा दादा बहुत लोभी है। दुष्ट भी है। दया का नाम भी नहीं है। हालांकि मुझे उसके बुढ़ापे पर रहम आता है लेकिन बेटा मैं सोचती हूँ कि इस पर दया करना प्रभु को नाराज करना है। आज चौधरी वंशीधर का मन उन्हें फिर हमारी ओर खींच लाया है। इससे पहले वे लोग तुम्हें एक कुलटा की औलाद कहते थे। ऐसे आदमी को अपने पापों का दण्ड मिलना ही चाहिए। माँ उत्साह से बोली "और हाँ अब वे यह भी इन्कार नहीं कर सकते कि तू उनका पोता नहीं है। और मैं तुम्हें एक ऐसे अच्छे और बड़े आदमी के रूप में देखना चाहती हूँ जो इन गिरे हुए लोगों के सामने एक आदर्श हो। इसलिए आओ हम यहाँ से चलें। अब हम यहाँ नहीं रहेंगे। वहाँ रोटी नयी अपना घर। हमारी हर चीज नई और अपनी होगी।"

किशन ने देखा" माँ का चेहरा एक पवित्र आलोक से दीप्त हो गया है उस आलोक में एक नारी का ओज और महत् दोनों हैं।

~ ॥ समाप्त ॥

रमोली बहू ! रमनीक बीमा अमीर है। बराब है। और किशन के बहुत अच्छे सम्बन्ध बन रहे हैं। एक आदमी बीस हजार रुपये देने को तैयार है। बहू चलो अपने घर !" बूढ़े की आँखों में लोभ नाच उठा।

"मैं नहीं चलूँगी।"

इस बार बूढ़ा पूरा कठोर हो गया उसकी आँखें कुम्भीपाक किस्सी की तरह चमक उठीं। वह स्वर को मधुर करता हुआ बोला, "बहू अब हँसाई अच्छी नहीं होती। भूल का प्रायश्चित होता ही है।" और बूढ़ा बड़ी आतुरता से आँखों में आँसू लाकर बोला "ससुर तेरे अनि का है। वह तो मुँह बोला था। यदि वह मुझे घर। ही बता देता तो आज इतनी समस्या ही खड़ी नहीं होती ?

रमोली मन सोची और बूढ़े ससुर की चालबाजी समझ गई। उसे अच्छी तरह मालूम था कि उसका ससुर यह सब नाटक खेल रहा है। अब जब उसके आन बच्चे को रात-दिन मेहनत करके अपनी कीमत, भूखी रहकर उसे बड़ा किया और पढ़ाया लिखाया तो यह अपनापन जताने लगा। कितना दुष्ट है। घृणा की लहरें उसके मस्तिष्क में तीव्र वेग से उठने लगी और उसने स्पष्ट शब्दों में कहा "मैंने कहा न कि आपसे मेरा कोई रिश्ता नहीं है। आज बीस हजार रुपयों का लोभ आपको यहाँ तक खींच लाया है।

"छि. छि. रुपयों का लोभ ! बहू इतनी ओछी बात क्यों करती हो ?"

"ओछी या सच्ची ? ससुरजी आपने सुना होगा कि किशन बड़ा हो गया है। बी० ए० पढ़ गया है। नौकरी भी लगने वाली है लोग कहते होंगे कि लड़का बड़ा होनहार तभी आप "नहीं-नहीं ऐसा नहीं हो सकता। मैं आपके साथ नहीं चलूँगी और न मेरा बेटा ही जायेगा।

बूढ़े ने बड़ी आशा से अपने पोते की ओर देखा। किशन से उसकी नजरें चार हुईं और उसने अपनी दृष्टि इस तरह झुकाली जिस तरह

उसकी समझ में कुछ भी न आ रहा हो। लेकिन उसे यह बात भी अच्छा न लग रहा था कि ये लोग उसकी माँ पर दबाव दें। वह चुपचाप बैठा हुआ इन दोनों की बातचीत सुनता रहा। देखते-देखते उसकी माँ गर्म हो गयी और उसका दादा भी गुस्सा-गुस्सा हो उठा। बात बहुत ही कटुता में वातावरण की सघनता के साथ समाप्त हुई।

× × ×

शाम को ही कमली ने कहा — "किशन हम यह शहर छोड़ेंगे।"

"क्यों माँ ?"

"इसलिए कि तुम्हारा दादा बहुत लोभी है। क्रूर भी है। दया का नाम भी नहीं है। हालांकि मुझे उसके बुढ़ापे पर रहम आता है लेकिन बेटा मैं सोचती हूँ कि इस पर दया करना प्रभु को नाराज करना है। आज चौधरी वंशीधर का धन उन्हें फिर हमारी ओर खींच लाया है। इससे पहले वे लोभी तुम्हें एक कुलटा की औलाद कहते थे। ऐसे आदमी को अपने पापों का दण्ड मिलना ही चाहिए। माँ उत्साह से बोली "और हाँ अब वे यह भी इन्कार नहीं कर सकते कि तू उनका पोता नहीं है। और मैं तुम्हें एक ऐसे अच्छे और बड़े आदमी के रूप में देखना चाहती हूँ जो इन गिरे हुए लोगों के सामने एक आदर्श हो। इसलिए आओ हम यहाँ से चलें। अब हम यहाँ नहीं रहेंगे। कहीं छोटा सा अपना घर। हमारी हर चीज नई और अपनी होगी।"

किशन ने देखा — "माँ का चेहरा एक पवित्र आलोक में दीप्त हो गया है उस आलोक में एक नारी का ओज और अहम् दोनों हैं।

— समाप्त —